भगवत स्वरूप चतुर्वेदी

राजकमल प्रकाशन

८, फ़ैज बाजार,
दिल्ली-६

साइंस कालेज के सामने
पटना-६
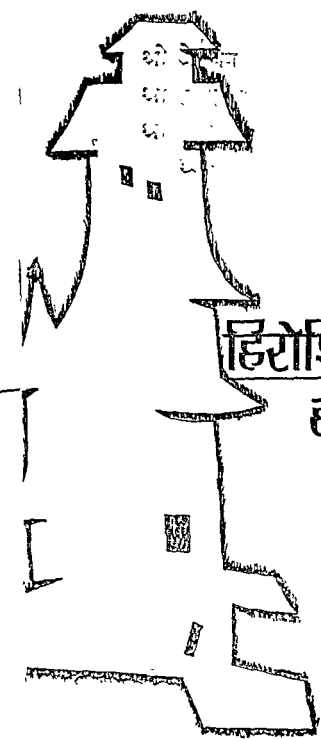
हिरोशिमा की
छाया में

विश्व-शान्ति के प्रतीक तथा युग-नायक
पं० जवाहरलाल नेहरू
के कर-कमलों में
सादर

परिचय

श्री भगवतस्वरूप चतुर्वेदी पुलिस-विभाग के जिम्मेदार अफसर हैं। उनको लिखने-पढने का शौक है। मैं इसके पहले भी उनकी एक कृति देख चुका हूँ। अपने अवकाश के समय में उन्होंने यह दूसरी कृति 'हिरोशिमा की छाया में' नामक, उपन्यास के रूप में प्रस्तुत की है। परमाणु-बम मनुष्य के लिए उस विजय का प्रतीक है जो उसे प्रकृति के छिपे हुए रहस्यों को हठात् जान लेने में प्राप्त हुई। ज्ञान शक्ति का दूसरा नाम है। प्रकृति के रहस्यों का ज्ञान उन रहस्यों से काम लेने की सामर्थ्य देता है। काम भला भी हो सकता है और बुरा भी; परन्तु मनुष्य का ध्यान प्रायः बुरे उपयोग की ओर ही पहले जाता है। परमाणु-शक्ति परमाणु-बम के रूप में नर-संहार का साधन बनी। द्वितीय महायुद्ध में जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरों पर पहली बार बम गिराया गया। इसके जो परिणाम हुए उनका वर्णन हम आज तक पढते आते हैं। इस उपन्यास में उनकी चर्चा है। युद्ध कई दृष्टियों से प्रशंसा की चीज़ समझी जाती है। धर्मग्रन्थों, कवियों और राजपुरुषों ने इसकी स्तुति के पुल बाँधे हैं। किसी-किसी स्थिति में सम्भवतः इस यशोगान की सराहना की भी जा सकती है, परन्तु आज की लड़ाइयाँ हमारे सामने ऐसे दृश्य उपस्थित करती हैं जिनके लिए किसी भी अवस्था में तारीफ के शब्द व्यवहार में नहीं लाए जा सकते। सिपाही के मन में भले ही बडी उदात्त भावनाएँ रहती हों, पर जब वह शतरंज के मुहरे की भाँति इधर-से-उधर फेंका जाता है, ऐसे लोगों का शिकार करता है जिनको वह देख भी नहीं पाता, जिन्होंने उसका कभी कुछ बिगाड़ा नहीं, बिगाड सकते भी नहीं, जब युद्ध समाप्त होने के पीछे या उसके पहले ही एक छोटी-सी पेन्शन देकर उसे पृथक् कर दिया जाता है और वह माँगे भीख भी नहीं

पाता, तब बहुधा उसके विचार बदल जाते हैं। उसके मन में यह भाव उठता है कि आखिर वह क्यों लड़ा। वह उस राजनीतिक यन्त्र का शत्रु बन जाता है जो उसको और उसके-जैसे लाखों दूसरे व्यक्तियों को इस प्रकार फसाकर उनसे काम लेने के बाद, दूध में गिरी हुई मक्खी की भाँति दूर फेंक देता है। ऐसी बातों की चर्चा पढ़ने से वर्तमान युग के युद्ध को भयानक तसवीर हमारी आँखों के सामने आती है। इस पुस्तक में इसकी भी झलक मिलेगी। श्री चतुर्वेदी जापान नहीं गए। वह युद्ध मे सम्मिलित भी नहीं हुए थे, परन्तु किताबों में पढ़ी सामग्री का यथोचित उपयोग करके अपनी कल्पना के द्वारा उन्होंने जो तसवीर खीची है वह लोगों के सामने रखने योग्य है। उसे अंकित करके उन्होंने उपयोगी काम किया है।

कैम्प : नई दिल्ली
मई १३, १९५९

—सम्पूर्णानन्द
मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश

प्राक्कथन

'हिरोशिमा की छाया में', शीर्षक इस लघु उपन्यास को हिन्दी-पाठकों के हाथों मे रखने में मुझे प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इस दिशा मे श्री चतुर्वेदीजी का यह पहला प्रयास है और हिन्दी में भी, संभवतः, यह अपने विषय का पहला ही उपन्यास है, जिसमें अणु-विस्फोट की निर्मम विभीषिका का दुर्दान्त रोमांचक चित्रण अत्यन्त मानवीय संवेदना तथा सहानुभूति के साथ उपस्थित किया गया है, जिससे मानव-सभ्यता तथा संस्कृति के संभावित भविष्य की विषण्ण छाया अपनी समग्र विध्वंसकारी भयंकरता मे मन की आंखों के सामने झूलने लगती है। युग की भयावह वास्तविकता से भरी ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना को अपनी कथा का विषय बनाकर तथा उसका कुशलतापूर्वक निर्वाह कर सकने के कारण श्री चतुर्वेदी जी, निःसन्देह, समस्त हिन्दी-जगत् की बधाई के पात्र हैं।

'देखन के छोटे लगें, घाव करें गम्भीर' वाले नाविक के तीर-जैसे इस छोटे-से उपन्यास की अनेक विशेषताएँ है। इसमें सशक्त, रंगीन, आधुनिक भाषा मे जापान के विभिन्न प्रदेशों के सजीव वर्णन तथा वहाँ के निवासियों के जीवन का घनिष्ठ परिचय और उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति का सुरुचिपूर्ण रोचक अंकन मिलता है। यत्र-तत्र वहाँ के फूलो की रंगपूर्ण द्वीपमालिका के अत्यन्त सुन्दर चित्रण, वहाँ के वन-पर्वतों, घाटियों, नदियों और समुद्री दृश्यों के वर्णन तथा वहाँ के घर, आँगन, उपवनों के मूर्तिमान रोचक विवरण आपकी आँखों के सामने जापान के प्राकृतिक सौन्दर्य-स्थलों तथा वहाँ के लोगों के रहन-सहन, स्वभाव और आदतों को बड़े सहज ढंग से उद्घाटित करते रहते हैं। लेखक सर्वत्र, सब परिस्थितियों मे, चिरपरिचित अंतरंग मित्र की तरह, जापान-निवासियो के बाहर-भीतर के जीवन में

प्राक्कथन

'हिरोशिमा की छाया में', शीर्षक इस लघु उपन्यास को हिन्दी-पाठकों के हाथों में रखने में मुझे प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इस दिशा में श्री चतुर्वेदीजी का यह पहला प्रयास है और हिन्दी में भी, संभवतः, यह अपने विषय का पहला ही उपन्यास है, जिसमें अणु-विस्फोट की निर्मम विभीषिका का दुर्दान्त रोमांचक चित्रण अत्यन्त मानवीय संवेदना तथा सहानुभूति के साथ उपस्थित किया गया है, जिससे मानव-सभ्यता तथा संस्कृति के संभावित भविष्य की विषण्ण छाया अपनी समग्र विध्वंसकारी भयंकरता में मन की आँखों के सामने झूलने लगती है। युग की भयावह वास्तविकता से भरी ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना को अपनी कथा का विषय बनाकर तथा उसका कुशलतापूर्वक निर्वाह कर सकने के कारण श्री चतुर्वेदी जी, निःसन्देह, समस्त हिन्दी-जगत् की बधाई के पात्र हैं।

'देखन के छोटे लगें, घाव करें गम्भीर' वाले नाविक के तीर-जैसे इस छोटे-से उपन्यास की अनेक विशेषताएँ है। इसमें सशक्त, रंगीन, आधुनिक भाषा मे जापान के विभिन्न प्रदेशो के सजीव वर्णन तथा वहाँ के निवासियों के जीवन का घनिष्ठ परिचय और उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति का सुरुचिपूर्ण रोचक अंकन मिलता है। यत्र-तत्र वहाँ के फूलों की रंगपूर्ण दीपमालिका के अत्यन्त सुन्दर चित्रण, वहाँ के वन-पर्वतों, घाटियों, नदियों और समुद्री दृश्यो के वर्णन तथा वहाँ के घर, आँगन, उपवनों के मूर्तिमान रोचक विवरण आपकी आँखों के सामने जापान के प्राकृतिक सौन्दर्य-स्थलों तथा वहाँ के लोगों के रहन-सहन, स्वभाव और आदतों को बड़े सहज ढंग से उद्घाटित करते रहते हैं। लेखक सर्वत्र, सब परिस्थितियों में, चिरपरिचित अंतरंग मित्र की तरह, जापान-निवासियों के बाहर-भीतर के जीवन में

पाठकों को अपने साथ प्रवेश कराने मे सफल होता है। जापानी भाषा के शब्दों के उपयुक्त प्रयोग घटनाओं को और भी स्वाभाविकता प्रदान करते हैं। जापानी पात्रों का चरित्र-चित्रण लेखक ने बडी सूक्ष्मता तथा योग्यता से किया है। क्या नर्स, क्या गीशा गर्ल, क्या डॉक्टर और क्या प्रोफेसर—सभी अपने देश पर आए हुए उस आकस्मिक असंभावित महान् संकट के कारण उद्विग्न और व्यग्र है और उनकी व्यस्तता के भीतर से उनके दृढ संकल्प, कर्मठ, कलाप्रिय तथा आस्थावान जीवन की जो स्वस्थ झाँकी मिलती है वह मन को स्पर्श किए बिना नहीं रहती। अणु-बम के विस्फोट-सी घोर दुर्घटना से भी परास्त न होकर निरंतर द्विगुणित उत्साह से नवीन जीवन-निर्माण की भूमिका मे संलग्न जापानियो के अदम्य साहस, धैर्य, लगन और आत्मबल को देखकर मन मे उसके प्रति सम्मान तथा प्रशसा की भावना जाग्रत होती है। डॉक्टर के चिकित्सालय की अनुसधानशाला में रेडियो-सक्रिय पदार्थों तथा जीवो के विस्तृत वैज्ञानिक विवरण भी बडी रोचकता, सतर्कता तथा योग्यतापूर्वक अंकित किए गए हैं। वहाँ के विद्युत्-सक्रिय प्राणियों की दुरवस्था देखकर तथा अणु-दैत्य की भावी लुज-पुज सतानों का आभास पाकर रोंगटे खडे हो उठते हैं। हिरोशिमा के विनाश की पृष्ठभूमि से नारा नगर में 'दायबुत्सू' की विशाल प्रतिमा की छाया मे ले जाकर लेखक, जैसे, जापानियों के आस्थावान हृदय में दया और अहिंसा की भावनाएँ जगाकर, अप्रत्यक्ष रूप से, भारतीय सस्कृति की चिरस्थायी देन तथा उसके महत्त्व की ओर इंगित करता है।

युग के घोर विपन्न यथार्थ को प्रस्तुत करने वाला यह लघु उपन्यास अपने रूप-विधान में कही भी नीरस अथवा शिथिल नही होने पाया है। इसमे कथानक की रोचकता तथा सजीवता सर्वत्र अक्षुण्ण रूप से विद्यमान मिलती है। नंदलाल-जैसे पात्र, जो कि सैनिक जीवन मे प्राय: ही पाए जाते हैं, इस दारुण करुण कथानक में हास-परिहास तथा रसिकता की रंगीन डोरियाँ गूँथने में सहायक होते हैं। नंदलाल का चरित्र-चित्रण बड़ा स्वाभाविक और सफल बन पड़ा है। उसका अंत भी लेखक ने बड़े मार्मिक और

दो शब्द

द्वितीय विश्व-युद्ध में जब वैज्ञानिक अनुसन्धान अपनी चरम सीमा पर पहुँचे और उसके फलस्वरूप अणु में निहित अपार शक्ति का एक राष्ट्र ने दूसरे राष्ट्र पर प्रहार किया, उस समय सम्भवतः किसी ने विचार भी न किया होगा कि यह निर्मम विभीषिका साहित्य-सृजन का विषय बनेगी। अणु-विस्फोट कर मनुष्य ने सभ्यता का हनन तो किया ही, पर उसके साथ-साथ मानवता को एक नई दिशा भी दी। सुदूर जापान के द्वीप में स्थित हिरोशिमा नगर पर आकाश से अवतरित अभिशाप ने विश्व के नागरिकों में एक अद्भुत, व्यापक सहृदयता को भी जन्म दिया, जो हिरोशिमा के ध्वस्त-शेष नगर के सिसकते जीवन-क्रम को पुनः जाग्रत करने तथा अक्षुण्ण रखने में काफी हद तक सहायक हुई। इस मृत्यु के बवण्डर से उत्पादित मनुष्य-जाति के प्रति प्रेम और एकता के सागर की उत्ताल तरंगों ने उस बवण्डर को अपनी उग्रता में डुबोकर समाहित कर डाला। सभ्यता को विस्तृत मरुस्थल और मूक प्रस्तरों में परिणत करनेवाली पैशाचिक प्रवृत्तियाँ प्रकृति की जीवनदायिनी क्रिया का विनाश न कर पाईं। हरे-भरे आबाद नगर उजड़े हुए रेगिस्तान बन गए। प्राणियों का जीवन-रस निचुड़कर उन रेगिस्तानों में समाने लगा। उस गरम रुधिर ने धरा के अन्तर को गीला कर दिया। मरुभूमि में टेढ़ी-मेढ़ी नागफनी और कँटीले झाड़ झाँकने लगे। उन कँटीली फुनगियों में मेरा मन उलझ गया। उन अंकुरों के शूलों में निहित मानव की वेदना को अक्षुण्ण बनाने की उत्कण्ठा ने मुझे यह लघु उपन्यास लिखने को प्रेरित कर डाला।

वर्तमान युग में राष्ट्रों के बीच लड़े गए भयानक युद्ध, युद्ध के बाद अस्थायी सन्धि, सन्धि के होते ही वैमनस्य और भय की भावना का फैलता

विष, और फिर शीत-युद्ध का प्रसार—यह ऐसा क्रम हो गया है जो अन्तर-राष्ट्रीय क्षेत्र में देशों को उस ऊँचे खुरदरे कगार के तट पर खीच लाता है जहाँ से वे नीचे गिरकर अथाह, अनन्त अन्धकार में मिट ही नही जाएँगे वरन् मनुष्य-जाति की संस्कृति, आदर्शों और सभ्यता को ग़र्क कर डालेंगे। इस भावना के विरोध में और विश्व-शान्ति की मगल-कामना से अनुप्राणित हो हमारे भारत देश के सर्वश्रेष्ठ नेता पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने विश्व में एक नए मार्ग का प्रदर्शन किया है। उन्होने इस युग के कलह को पारस्परिक स्नेह मे परिणत करने का अनुष्ठान किया है। वह विश्व-शान्ति के प्रतीक तथा युग-नायक हैं और इसीलिए मैंने इस रचना को उनको अर्पित करने का साहस किया है। इस लघु उपन्यास के पढने मे युद्ध की विभीषिका और निरर्थकता के प्रति यदि पाठकों के मन मे करुणा जाग्रत हो जाए और लोक-साहचर्य की भावना का उत्कर्ष हो सके तो मैं अपने प्रयत्नो को विफल नहीं समझूँगा।

इस रचना की पृष्ठभूमि जापान देश मे है, क्योंकि अणु-विस्फोट की विभीषिका का दिग्दर्शन वहाँ के नगर हिरोशिमा में ही हो सकता है। जापान के ललित रँगीले द्वीपो पर प्राप्त भारत के सैनिकों के यथार्थ अनुभव सच्ची अनुभूतियो पर आधारित हैं।

इस लघु उपन्यास की रचना मे जो प्रोत्साहन मुझे आदरणीय सुमित्रा-नन्दनजी पन्त और मेरे परम मित्र कवि श्री गिरिजाकुमार माथुर, असिस्टेंट स्टेशन डाइरेक्टर, आकाशवाणी, इलाहाबाद से मिला है उसे मैं कभी भी नही भूल सकता। इन दोनों साहित्यकारों ने मुझे अमूल्य सुझाव दिए हैं और मैं उनका अनन्त आभारी हूँ।

अपने कार्य-व्यस्त जीवन मे जो क्षण मैं साहित्य-सेवा के लिए निकाल सका उसके फलस्वरूप यह मेरी कृति—'हिरोशिमा की छाया मे'—पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है।

१०-५-५६ — भगवत स्वरूप चतुर्वेदी

मुख्य चरित्रों के नाम

१. मेघा—नन्दलाल की प्रथम प्रेमिका
२. नन्दलाल शाह
३. हवलदार मेजर गुरदयालसिंह
४. तेरुओ ओकादा
५. रेइको
६. कोइको सान
७. सेत्सूको सान—नर्स
८. डॉक्टर तोशियो तनाका
९. प्रोफेसर गोरो हामागूची

जापान

सुनहले प्रभात की तिरछी-बाँकी किरनें आज भी अपना नारंगी और पीला रंग बिखेर चुकी थीं। नारियल के सीधे वृक्षों के नुकीले पत्तों से छनकर उनकी रंगीनी हरी घास पर एक अजब जादू का जाल बिछा रही थी। दूर पर गहरे हरे रंग की पहाड़ियों की चोटी पर सुरमई रेखा सिमटकर अधिक स्पष्ट हो चली थी। स्वच्छ आकाश में उड़ते हुए, सिलेटी बादलों में भी रंगों का उभार झलकता। मलाया की मलयानिल ने हमारे मन में रंग भर दिया। समुद्र के नीले जल में छोटी लहरें उठने लगीं—मालूम होता कि उसका शान्त वक्ष चेतना की हिलोरों से उठता-गिरता हो। हर ओर जिन्दगी और हर वस्तु में गति आ गई।

हमारा जहाज भी चलने लगा। उसके चलने के साथ यह आभास हुआ मानो सिंगापुर का फैला, सुन्दर किनारा हमारे साथ-साथ चल रहा है। वहाँ की भूरी-बड़ी इमारतें, छोटे-छोटे सफेद मकान और उनमें से झाँकती हुई खिड़कियाँ, चौड़ी साफ-सुथरी सड़कें—सबमें जिन्दगी और सब आगे बढ़ते हुए। किनारे पर बना शानदार 'रैफेल्स होटल' (Raffel's Hotel) भी स्थिर न था। वह भी हमारा साथ दे रहा था। जी चाहता था कि सागर को तैरकर मैं इस होटल के अपने कमरे में चला जाऊँ, जहाँ मैं इतने दिनों रहा था।

किनारे पर खूब चहल-पहल थी। स्टीमर, टग, बड़ी नावें और छोटी किश्तियाँ सब चलने लगी थीं। गालों की चौड़ी उभरी हुई हड्डियों के बीच पतली आँखोंवाले मलय और चीनी मछुए अपनी मोटर-बोट भगाए लिये जा रहे थे। उनके बेंत के बड़े हैट की परछाईं पार कर उनके गले में बँधे लाल, नीले और हरे रूमाल के छोर हवा में इठलाते और वह ऊँचे स्वर से किसी गाने की तान छेड़ते, जो कभी-कभी जहाज के इंजनों की घड़घड़ाहट को भी पार कर कानों मे पड़ जाती। जेटी मे हर किस्म की नावें खचाखच भरी थी और सबमें हलचल-सी मची थी। हम इस गति के प्रदर्शन से दूर हो रहे थे, पर वह तट हमारे साथ तैरता हुआ, साथ चलता हुआ मालूम हो रहा था।

'मेजर साहब ! हम लोगो का सब सामान ठीक से रख लिया गया है। सब जवान खुश है।' मेरी कम्पनी के हवलदार मेजर गुरुदयालसिंह ने अपने बूट की एड़ी खट से मिलाकर सैल्यूट करते हुए कहा।

'अच्छा ठीक है।' मैंने उत्तर दिया और उसके चेहरे को एक निमिष गौर से देखा। उसकी खुशी को उसकी घनी दाढी और मूँछें भी नही छिपा सक रही थी। उसके बाएँ नथने के पास का काला मसा उभरे हुए गाल की रेखा के नीचे आधा छिप गया। उसकी आँखों की चमक पर गीली कोरों से उठता पानी फैलने लगा—उस सागर के किनारे की तरह। एकटक बिछुड़ते साहिल की ओर देखकर वह कहने लगा, 'साहब ! इस शानदार शहर से अलविदा !'

'हाँ, मगर यह खुशनुमा किनारा तो हमारे साथ ही बहा आ रहा है।'

'थोड़ी देर के लिए साहब !'

'शायद आप ठीक कहते हैं।' मैंने सिगरेट का एक कश खींचते हुए कहा। सिगरेट के धुएँ के फैलते हुए छल्लों के अस्थिर अस्तित्व को मैं देखने लगा।

'मेरे लिए और कुछ हुक्म ?' उसने चुस्ती से कहा।

'अच्छा गुरुदयालसिंह, अब आप आराम कीजिए। सब जवानों पर

निगरानी रखिए।' कहते-कहते मेरी आँखें फिर किनारे के मनोरम दृश्य में उलझ गईं।

दूर पर पानी का एक बुदबुदा उठा। शायद कोई छोटी मछली उछली और फिर गायब हो गई। ऊपर उडते हुए एक सफेद सी-गल ने पर फैलाकर उस पर झपट की। उसका वार खाली गया। वह एक ओर आकाश मे ओझल हो गया। ठण्डी हवा का एक झोंका आया। पानी का बुदबुदा छलककर सागर की चौडी सतह मे समा गया।

●

बहुत देर तक मै डेक पर रेलिंग के सहारे खड़ा रहा। कभी आसमान के बादलो के परे मैं देखना चाहता। कभी जी चाहता कि सागर की गहराई को खोज डालूँ। कभी दृष्टि किनारे की ढलवाँ पहाडियो में अटक जाती। मालूम पडता कि पूरे तट की स्थिरता पिघल चुकी है। वह तरल सागर पर तैरता हुआ हमारे जलपोत से होड लगा रहा है। यह दौड कुछ दूर तक चलती रही, पर जैसे-जैसे हमारी गति तेज हुई हम आगे निकलने लगे। वह वैभव-सम्पन्न नगर हमसे दूर होने लगा, हमसे पीछे रह गया।

बन्दरगाह मे बडे-बड़े जहाज दूर से छोटी नावो-से मालूम होने लगे और फिर ओझल हो गए। किनारे के नारियल के पेड़ों के बिखरे झुड आपस में पास सिमटने लगे। इमारतें, वृक्ष और पहाड़ियाँ एकाकार हो गईं। मलाया प्रायद्वीप के दक्षिणी सिरे पर बसा हुआ सिंगापुर का द्वीप दूर, बहुत दूर छूट गया था। अब उसकी सीमा क्षितिज पर केवल रेखामात्र रह गई। हमारे चारों ओर केवल जल-ही-जल था। समुद्र का विस्तृत नीला जल-पट, जिसमें अकेला हमारा जहाज। एक अजब अकेलापन मेरे मन में समाने लगा। मैं अपने केबिन में आकर गद्देदार कुर्सी पर बैठ गया। एक किताब उठाकर पढनी चाही। कुछ पन्ने उल्टे-पल्टे पर तबीयत न लगी। सिगरेट जलाकर पीने लगा और फिर उसके उठते धुएँ से मन बहलाना चाहा। अपनी केबिन की खिड़की के सहारे मैं बैठ गया। उस खिड़की के शीशे के पार, दूर होते हुए किनारे का दृश्य साफ दिखाई देता। वहीं कुर्सी

पर बैठ मैंने अपने शरीर के सब अंग ढीले छोड दिए। उस ढीलेपन में न विचारों में नियन्त्रण रहा और न कोई क्रम। बेतरतीव मनोभावनाओं का काफिला तेज़ी से चलने लगा।

यकायक याद आई सिंगापुर और अन्य दक्षिण-पूर्वी एशिया के क्षेत्रों के इतिहास की। कैसे ये भू-भाग, द्वीप और नगर दूसरे विश्व-युद्ध में अधिकार-परिवर्तन के प्रयोग-स्थल बनकर रह गए। कभी एक राष्ट्र उन पर अपना शासन जमाता तो कभी विरोधी देश मिलकर उनको अपने आधिपत्य मे लाते। विशाल सागर खेल का एक मैंदान मालूम देता, जहाँ रगबी का खेल हो रहा था और जहाँ शक्ति की कदुक दोनों ओर जा रही थी। जिधर बल अधिक हुआ उधर ही इन देशों के जीवन-रस के चूसने के साधन जुट गए। जिधर ही लोहे के लोहू पीनेवाले अस्त्र-शस्त्र अधिक सख्या मे जमा कर दिये गए उधर ही इस देश का पल्ला झुक गया। किसी दिन सुवह एक द्वीप अंग्रेज़ों के अधिकार में था—शाम होते-होते जब सूर्य सागर के नीले जल मे डूबा तो उसकी लाली इन्सान के लोहू से गाढी हो चुकी थी। भीषण रण के बाद वह सौन्दर्य की निधि विध्वस हो जापानियो के अधीन हो गई। इस ध्यान में मग्न मैं खिड़की से और सट गया। मेरी श्वासों से खिडकी के शीशे का कुछ भाग धुँधला हो गया। सिगरेट का धुआँ केबिन मे छा गया था। मालूम होने लगा कि मैं रणक्षेत्र मे हूँ जहाँ धुआँ और गुबार उठ रहा है। सामने ठीक से कोई भी चीज़ नही दिखाई देती। मैंने जलती सिगरेट बुझाकर एक ओर फेंक दी। कमीज़ के गले की बटनें खोल डाली, रूमाल से अपने माथे को पोंछा और खिड़की के शीशे को साफ किया।

किताब फिर हाथ में उठा ली और उसका एक पृष्ठ पढ गया। पुस्तक में दक्षिण-पूर्वी एशिया के इतिहास की चर्चा थी। इस पृष्ठ मे लिखा था कि इस क्षेत्र में सदा व्यापारिक वैमनस्य के कारण यूरोप के देश आपस में संघर्ष करते रहे। अंग्रेज, फ्रेन्च, डच और अमरीका के पूँजीपतियों ने यहाँ व्यापार-वृद्धि करने के बहाने अपने छोटे-बड़े उपनिवेश बनाए। मलाया, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो और इन्डो-चाइना की शस्य-श्यामल भूमि पर

यूरोप के देशो के अधिकार की रेखाएँ खीची गईं। यहाँ से रबर, चावल, शक्कर, मसाले और मछली दूर देशों मे जाने लगे। यहाँ की लाखों टन श्री-सम्पत्ति संसार के सुदूर कोने मे जाने लगी। व्यापार की सुविधा के लिए बड़े बन्दरगाह बने। समृद्धिशाली नगरों का निर्माण हुआ। इस पृष्ठ को आगे पढने के बजाय मैं इसे दोहराने लगा। कितना सत्य था इस कथन मे !

मैंने खिडकी मे से देखा कि हमारा जहाज एक माल लादनेवाले जहाज के पास से आगे निकल रहा था। वह सुस्त, भोंडा जहाज घोंघे की चाल चल रहा था, सिंगापुर की सम्पत्ति ढोकर मालूम नही कहाँ लिए जा रहा था। ऐसे ही जहाजों ने इन देशों को उजाड़ने में कोई कसर नहीं रखी। जी मे आया कि बम और गोलियों से उसे इसी जगह डुबो दूँ। शायद इस देश का माल समुद्र की लहरों के सहारे इसी देश के किनारे जा लगे। फिर ध्यान आया कि मनुष्यता के आदर्श तो पहले ही जल की अथाह गहराइयों मे डूब चुके है। अब तो व्यापार के साथ सत्ता के विस्तार का युग है—*द्वेष-भाव का, संघर्ष का*। इसीलिए तो पहले *अंग्रेजों ने और फिर जापानियों* ने अपनी पूर्ण शक्ति यहाँ जुटा दी थी। यहाँ अपना अधिकार जमाया था। कितने भीषण युद्ध के बाद जापानी यहाँ से भागे थे, पर भागने के पहले यहाँ की सम्पदा को अपने देश मे पहुँचा दिया था। शेष को नष्ट करने में कोई कसर नही छोडी थी। अंग्रेजो और भारत की फौजें यहाँ एक बार फिर उतरी। उनके साथ अनेक अफसर और सैनिक आए। मैं भी भारत की सेना के साथ आया। भारी बूटों से खट-खट करते हुए हम सिंगापुर के डॉक्स में उतरे थे। कितने लोगों ने गहरी हरी वर्दी पहने, कतार लगाए, राइफिल लटकाए वहाँ की कोमल हरियाली को रौंद डाला था।

'खट-खट-खट-खट—' मेरी केबिन के दरवाजे पर यही शब्द होने लगा। झटपट उठकर मैंने दरवाजा खोला। देखा कैप्टेन नन्दलाल शाह वर्दी पहने अपने फौजी बूट के पंजे ऊपर-नीचे उठाकर लकडी के फर्श पर खटका रहा था। बूट के तल्लों मे लगे लोहे के टुकड़ों और कीलों से खट-

खट की हल्की ध्वनि उठती।

मैंने कहा, 'आओ नन्दलाल, बैठो। कैसे हो ?'

'बिल्कुल फिट। सौ फीसदी फिट।' अपने रूमाल को दाहिने हाथ में नचाते हुए वह बोला।

'अभी तो कई दिन सफर करना है।'

'हाँ मेजर ! सफर तो लम्बा है, मगर मौसम अच्छा है, इस मदभरी बरसात का।'

'सिंगापुर अच्छी जगह थी। वहाँ मौसम हमेशा अच्छा और वहाँ के निवासियों के तो क्या कहने ?'

'बहुत अच्छे, बहुत अच्छे ! नाचने-गानेवाले। मैं वहाँ की युवतियों के साथ खूब नाचा हूँ मेजर ! सामने लहरों की तरह।' उसने खिड़की की ओर इशारा किया।

मैंने देखा, समुद्र की लहरें सचमुच नाच रही थीं, इठला रही थीं।

०

कैप्टेन नन्दलाल शाह छरहरे शरीर का सुन्दर युवक था। काले घुंघराले बाल, गेंहुआ रंग, चौड़ा माथा और सीधी सुडौल नाक। उसकी बड़ी आँखों की काली पुतलियों में नशे की-सी खुमारी—एक स्वप्निल झलक—जिसे आँखों के नीचे के हल्के काले घेरे भी नहीं छिपा सके थे। कद लम्बा, चौड़ा वक्ष और सिंह की-सी कमर। उसके शरीर पर फौजी वर्दी खूब फबती। वह अपने काम में सुबह से चुस्ती से जुटा रहता और शाम होते-होते वह चुस्ती मदिरा के जाम में डूबने लगती। वह पीने लगता प्याले-पर-प्याले। उसकी रगों में तेज खून की जगह मस्त रंगीनी रेंगने लगती। उसके अवयव ढीले-से, निर्जीव-से होने लगते और तब वह कभी मेरे कन्धे का सहारा लेकर कहता, 'मे-ज-र सा-ह-ब, क्या-जिन्दगी-है ! सुबह-से-हड्डी-चूर-करनेवाला-काम ! अब, मैं जिन्दा-हो-रहा हूँ। जिन्दगी-निखर रही है।

मैं उसे सँभालकर कुर्सी पर बिठा देता। वह अपनी दोनों बाँहों को

पास की मेज पर रख लेता। उन पर सर टिकाकर सो जाता—गहरी नींद में।

बाल-सुलभ क्रीड़ा, अल्हड़पन की निश्चिन्तता, रक्तवाहिनी धमनियो में युवा-शक्ति का स्पन्दन, स्नेह का प्रस्फुटित अंकुर और फिर चिरकाल के लिए मुरझाया-सा शुष्क जीवन, जिसमे रसभरी बोतलों का मधु कभी मधुमास की हरियाली न ला सका—ये नन्दलाल शाह के इन छब्बीस वर्षों के अनुभव थे। काठियावाड के समुद्र-तट के अपने गाँव में उसने खेल खेले थे। किनारे पर दौड़ लगाई थी। नाव चलाई थी। मल्लाहों के बच्चो के साथ, बालकपन में, जल में जाल डालकर मछलियाँ पकड़ी थीं। समुद्र के रेतीले तट पर और बालकों के साथ बैठ मोटी रोटी और मोटे चावल, पतली दाल के साथ खाए थे। उसने बताया था कि एक दिन जब एक बडी मछली उसके जाल में फँसी थी तो कैसे अपने साथियों के साथ छोटे डण्डे ऊपर उछाल-उछालकर सब नाचे थे, प्रसन्न हुए थे, सबने अपने-अपने घर से रोटी और भात लाकर हिल-मिलकर खाना खाया था। अपने जमींदार बाप के घर से वह फूल की चमकती थाली में खाना लाया था और पीतल के लोटे में पानी! माँझियों के बच्चों ने पत्तों पर रखा सब खाना उसी की थाली में डाल दिया था और सबने उसके चारों ओर बैठकर उँगलियाँ चाट-चाटकर पेट भरा था। सबने चिल्ला-चिल्लाकर कहा था कि 'हम तो नन्दू के लोटे से पानी पिएँगे।' और सबने अपनी मिट्टी की हाँडियों का पानी लोटे में उँडेलकर बारी-बारी से प्यास बुझाई थी। अपने गाँव में कितना सुख था! सबमें सागर जैसी सहृदयता और एकता—जहाँ सब नदी-नाले एक हो बहते, जहाँ सबका अस्तित्व एक में समाया हुआ।

जब वह कुछ बड़ा हुआ और जब उसके पिता ने उसे गाँव से हटाकर तहसील के स्कूल में भेजा तो वह बहुत रोया। वह रोया और उससे लिपटकर माँझियों के बच्चे भी रोए। सबके धीरज के बाँध टूट गए। स्नेह के गागर फूट गए। प्रेम की अश्रुधारा बह निकली—नन्हे दिलों को निचोड़ती हुई घुली-मिली सारी जलधारा, जिसने सागर के जल को भी खारी कर

दिया। अक्सर नन्दलाल शाह मुझसे कहा करता कि शताब्दियों से विकल प्रेमियों की अविरल अश्रुधारा ने ही इतने बड़े समुद्र को खारा कर दिया है। यह कहते-कहते उसमें काठियावाड़ के अपने ग्राम की स्मृति जाग उठती और आँखें डबडबा आती।

मालूम नहीं क्यों मैं नन्दलाल शाह के अलबेले स्वभाव से आकर्षित होकर उसका विश्वासपात्र, गहरा मित्र बन गया। दोनों सिंगापुर में, भारत की सेना में दूसरे विश्व-युद्ध के बाद गए। वहाँ साथ रहे, साथ घूमे, साथ काम किया और साथ आनन्द लिया। एक दिन मुझसे नहीं रहा गया। मैंने पूछ ही लिया, 'नन्दलाल, तुम सम्पन्न परिवार के हो; तुमने अभी तक अपनी शादी क्यों नहीं की ? माफ करना, यह सवाल तुम्हारी निजी बातों के बारे में है, पर तुम्हारा मित्र होने के नाते शायद यह सवाल करने का मुझे अधिकार है।'

'मेरे दोस्त ! तुम सब-कुछ पूछ सकते हो। मेरे बारे में, मेरी जिन्दगी के बारे में। मैं तुमको सब-कुछ बता दूँगा।' उसने एक गहरी साँस लेकर कहा। फिर उसने अपने विद्यार्थी जीवन की एक घटना को दोहराया। उसके पिता ने उसे कस्बे के स्कूल से राजकोट के कॉलिज में भेज दिया। उसका मन अपने गाँव में और अपने बचपन के साथियों में उलझा रहता। उसे याद आई अपने परम मित्र 'मटरुआ' की जो अब 'मटरू मल्लाह' हो गया था। उसकी छोटी बहन मेघा—कलाइयों में हाथीदाँत की चूड़ी और पैरों में गिलट के कड़े पहने अक्सर समुद्र के किनारे खेल के समय आ जाती। मटमैला ऊँचा घाघरा, टूली ओढ़नी और पैमद-लगी पीली कुर्ती, जिस पर रंग-बिरंगे पोत के मोती की माला—ये सब उसके साँवले शरीर पर खूब खिलते। बिखरी लटें हवा से अठखेलियाँ करती और उसकी सीप-सी बड़ी आँखों पर छा जाती। वह गर्दन झटकती। ओढ़नी सर से हट जाती। नन्हे हाथों से अपने बाल बाँधने लगती। सब खेलते और वह नन्ही-सी, पतली-सी किसी अकेले स्थान में बैठ तमाशा देखती। एक बार नन्दू ने बालू का छोटा घर बनाया, मेघा ने उसे पत्थर और छोटी सीपों से सजाया। नन्दू ने कहा,

'मेघा, हम दोनों इसमें रहेंगे।' उसने कहा, 'हाँ।' पर दूसरे ही क्षण एक तूफ़ान उठा और एक बड़ी लहर उस रेत के घर पर टूट पड़ी, उसे गर्क कर दिया। शायद यह भविष्य के यथार्थ की सूचना थी—दर्द-भरा, दुःखमय भविष्य—कैप्टन नन्दलाल शाह कहता।

कस्बे के स्कूल से जब वह छुट्टियों में आता तो मटरू के घर जरूर जाता। मटरू की माँ अपने नन्दू बाबू को पकवान खिलाती। मेघा के बनाए हुए तिल और गुड़ की तिलकुट एक पत्ते पर रखकर वह कहती, 'मेघा कहती है, बाबू को यह तिलकुट खानी ही पड़ेगी।' नन्दू मिठाई खाता, अपने होंठों पर जीभ फेरते हुए उसकी तारीफ करता। कैसा मीठा स्वाद! उसने कहा, 'मेघा तो हलवाई को मात करती है।' और नन्दू ने देखा कि मेघा के कानों में कर्णफूलो के पास लाली चढने लगी। उसने गर्दन झुकाकर अपनी बड़ी आँखों से नन्दू की ओर एक बार देखकर फिर अपने बड़े पलक नीचे कर लिए।

जब वह राजकोट के कॉलिज से एक बार अपने गाँव आया तो उसने माँझी की लड़की में एक अजब परिवर्तन पाया। उसकी सुन्दरता निखरी पड़ती। उसके बड़े-बड़े नयनों में एक अनोखी मादकता। उन नयनो के कोनों मे से सहस्रों तीर छूटते। उसके सीने पर उभार और कमर पतली। ऊँचे घाघरे की जगह एडी तक पहुँचनेवाला चुन्नटदार लहँगा और कसी हुई चोली। अपनी ओढनी के ऊपर सर पर मछलियों की टोकरी रखे वह किनारे से जानेवाली थी कि नन्दलाल वहाँ पहुँच गया। सागर के नीले जल मे सूरज डूब चुका था। सन्ध्या की लाली को दूर वृक्षों से पत्तों से आँख-मिचौनी हो रही थी। समीर ठंडी। उसकी लटें फिर उसके साँवले चेहरे से लिपटने लगी। उसने एक हाथ से लटें हटाईं और एक हाथ से टोकरी सँभाली। नन्दू ने देखा, उस लाली में उसके वक्ष पर बल खाती पोत के मोतियों की माला की अनूठी आभा। कान की ठोडिया (कर्णफूल) की नक्काशी मन पर गहरी नक्काशी किए दे रही थी। नन्दू उसके पास पहुँच गया और बोला, 'मेघा, तू कितनी बड़ी हो गई?'

'हाँ नन्दू बाबू !' उसने सर हिलाकर छोटा-सा उत्तर दिया। उसके चेहरे पर मुस्कान छा गई।

'और तू कितनी भली मालूम देती है ?'

'सच ?'

'और क्या झूठ ? ला तेरे सर का बोझ नीचे रखा दूं।' कहते-कहते मछली से भरी टोकरी नन्दू ने मेघा के सर से उतार ली।

'मेघा !'

वह चुप रही।

'मेघा, क्या बहरी हो गई है ?'

'नहीं तो।'

'तू मेरे साथ राजकोट चलेगी ?'

'हूँ !'

'क्यों नहीं साफ-साफ बोलती ? तू मुझे बहुत अच्छी लगती है—बहुत अच्छी।'

नन्दलाल ने उसकी दोनों बाँहों को अपने मजबूत हाथों से पकड लिया। वह सिमट गई। उसने धीरे-से कहा, 'कोई देख लेगा।'

'देख लेने दे, मैं तुझे अपनी रानी बनाऊँगा, तुझसे ब्याह करूँगा।'

'बाबू ! तुम शाह और मैं माँझिन।'

'कुछ परवाह नहीं।'

'तुम भूल जाओगे मुझे।' मेघा की आँखों के कोने सजल हो गए। उसने अपना सर नन्दू के कन्धे पर रख दिया।

दूर एक मल्लाह ने नाव खेते हुए एक तान छेड़ी। मेघा झट से अपनी ओढनी सँभाल, टोकरी उठाकर चल दी। और नन्दू अकेला खड़ा रह गया। सूर्य अस्त हो गया।

किनारे पर दूर एक सारस एक पैर उठाए खड़ा था। नन्दू बहुत देर वहीं अकेला खड़ा रहा—प्रेमाकुल, हताश-सा। पास के रेतीले किनारे को देखकर उसने मन-ही-मन कहा, मैं मेघा से ब्याह करूँगा, नहीं तो जीवन-

सौम्य के कही दर्शन नही हुए। अतः अपने विषाद को वह बोतल की रंगीनी मे घोलता रहता। अतीत को भुलाने के, डुबोने के प्रयत्न मे।

o

शाम धुंधली हो चली थी पर रात का अँधेरा अभी क्षितिज में ही छिपा था। सागर की लहरें नीचे जहाज मे थपेड़े मार रही थी, मगर ऊपर डेक पर शीतल-मन्द बयार बह रही थी। कैप्टेन नन्दलाल शाह और मैं चाय पी रहे थे। वह कहने लगा, 'मेजर! यह चाय मेरे खुश्क गले को तर नही कर पाती। मुझे तो कोई और गहरी चीज चाहिए—रंगीन और रसीली।'

मैंने हँसकर उत्तर दिया, 'रेगिस्तान को कौन तर कर सकता है? तुम सहारा के सूखे मरुस्थल के समान हो। सारे समुद्र भी मिलकर तुमको हरा नही कर पायेगे।'

'ऐसा नही है मेजर! मैंने सिंगापुर के रंगीलेपन मे अपने को भुला दिया।'

'पर फिर भी तुम्हारी प्यास न बुझी।'

'प्यास कैसे बुझ सकती थी! अगर वह बुझ जाती तब तो जिन्दगी खत्म हो जाती। मेजर! सिंगापुर के लोग कितने मस्त है! उनकी मस्ती मैंने 'न्यू वर्ल्ड' (New World) और 'ग्रेट वर्ल्ड' (Great World) के 'कैबरे' (Cabaret) मे देखी है। क्या रंग-बिरंगे वस्त्रो को पहनकर वहाँ की युवतियाँ नाचती है! मोरपंख-जैसे रंगीन आवरण और हंसिनी की-सी मदभरी चाल। वाह रे सिंगापुर!'

'सचमुच वहाँ का नृत्य मन को मोहनेवाला और वहाँ के वाद्य-यन्त्रों के खिंचे तार मन को खीचनेवाले।' मैंने उत्तर दिया, 'इसीलिए संसार के सब देशवासी वहाँ के संगीत की प्रशंसा करते है।'

'प्रशंसा करने की बात तो दूर रही, मैं तो वही रम जाना चाहता था। कितना सुन्दर हरा-भरा देश! कैसी लचीली, रंग-भरी, रस-भरी कूदती-थिरकती सुन्दरियाँ!' उसने मेरा दाहिना हाथ धीरे से दबाते हुए कहा।

कैप्टेन नन्दलाल की आँखें अपने चारों ओर के काले घेरे में से चमक रही थी।

'अंग्रेज और जापानी दोनों इस द्वीप और प्रायद्वीप को छोडते समय बहुत दुखी हुए थे। इसलिए नहीं कि यहाँ की नर्तकियाँ उनसे छूटी जा रही थीं। बल्कि उनके अधिकार की सीमाएँ घट रही थी। तुम भी नन्दलाल, किस क्षणिक विलास के चक्कर में पड़े हो!' मैंने कहा।

नन्दलाल शाह यह सुनकर किसी विचार मे मग्न हो गया। माचिस की एक तीली से वह अपने दाँतों को कुरेदने लगा। उसके माथे पर कई सिलवटें पड़ गई। कुछ देर चुप रहकर वह बोला, 'मेरे मित्र! मैं विलासी नहीं हूँ। मुझे भी अपना देश प्यारा है। तुम सब-कुछ जानते हो। मैं सूखे देश का रहने वाला नमी चाहता हूँ; तरी चाहता हूँ। जहाँ मन को तर करनेवाली चीजें मिलती है वहाँ की मैं प्रशसा करने लगता हूँ। तुमसे बातें करने से मुझे राहत मिलती है इसीलिए, मैं तुम्हारी तारीफ करता हूँ। कितने नेक और अच्छे हो तुम मेरे दोस्त!'

'तुम भी तो भारत की सेना में एक कर्मठ और अनुभवी अफसर हो नन्दलाल शाह!' मैंने उसकी सराहना की।

हम दोनों बहुत देर तक मलाया और वहाँ के देशवासियो के बारे में बातें करते रहे। कैसे घोर संकट में भी वे हँसते-खेलते निश्चित रहे। घर-द्वार विध्वंस हो जाने पर भी उन्होंने शोक प्रकट नही किया। उनके तरल सगीत ने उनकी कर्तव्यनिष्ठा को दृढता प्रदान की। उस देश के विस्तृत हरे मैदान और चौड़ी सड़कें युद्धस्थल बन गए, जहाँ लाल रक्त की धाराएँ बह निकलीं। सिगापुर की 'वुकिट-टीमा' रोड का दृश्य आँखों के आगे नाचने लगा। मलाया जानेवाली इस सड़क पर ही तो अंग्रेजों ने जापानियों के आगे हथियार डाले थे। यह सड़क युद्ध के इतिहास में कितनी महत्त्वपूर्ण हो चुकी थी!

मुझे याद आई कि विश्व-युद्ध में कैसे इस क्षेत्र के द्वीप और अंग्रेजों और अमरीका की शक्ति के स्तम्भ बन गए थे

हुआ चालक एक सिरे पर अकेला बैठा हुआ किसी गीत की टूटी कड़ियाँ गुनगुनाने लगता और फिर अपनी सिगरेट का कश खींचकर चुप हो जाता। जहाँ न कोई कौतूहल और न कोई रंगरेलियाँ। जहाँ अंधेरा होते ही सूनेपन का पर्दा गहरा-सा होता जाता।

यह सामुद्रिक सेना का शस्त्र-सुसज्जित, तीव्र गति का जहाज था। यहाँ हर ओर चमक-दमक, चुस्ती और तेजी, तरतीब और अनुशासन। हम सब यात्री भारत की सेना के वे दस्ते थे जो द्वितीय विश्व-युद्ध के समाप्त होने पर अगस्त, १९४६ में जापान को जा रहे थे। सिंगापुर में भारत की सेना में से छांटकर ये दस्ते बने थे—कर्मशील, दिलेर और चुस्त सैनिकों के। अमरीका और अंग्रेजों की सेना के साथ हम जापान को अपने आधिपत्य में करेंगे, वहाँ हमारा मान होगा, लोगों पर रोबदाब होगा, वह देश हमारे बूटों के नीचे होगा, यही भावना सब लोगों के दिलों में समाई थी। सबके व्यक्तित्व उन्मत्तता के छलकते पात्र में जैसे घुले हों। सब एकता की अटूट डोर में बँधे हों। सबमें जोश और खरोश। आंखों में खुशी की चमक और मन में विजय का दर्प। सबमें भविष्य की सुखद स्वप्नों की लालसा।

गुरखा राइफिल्स का हवलदार नाकिन गुरंग अपने नाटेपन की कसर गर्व से सीना फुलाकर निकाल रहा था। मराठा पल्टन के नायक नरसिंहराव की कमर ऐंठ में ऐंठी रह गई थी। राजपूत रेजीमेंट का लान्स नायक हिम्मतसिंह अकड़ में सीधा रह गया था और मद्रासी यूनिट का सैनिक गोपालस्वामी नायडू अपनी फूल-सी हँसी को अपने काले होठ और श्वेत दन्त-पंक्ति से दबाकर गम्भीरता की मुद्रा में परिणत करना चाहता।

'इक...दो...इक...दो...इक...दो'

रोज सवेरे हवलदार अपने भारी गले की आवाज को दांत भींचकर सुरीली-सी कर पी० टी० कराता। उसके शब्द पर सबकी भुजाएँ ऊपर-नीचे उठती-गिरती, टाँगें इधर-उधर उछलती। डेक पर कसरतें उछल-कूद होती।

जब वर्दी पहनकर जवान जमा होते तो वही भर्राई-सी

आवाज उठती, 'जवानो! जापान में सब चुस्ती और मुस्तैदी से रहो। वहाँ के लोगों से न दोस्ती और न दुश्मनी। उनसे दूर रहते हुए उन पर रौब-दाब का ऐसा असर डालो जिससे हमारी फतेह का उनको गुमान हो। हमने जंग जीता है। वे हारे हैं।'

यह सब समझाकर जवानों को नियंत्रण में बाँधा जाता। जापानियों को हेय और अपने को उच्च बनाया जाता। सबको भविष्य के कर्त्तव्यों का भान कराया जाता।

दिन ढलते-ढलते नियंत्रण की शृंखलाएँ भी ढीली पड़ने लगतीं। जीवन की कठोरता में रसमय संगीत उभरने लगता। सब डेक पर साथ बैठकर संगीत में मस्त हो जाते। कभी राग छिड़ता :

'काहे...मोय...छेड़ो...रे...नन्दलाल...उमरिया...मोरी बारी...रे...'

और फिर कोई फाग गाता

'फागुन...की ..ऋतु...आई...रे...फिर बाजे.. बँसुरिया...हो...बाजे...बँसुरिया...'

ढोलक की गमक के साथ मथुरा-वृन्दावन का फाग जमता।

कभी हाथ हिला-हिलाकर गानेवाले यह कहकर उछल पड़ते : 'खट...खट...खट...खट...तेगा बोले...छपक...छपक बोले तलवार...' और तब बुन्देलखण्ड के आल्हा से दिल बल्लियों उछलने लगता।

किसी दिन पंजाबी गानों की बल खाती तान, तो किसी दिन पहाड़ी लोक-गीत की लहराती मधुर लय।

जिस दिन सबके गले खुश्क होते उस दिन किस्से-कहानी कहे जाते, युद्ध के अनुभव दुहराए जाते।

किसी शाम को जब सूर्य का लाल गोला समुद्र की हिलती-डुलती सलवटों में समाने लगता तो मालूम होता कि महान् प्रशान्त महासागर सचमुच शान्त है। ठण्डी समीर इठलाती; जवानों के दिलों को गुदगुदाती। जब नीचे समुद्र शान्त होता तो जहाज पर मस्ती का सागर लहराता!

में भी ऐसा करेगी जिससे हम लोगों का नाम वहाँ अमर रहे।' वह कभी मुझसे कहता।

'क्यों नहीं। जरूर। यह तो कम्पनी के हवलदार मेजर पर निर्भर है।' मैं जवाब देता।

वह कुछ खुश होकर, कुछ झेंपते हुए मुस्करा देता—'आपकी मेहरबानी साहब।' इसके आगे वह और कुछ न कह सकता। कम्पनी के जवानों के लिए रौद्र-रूप सिंह इस समय किशोर-सा शरमीला लगता।

गुरुदयालसिंह ने मुझे सुनाए थे सेना में भर्ती के समय के अनुभव। उसके पहले अपने ग्रामीण परिवार मे उठती विप्लव की वेदना के बारे मे। वह रावी नदी के किनारे गुरुदासपुर जिले के ग्राम का निवासी था, जहाँ लोग अधिकतर खेती करते। मवेशी रखते। दूध, मट्ठा, और लस्सी पीते और कसरत करते। वह अपने बड़े भाई के साथ हिलमिलकर रहता। दोनों जुटकर खेत मे काम करते। भाई कहता, 'ओबे दयाल, अब तू ही सब काम सँभाल। मेरी तो शादी होने वाली है।' और वह आँखें बन्द कर अपनी दुलहिन के स्वप्न देखने लगता। गुरुदयाल हँसकर काम मे लग जाता। उसके भाई का सपना सच्चा हो गया। दूसरे गाँव से वह शादी कर लाया। पर गुरुदयाल काम करते-करते स्वप्न के ससार मे उतर गया। अचानक गाँव के एक सरदार ने अपनी जवान बेटी की गाँठ उससे बाँध दी। 'दोनों की जोडी अच्छी बनेगी'''खूब बनेगी।' कहते-कहते सरदारिनी और गाँव की औरतों ने गुरुदयाल का ब्याह रचा डाला। उसकी घरवाली अच्छी निकली, मेहनत करनेवाली, भैंस का दूध काढनेवाली। पर भाभी तो टेढ़ी थी'''तलवार की-सी टेढ़ी और पैनी। वह काम के वक्त आराम करती, आराम के समय खरी-खोटी बातें उगलती। गाँव में चार जगह बैठ घर की चर्चा करती, घर की बुराई करती। देवरानी की जब तबीयत खराब रहने लगी, जब यह जाना कि वह माँ बनने को है, तो जिठानी के मिजाज का पारा और ऊपर चढ़ गया। उसका सर भिन्नाने लगा, क्योंकि वह अभी निपूती थी। तरह-तरह की गालियाँ और अपशब्द उसने बकना शुरू किया। शायद वे सब

आप गुरुदयाल की सरदारिनी को ऐसे लगे कि बच्चा होते समय वह और नवजात शिशु दोनों इस संसार से चल बसे। गुरुदयाल का सुख-स्वप्न विनष्ट हो गया। वह अपना माथा ठोककर रह गया। उसकी भाभी निपूती की निपूती रही।

एक सांझ गुरुदयालसिंह कन्धे पर हल रखे घर आया। उसकी तबीयत कुछ गिरी-गिरी-सी थी। बैठक मे बैठते हुए भाभी से एक गिलास ठण्डी लस्सी माँगी। उसके बदले गरम गालियों की मटकी उँडेलते हुए वह तड़पकर कहने लगी, 'भैसों का कुछ काम भी करते हो या माल ही खाना चाहते हो!'

'कैसे बात करती हो भाभी?' गुरुदयाल ने पूछा।

'तेरे जैसी मीठी कटारी चलानी मुझे नहीं आती। जो मेरे मन में है वह कह देती हूँ। सच तो है, हराम का खा-खाकर मोटा हो रहा है।' वह बोली।

गुरुदयाल का माथा तमतमा गया। फिर भी गुस्सा रोककर उसने कहा, 'क्यों बिगड़ती हो? मैं यहाँ से चला जाऊँगा। सिर्फ भैया की मदद को यहाँ रहता हूँ।'

'बड़ा भैया का दास बना है। भैया, भैया, बड़ा भैयावाला आया है। सारी खेती सत्यानाश कर दी तूने, अब भैया को पूरी तरह बरबाद करना बाकी है।'

इतने मे भैया घर से निकल आया। उसने बीच-बचाव करना चाहा, पर भाभी उस पर भी उफन पड़ी। वह कुछ न बोल सका। गुरुदयालसिंह ने उठकर भैया के पैर छुए और अपनी गठरी उठा घर से निकल पड़ा।

अमृतसर आकर उसने सिक्खों के स्वर्ण मन्दिर मे शपथ ली कि अब कभी घर वापस नहीं जाएगा। वह दूसरे ही दिन भर्ती के दफ़्तर में जाकर फ़ौज में भर्ती हो गया। तब से वह घर नही गया और न वहाँ कभी भी जाने का उसका विचार है।

'फ़ौज ही मेरी जिन्दगी है। यही मेरा घर है।' वह अक्सर

देता है। 'जंग में दुश्मन मैंने बहुत देखे, पर घर के दुश्मन से भगवान् बचाए।'

०

तीसरे पहर से ही दिन ढलता मालूम हो रहा था। घटा घिरी थी और बरसात की फुहार पड़ रही थी। ठण्डी हवा की हिलोरों ने नन्दलाल शाह के रूखे बालों को बिखेर दिया था। उसकी आँखों के नीचे के घेरे और काले मालूम होने लगे। हम दोनों डेक पर एक ओर बैठे थे। उसने अपनी कमीज के बटन को अपने दाहिने हाथ के अँगूठे और बीच की बड़ी उँगली से घुमाते हुए कहा, 'मेजर! आप तो इस भाग के देशों में खूब घूमे हैं।'

'हाँ, मैंने यहाँ के द्वीप और प्रायद्वीप का भ्रमण किया है। छुट्टी लेकर मैं दूर-दूर जा चुका हूँ।'

'यहाँ के लोग कैसे हैं? इन द्वीपों में कौन-सी अच्छी जगह देखने की है?'

'तुमको क्या-क्या बताऊँ नन्दलाल! यह भू-भाग, जो इण्डोनेशिया कहलाता है, कला का भण्डार है। मैंने यहाँ का इतिहास पढ़ा है, यहाँ की पुरानी सभ्यता के केन्द्र देखे हैं, यहाँ के लोगों से मिला हूँ। वे कितने निश्चिन्त और प्रसन्न!' मैंने सिगरेट का धुआँ उड़ाते हुए कहा। मेरे मस्तिष्क में एक निमिष जावा के बोरोबुदूर (Borobudur) में बनी पत्थर की प्रतिमाएँ उभरने लगीं—वे प्रतिमाएँ जो अपना सानी नहीं रखतीं, जिनमें गौतम बुद्ध की अमर वाणी अंकित है। भगवान् बुद्ध के गौरव और सत्य की ये अमल मूर्तियाँ! उनके आदर्शों के ये सफल रूप। उनके आदेशों के प्रचार के यह दृढ़ साधन!

'मेजर, इण्डोनेशिया का इण्डिया से शायद कोई सम्बन्ध रहा होगा।' नन्दलाल की इस बात से मेरा ध्यान टूटा।

'नन्दलाल, बड़ा पुराना और गहरा सम्बन्ध है यह, इस सागर से भी गहरा। इस सम्बन्ध को जानने के लिए यहाँ की सभ्यता के बारे में जानो, यहाँ की भाषा को सुनो और यहाँ के नाच और राग-रंग देखो।'

'सच ? क्या आप सच कहते हैं ?' नन्दलाल के चेहरे पर नाच की बात सुनकर मुस्कान छा गई।

'और क्या झूठ ! मध्य जावा में जोगजकार्ता में जाकर देखो, बोरोबुदूर में देखो। गौतम बुद्ध की, पत्थर में बनी प्रतिमाएँ, वैसी ही हैं जैसी भारत में। वही शान्ति की मुद्रा। लोगों की बोलचाल में बहुत-से शब्द संस्कृत भाषा से मिलते-जुलते। और नाच बिल्कुल कथाकली नृत्य-जैसा। तुम तो नाच-गाने में मस्त रहनेवाले हो।'

नन्दलाल शाह कुछ झेंपते हुए कहने लगा, 'नाच-रंग तो मेरी कमजोरी है मेजर। मगर जावा के नाच की खूबी के बारे मे तो कहो। क्या यहाँ भी रँगीली युवतियाँ वैसे ही इठलाती हैं जैसे सिंगापुर में ?'

'यहाँ का नाच देखकर तुम ऋषि-मुनि बन जाओगे नन्दलाल ! लोग कितना अच्छा अभिनय करते हैं, महाभारत और रामायण के दृश्य के ! अर्जुन, युधिष्ठिर, राम, सीता और लक्ष्मण का रूप ऐसा दिखाते है जो अपने देश की रामलीला से भी बढ़े-चढ़े। पुराना इतिहास आँखों के आगे झूलने लगता है।'

'यहाँ की बातें तो बड़ी दिलचस्प है। शायद अपने देश से कुछ लोग कभी जरूर यहाँ आए होंगे ?'

इस देश के अमर इतिहास की रेखाएँ मानो उस शाम की उठती घटाओं को चीरकर स्पष्ट होने लगीं, अचानक बिजली कड़की ! क्षणिक ज्योति की टेढ़ी-मेढ़ी दरारो में से मैंने देखा—अम्बर पर लदी युग-युग की कालिमा के पार उसका अन्तर। फिर ऐसा लगा मानो हमारा जहाज अधिक जोर से डगमगा रहा है। मैंने क्षितिज की ओर इशारा करते नन्दलाल से कहा, 'इस पुराने आकाश ने शायद देखा होगा, ईसा के बाद पहली से लेकर पाँचवीं शताब्दी तक कुछ भारत के व्यापारियों को यहाँ आते। वे बोर्नियो, सुमात्रा और जावा में बस गए। वहाँ राज्य स्थापित किए। सुमात्रा में तो उड़ीसा से आये हुए शैलेन्द्र वंश के राजाओं ने राज्य किया। इस डगमगाते जहाज की तरह प्राचीन काल के जीर्ण जलपोतों ने व्यापारियों की सामग्री

के साथ-साथ बौद्ध-धर्म के विचार भी यहीं उतार दिए। मैंने पढा है. ऐसे ही दो व्यापारियो के बारे में, जिनके नाम त्रपुसो और मल्लिक थे। उड़ीसा के रहनेवाले, ये बैलगाडी में जा रहे थे। यह दन्तकथा है कि बोधिवृक्ष के नीचे पहुँचकर इनकी बैलगाड़ी के पहिए स्वतः ही रुक गए और बैलों ने आगे चलना बन्द कर दिया। पर जावा मे आने पर बौद्ध-धर्म के प्रचार का चक्र इनके द्वारा खूब चला। लोगो ने बोरोबुदूर में गौतम बुद्ध का विशाल स्तूप बना डाला। इस धर्म की व्यापकता और दृढता का परिचायक।'

'कैसा अचरज है ? जहां गौतम बुद्ध का शान्ति और एकता का सन्देश लोगों को मिला, वही भीषण द्वितीय विश्व-युद्ध हुआ, जिसमे हम सबने हिस्सा लिया। मैं भी वह स्तूप देखना चाहता हूँ।' कैप्टेन नन्दलाल शाह ने एक दार्शनिक की भांति कहा।

'वह देखने की चीज भी है। विश्व-युद्ध के बाद विश्व-शान्ति का प्रचार वहीं से होगा। मनुष्यता के पुराने सिद्धान्त उसी पुरातन दृढ स्तूप से प्रसारित होगे।' मैंने उत्तर दिया।

उस स्तूप की विशालता मेरी आँखों के आगे सजीव होने लगी, फैलने लगी। पत्थर के मजबूत पुश्तो पर उठता हुआ, ऊँचे ज्वालामुखी पहाडों के दामन में जैसे वह बुद्ध के महामन्त्रो को जगा रहा हो। पर नश्वरता ने उसे भी अछूता नही छोडा। जगह-जगह दीवारो पर मोटी काई की सतह जमकर स्थिर-सी हो गई। कुछ भाग फूलकर बाहर झुकने लगे। सीढियाँ चटकने लगी। फूटे हुए भागो पर घास और जंगली बेलें जमने लगी। फिर ध्यान गया गौतम बुद्ध के जीवन के उन दृष्टान्तों की ओर जो अब भी इस जीर्णता मे कोमल और दृढ बने है। सिद्धार्थ का यशोधरा को प्राप्त करने के लिए धनुष-बाण की प्रतियोगिता मे भाग लेना, उनका संसार के सुख और ऐश्वर्य त्यागने का दृश्य, और उनका सुजाता के व्रत के पश्चात् दूध और चावल ग्रहण करने के समय की पत्थर मे अंकित प्रतिमाएँ, एक-एक कर प्रत्यक्ष मूर्तिमान-सी होने लगीं।

सामने ऊपर घटा छँटने लगी थी। पश्चिम दिशा मे सूर्य झांकने लगा

था और पूर्व की ओर आकाश मे इन्द्रधनुष का बड़ा अर्द्ध-गोलाकार रंग भर रहा था। मैंने नन्दलाल से कहा, 'देखो आकाश में इन सतरंगों को। जावा मे भी स्त्रियाँ ऐसे ही रंग-बिरंगे वस्त्र पहनती हैं। हाथ के बने गहरे रंग के "केन" (एक तरह का घाघरा), "कबाजा" (एक तरह की जाकेट) और "स्तागन" (एक तरह की पेटी)।'

'मैं भी किसी दिन ये देश देखूंगा—कैसे रंगीन और कैसे मनमोहक!' नन्दलाल बच्चों की तरह कहने लगा।

३

जीवन के उन क्षणों मे भी कैसी मधुरता है जब समय की द्रुतगामी गति का उल्लंघन कर मन बीती हुई अनुभूतियो की झाँकी लेने लगता है। धुँधले, भूले हुए स्वप्नों को सजीव करना चाहता है। पथिक का आँचल जैसे मग के कण्टकों में फिर-फिर ऐसे उलझ जाए कि बरबस उसे मुड़कर बारम्बार देखना पड़ता हो। वह अपने पीछे छूटे हुए पद-चिह्नों को ढूँढने लगता है। आयु के पलों के बीतने पर हृदय की उत्कण्ठा बिछुडी हुई मंजिल पर पहुँचने की होती है। जिन्दगी के पतझड़ में वसन्त के रंग-बिरंगे प्रसून प्रस्फुटित करने की इच्छा, और ढलती सन्ध्या मे ऊषा की लाली समाविष्ट कर डालने की आतुरता उभरती है। संसार के कठोर यथार्थ मे आदर्शों के सुखद स्वप्न कोमल रेशमी धागों मे आन्दोलित होने लगते हैं। यह भावना कवियों में ही नही होती वरन् युद्ध-स्थल मे घोर संघर्ष करने वाले सैनिकों के शुष्क जीवन में भी कभी फूट पडती है। शायद यही मानसिक स्थिति उस समय हवलदार मेजर गुरुदयालसिंह की रही हो जब वह उस शाम अपने अनुभवों को दोहरा रहा था। वे सच्चे और ठोस अनुभव जो सिंगापुर के रणस्थल में उसे प्राप्त हुए थे। उसने कहा, 'सिंगापुर के जंग की कहानी दिलचस्प भी है और भयानक भी।' उसका चेहरा सचमुच भयानक बन गया। आँखों के लाल डोरों मे रक्त चढ़ आया। दाढ़ी के बाल भालों की नोकों की तरह खड़े होने लगे। मुख की आकृति गम्भीर हो

'छोड़ो इन झंझटों को। असली बात बोलो गुरुदयालसिंह।' कैप्टेन नन्दलाल शाह ने समझाकर कहा।

'हाँ। तो सिंगापुर में बड़ी फौलादी तोपें ईंट और पत्थर के मजबूत मोर्चों में मुस्तकिल तौर पर जमाकर लगा दी गई थीं। अंग्रेज जनरलों ने अपनी समझ में बहुत कड़ी नाकाबन्दी की थी, पर वह कारगर साबित नहीं हुई।'

'यह कैसे ?' एक नायक ने अचम्भे में प्रश्न किया।

गुरुदयालसिंह ने अपना साफा सँभाला, आँखें सिकोड़ लीं। उसके माथे पर कई सलवटें पड गईं। मालूम होने लगा जैसे वह बीते हुए क्षणों में छिपा कोई सत्य अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से खोज निकालेगा। वह कहने लगा, 'वे बड़ी तोपें सिर्फ समुद्र की ओर निशान लगा सकती थीं। यह मजबूती फौजी कमजोरी बन गई। जापानियों को यहाँ का सब पता था। इसीलिए उन्होंने उत्तरी मलाया पर पहले कब्जा कर लिया और वहाँ से पैदल फौजों ने सिंगापुर पर हमला बोल दिया। दुश्मन समुद्र के रास्ते से बिलकुल नहीं आया। वे बड़ी तोपें बेकार रहीं क्योंकि पीछे घुमाई नहीं जा सकती थीं। जिधर उनका निशाना लग सकता था उधर दुश्मन नहीं था। कैसी यह चालाकी थी और कैसी यह आँख-मिचौनी !' गुरुदयालसिंह ने सचमुच अपनी आँखें मिचकाकर कहा।

मैंने देखा, सुननेवालों के चेहरों पर आश्चर्य और उत्सुकता। किसी ने कहा, 'हवलदार मेजर साहब ने क्या फौजी पेचीदगी और लड़ाई की कमजोरी पकड़ी है !'

वह कुछ प्रसन्न हुआ और कुछ झेंप गया। फैलती हुई मुस्कराहट उसकी घनी दाढ़ी-मूँछों में समा गई। ठीक वैसी ही मुस्कराहट—सहज सहानुभूति-भरी मीठी मुस्कराहट, जो मेरे मन-पट पर अमर हो चुकी थी। सहसा मेरी आँखों के आगे सिंगापुर के घमासान युद्ध के चित्र चलने लगे। मैं भी तो वहाँ समर में उतरा था। मैंने भी तो जापानियों से मुठभेड़ की थी। सिंगापुर के द्वीप और मलाया से नाता जोड़नेवाला समुद्र पर बना

मजबूत लम्बा बाँध ही तो युद्ध का निर्णय-स्थल था। जापानी सैनिक आगे बढ़ रहे थे। हम सब उनको वहाँ रोकना चाहते थे, जिससे सिंगापुर खाली करने के लिए कुछ समय मिल सके। दुश्मन के पैदल सैनिकों के जत्थे आगे बढ़ते। ऊपर से जापानी हवाई जहाज गोले बरसाते। वहाँ मौत मुँह बाए खड़ी थी और सैकड़ों जवानों को निगल रही थी। अचानक कुछ दूर पर धड़-से आवाज हुई और मेरे बाएँ बाजू में चहकता हुआ बिजली का टुकड़ा जैसे आसमान से टूटकर पार हो गया। दूसरे ही क्षण मालूम हुआ कि राइफिल की गोली पार हो चुकी है। मैंने दूसरे हाथ से बाजू थामा, पर खून का फव्वारा क्यों बन्द होने लगा ! मैं एक ओर गिरने लगा। मालूम होता कि मेरी चेतन-शक्ति भी रक्त के साथ बही जा रही है। आँखों के आगे धुन्ध छाने लगी। उस धुन्ध को चीरता हुआ गुरुदयालसिंह का केशों और दाढ़ी-मूँछवाला चेहरा कितना बड़ा होता हुआ मालूम दिया। उसने अपना साफा उतारकर एक बड़ी पट्टी चीरी और मेरे बाजू के घाव पर कसकर बाँधने लगा। जैसे-जैसे वह पट्टी बाँधता, वैसे-वैसे ही मेरी अर्ध-सुप्त चेतना पर उसकी समवेदना-युक्त मधुर मुस्कान अंकित होती जाती। मैं शायद अचेत हो गया, पर इस मुस्कान की रेखाएँ इतनी गहरी हो गईं कि गुरु-दयालसिंह की इस समय की मुस्कान में मैंने ठीक वही समानता पाई और उसने मेरी यह स्मृति जागृत कर दी। मैं कमीज के ऊपर से ही अपने सूखे हुए पुराने घाव को उँगलियों से टटोलने लगा।

'सिंगापुर का जंग तो बड़े काँटे का जंग रहा होगा हवलदार मेजर साहब ?' किसी ने कहा।

'उस जंग का क्या कहना ! वह काँटे का नहीं, ठण्डी स्टील की नुकीली बैनेटों का द्वन्द्व था। जिसको मौका मिलता वह ठण्डी नुकीली धार से दुश्मन का गर्म खून बहा देता। जापानी अजीब आवाजें करते : 'कौन-चिकु-सो' (जिसका अर्थ है यह पातकी पुरुष), 'बा-आ-आ-आ-'। हम चिल्लाते, 'जै बजरंग बली की' 'जै शिवाजी महाराज की' 'बोल फ़तेह जी खालसा'। मैंने जब एक जापानी सैनिक का पेट अपनी बैनेट से चीर डाला

तो वह ओ-का-सा-न—ओ-का-सा-न (हे माँ-हे माँ) कराहते-कराहते धरती माँ की गोद मे सदा के लिए सो गया।'

'हवलदार मेजर साहब के तभी तो बाजू गठे हुए हैं। बैनेट चलाते-चलाते फ़ौलाद हो गए है।' एक ने प्रशंसा की।

'पर शेर की-सी हिम्मत के साथ-साथ दिल कमल के फूल की तरह नरम है।' दूसरे ने कहा।

'लेकिन वह नरमी हम सबके लिए, दुश्मन के लिए नही।' तीसरा बोला।

'क्यों हवलदार मेजर साहब ? इसके मानी तो यह है कि वह लड़ाई जंगली जानवरो की-सी रही होगी।' चौथे ने सवाल किया।

'तुम ठीक कहते हो। मलाया के जंगलों मे हम जंगली तेंदुओं और भालुओं की तरह जापानियों से भिड़े थे। जिसका पजा पहले पड़ा उसीने दुश्मन का मास चीर डाला। घायल, खून से लथपथ लोग सैकडों की तादाद मे थे। किसी का सर से धड़ अलग, किसी का धड़ बाजू-विहीन और किसी की टाँगें दूर कटी हुई। उस वक्त मालूम हुआ कि तलवार और छुरा चलाने के फन की जरूरत आजकल के जग मे भी होती है। अगर इनके चलाने की आदत न रहे तो शायद लोहे की पैनी बैनेट भी अपना काम न कर सके।' गुरुदयालसिंह ने कहा।

डेक पर एक ओर लोहे का मुड़ा हुआ नुकीला लंगर पड़ा था। कुछ मोटी जंजीरें एक सिरे पर भारी अकेले लोहे के छोटे खम्भे मे लिपटी थी। मेरी उँगलियाँ रेलिंग का सहारा ले रही थीं जिसकी ठंडक मेरे शरीर में उँगलियों के सिरों मे से होकर घुसी जा रही थी।

गुरुदयालसिंह कहता जा रहा था, 'जवानो, देखो लोहे के खम्भे को। वह अकेला खड़ा है—ठण्डा, मजबूत और स्थिर। ऐसे ही हम भी मे खड़े थे। मरघट मे जैसे जल्लाद। स्नेह की शृंखलाओं से मुक्त हाथ मे लिए, लोहू के प्यासे।' वह कुछ रुककर अपने दाहिने हाथ पर ताव देकर अपनी जीभ से होठों को चाटकर कहने लगा,

सब्ज जमीन का वह चप्पा मुर्दों से खचाखच भरने लगा। फिर भी हम सब जो जीवित बचे थे जिन्दा दुश्मन को मुर्दा बनाना चाहते थे। दिमाग इसी काम में मशगूल और दिल संग की तरह कड़ा। आदमी के सर पर हैवान सवार था।'

'मगर गुरुदयालसिंह उस वक्त भी आदमी के आदमी ही रहे। हैवान नही।' मैंने अपने बाजू के घाव को सहलाते हुए कहा। गुरुदयाल ने मेरी ओर देखा। शायद उसे पुरानी बात याद आ गई। वह कुछ झेंपकर, कुछ हँसकर कहने लगा, 'मेजर साहब ! अपने साथियों को बचाने की ख्वाहिश किसे नही होती ? दुश्मन के खिलाफ खूँख्वारी और अपने साथियो के लिए हमदर्दी अपने-आप आ जाती है। ये दोनों हविस एक ही दिल मे सिमट जाती है।'

फिर वार्त्तालाप युद्ध की कर्कशता से हटकर शान्ति-काल मे सैनिकों के जीवन की मधुरता और निश्चिन्तता की ओर मुड गया। सब हँसने लगे, चहकने लगे। सब अपनी अनुभूतियों की लहरों पर उतराने लगे—इस तैरते हुए जल-पोत की भाँति।

०

वह शाम कुछ धुँधली हो चली थी—बुझती हुई ज्योति की क्षीण आभा को घने बादलो ने अपने मे छिपा लिया। मालूम होता जैसे भीगा काला, भूरा विशाल कम्बल ऊपर फैला हो, जिसमे से छनकर छोटी बूँदें गिर रही हों। पानी की फुहार कभी हल्की हो जाती और कभी तेज।

लान्स नायक हिम्मतसिंह अपनी कहानी सुना रहा था। उसकी मनोभावनाओ का रथ शायद भारत के सुदूर पूर्वी भाग के कोहिमा क्षेत्र के दलदल मे फँस रहा था जब उसने कहा, 'भारत का ऊपरी भाग, जिसमें मणिपुर का इलाका शामिल था, बरसात मे एक समस्या बन गई। चारों ओर पानी, दलदल और घना जंगल, जहाँ चलना मुश्किल। सब जंगली रास्ते पानी में डूबने लगे। सिर्फ दीमापुर और कोहिमा की सडक हमारी जिन्दगी का साधन थी। इसी सड़क से हमारी फौजों को रसद और सामान पहुँचाया

जाता। यह सड़क भी कहीं-कहीं पानी से भर जाती। छप-छपकर आदमी और खच्चर चलते। लम्बे वृक्षों के पत्तों में से सर-सर खड़-खड़ तेज हवा चलती और घनी बौछार गिरती। खच्चर चलानेवाले और रात में गश्त करनेवाले सैनिक, पीठ झुकाए, सर नीचा किए, फिर भी चलते रहते। यहाँ तक कि खच्चर भी न कान फड़काते और न सर हिलाते। वे अपनी गर्दन लम्बी कर लेते और उनके कान ऊपर उठने के बजाय गधों की तरह कुछ नीचे और कुछ चौड़े-से हो जाते। सबकी पीठों पर तेज पानी की मार कोड़ों की तरह पड़ती।'

'इसीलिए शायद तुम्हारी कमर भी कमान-सी झुकी रह गई है मणिपुर और इम्फाल में बोझ ढोते-ढोते। देखो यह बेचारा कैसा हो गया है—सूखे झुके बेंत की तरह।' हवलदार मार्टिन गुरुंग ने शरारत से भरी आँखें सिकोड़कर कहा।

'मेरी कमर कहाँ झुकी है? यह शेरों की तरह पतली और मजबूत है, हवलदारजी!' हिम्मतसिंह ने अपनी कमर के खम को अकड़कर सीधा करना चाहा। सब हँसने लगे। वह कहने लगा, 'आप लोग हँसते क्या हैं? वहाँ की परेशानियाँ वही जानते हैं जिन्होंने वहाँ युद्ध लड़ा है। चलते-चलते थकान और ऊपर से जापानी हवाई जहाजों की गोलियाँ और बम। कई रात हम चलते रहे, जैसे पैरों में कोई मशीन लग गई हो। शरीर चकनाचूर। जी चाहता कि उन जंगलों में किसी गीली झाड़ियों की ओट में हम पड़े सोते रहें। पीठ पर भारी "पैक" का बोझ और कन्धे में लटकी राइ-फिल। हर चीज भारी मालूम होती। यहाँ तक कि पलक भी भारी हो मुँदने लगते। पर पैर चलते रहते।'

'वहाँ के युद्ध का असर सब पर पड़ गया है। देखो गोपाल नायडू इसीलिए काँपने लगा है। शायद वहाँ की थकान अभी तक नहीं उतरी।' गुरुंग ने सैनिक गोपाल नायडू को देखा।

वह एक ओर सहारा लिए आँखें बन्द किए जैसे किसी चिन्ता में पड़ा था। वह हड़बड़ाकर जाग पड़ा और कहने लगा, 'मैं सो नहीं रहा था। सब

सुन रहा था। हाँ, नायकजी कह रहे थे कि हम कोहिमा में थे। वहाँ की सडकों पर।'

सब लोग यह सुनकर ठहाका मारकर हँस पड़े। नायडू अपनी झेंप मिटाने को अपनी आँखें हथेलियों से मलने लगा।

'अरे नायडू ! मैं कोहिमा की सडकों की नही वहाँ के जंगलों की बात कर रहा था। जापानियों की बमबारी के बारे में कह रहा था।' हिम्मतसिंह बोला।

'और हमारे हवाई जहाज कहाँ चले गए थे ? जापानियों का मुकाबला क्या हवाई ताकत से नही हुआ ?' एक ने प्रश्न किया।

अब तक सैनिक नायडू सतर्क हो गया था। वह चट से कहने लगा, 'अपने हवाई जहाज कहाँ से आते ? अपना पलेल का हवाई अड्डा तो जापानियो के हाथों मे आ गया था।'

'नायडू ठीक कहता है। दीमापुर और कोहिमा की सड़क के सैंतीसवें और अडतीसवें मील के बीच का भाग जापानी ले चुके थे। उधर इम्फाल को उन्होने तीन तरफ से घेर लिया था। हमारी बुरी हालत होने लगी थी।'

'तब तो अपनी फौजों का काम मुश्किल हो गया होगा उस पहाडी और दलदल के इलाके मे।' किसी ने कहा।

नायक हिम्मतसिंह अपनी पतली ऊँची गर्दन और ऊपर उठाकर सारस की तरह सागर की ओर देखने लगा। उसके गले की नली का तिकोना उभार और आगे निकल आया।

इस समय ऊँची उठती, गुर्राती लहरें हमारे जहाज से टक्कर ले रही थी। वह कहने लगा, 'ठीक इसी तरह जापान की विजय की लहरें आगे बढी आ रही थी। बर्मा और आराकान पर अधिकार कर वे भारतवर्ष के पूर्वी प्रदेशों में घुसने लगे थे। टिड्डिम और इम्फाल की सडक पर वे बिशनपुर तक बढ आए। उधर उनकी जीत का बढता और फैलता सैलाब और इधर ऊपर वर्षा के देवता का कोप। हम सब दो पाटों के बीच में फँसे थे !'

'दो पाटन के बीच में साबित बचा न कोय—यह तो किसी कवि ने भी

कहा है।' एक ने हाँ-में-हाँ मिलाते हुए कहा।

'पर हम इन दोनों पाटों के बीच में भी जिन्दा बच निकले, सिर्फ अपने जवानों की दिलेरी की बदौलत।' हिम्मतसिंह यह कहते-कहते किसी विचार में निमग्न हो गया। दोनों झुके कन्धों को उसने और अन्दर खींच लिया। मालूम होता कि वह कपोत की भाँति पंख सिकोड़कर उड़ने की तैयारी कर रहा हो। छोटे कटे बालों के नीचे आगे को निकला माथा चमकने लगा। पिचके गालों की खिंची खाल और उठी हड्डियों के बीच दोनों ओर दो रेखाएँ उभर आईं। पतली ऊँची गर्दन पर लम्बे मुँह की आगे निकली हुई ठोड़ी नाक की ओर कुछ और ऊपर उठ गई। वक्रता का वह समूह था। लम्बी टाँगों पर उसका दुबला शरीर ऐसा मालूम देता जैसे वह रेगिस्तानी ऊँट हो। वह राजस्थान के रेगिस्तान का राजपूत तो था ही, जिसके चीमड़ हाड़-मांस ने उसे कठिन-से-कठिन कार्य करने के उपयुक्त बना दिया। बिना खाना खाए और पानी पिए मीलों चलने की ऊँट की अनुपम शक्ति भी उसमें विद्यमान थी। इसीलिए राजपूत रेजीमेंट में से खासतौर से छाँटकर यह कार्य-परायणता की जगह रखा जाता। उसकी बाह्य असुन्दरता उसके आत्मिक बल को न छिपा सकी थी। उसकी खिंची हुई खाल उसके टेढ़े-मेढ़े ढाँचे पर उस मृदंग की भाँति मढ़ी थी जिसके अंतर से देश-भक्ति की झंकार निकलती। अपने देश के गौरव की रक्षा करने ही तो वह रेगिस्तान का निवासी आसाम के गीले जंगलों में जापानियों से संघर्ष कर रहा था।

उसने अपने बड़े दाँतों को कसकर भींचा और कहना शुरू किया, 'हम लोग एक जगह मोर्चा बनाकर डट गये। वहाँ से शत्रु की पूरी शक्ति भी हमको नहीं डिगा सकी। कोहिमा के आस-पास पहाड़ियाँ पाँच-छः हजार फुट ऊँची हैं जिनकी नीची तराई में बेहद घने जंगल—इतने घने कि दिन में भी रात मालूम होती। हमारा बैटेलियन हैडक्वार्टर ऐसी ही एक छिपी जगह था। बाँस, पत्ती और घास के घोंसले हमने रहने के लिए बना लिए, पर अधिकतर तो हम लोगों को रात पहाड़ियों की खोह में, या पेड़ पर, जंगल में छुप-छिपकर चलते-चलते बितानी पड़ती। ऊपर से पानी

और नीचे छप-छप हम चलते। अगर कभी वहीं सुस्ताने को बैठते तो कई जोक हमारे लग जाती। एक बार एक जोंक मेरी गर्दन के पीछे लग गई और खून चूस-चूसकर फूलने लगी। मेरे एक साथी ने उसे बड़ी मुश्किल से छुड़ाया।' उसने कमीज का कालर हटाकर वह जगह दिखाई जहाँ से जोंक ने उसका रक्त पिया था।

'वह जोंक आसानी से कैसे छूटती। उसमे तो बहादुर राजपूत का खून पहुँच चुका था।' हवलदार मेजर गुरुदयालसिंह ने कहा।

'और यह देखो।' नाकिन गुरग एक मरे मच्छर को अपनी हथेली पर रखकर बोला, 'यह मेरे बाजू का खून पी रहा था। मुझे मालूम होने लगा कि शायद मुझे भी कोई जोक चिपट गई है। पर मैंने इसे मार डाला।'

'आप नैपाल के बहादुर है। मच्छर का शिकार करने वाले।' किसी ने कहा। सब हँस पडे। हिम्मतसिंह ने भी अपनी खीसें निपोर दी। कुछ रुककर वह फिर कहने लगा :

'हम मच्छरों, कीडो-मकोडो के देश मे तो थे ही। एक अँधेरी रात को हमारा प्लैटून "रैकी ड्यूटी" (दुश्मन की खोज-बीन) पर भेजा गया। बरसात की रात थी और जगह-जगह पानी भरा था। एक घने पेड की गहरी काली छाया मे जब हम थककर रुके और आगे बढ़ने ही वाले थे कि एक ओर से अचानक पत्तों मे खड़खड़ाहट हुई और कई बिजलियाँ-सी हम पर टूट पड़ी। तड़-से हमारे प्लैटून कमाण्डर के सीने पर गोली लगी। फिर तड़तडाहट और उसके बाद गहरी शाति। मैंने उसके सीने के घाव को ज़ोर से अपनी हथेली से दबाया। वहाँ तो गर्म खून का झरना बह रहा था। उस बहादुर ने ज़ोर से आह भी न की, इस डर से कि कही दुश्मन को हमारा पता न चल जाए। तेज हवा पेड के पत्तों को झकझोरकर साँय-साँय चल रही थी। उस साँय-साँय में अपना कान उसके मुँह के पास रखकर मैंने केवल यही फुसफुसाहट सुनी, "बस...करो...बस...करो ..मु...झे...जा ने दो...तु...म...स...ब...अ...म...र...र...हो...मैं...मैं...च...ला ...च...ला" कहते-कहते मेरी गोद मे उसका सर लुढक गया और वह

वीर सचमुच चल बसा।' हिम्मतसिंह की आँखों की कोरों से छलकता पानी उसके पूरे नेत्रों पर छा गया।

गुरुदयालसिंह तसल्ली देते हुए बोला, 'हिम्मतसिंह ! जिन्दगी और मौत जंग के मैदान मे दिन और रात की तरह है। उससे घबराना क्या ? बहादुर जिन्दा रहा तो आगे बढ़ता गया और मौत की नीद मे सोया तो अपने मुल्क के लिए कुर्बान होकर अमर हो गया।'

'मृत्यु जीवन की अन्तिम चरम सीमा है, जिसके पार सबको जाना है। जो इस सीमा तक वीरता से पहुँचा उसकी सबने सराहना की। और जो घिसटता हुआ, बिलखता हुआ पहुँचा उसको सबने धिक्कारा।' कैप्टेन नन्दलाल शाह ने एक दार्शनिक की भाँति यह बात कही।

'कैप्टेन साहब ! जिन्दगी और मौत का ऐसा नजारा मैंने उस रात देखा। अपने प्लैटून कमाण्डर की जान जाने के बाद हम लोगों ने इरादा कर लिया कि उस पेड को, जहाँ से गोलियाँ चली थी, हम लोग रात-भर घेरे रहेंगे। हम चुपचाप ज़मीन से चिपटे पड़े रहे। जब सुबह का झुटपुटा हुआ तो पेड के पत्तों मे से फिर गोली की बौछार हुई। इस बार हममे से कोई भी घायल नही हुआ क्योंकि हमने बचाव के लिए आड ले ली थी। हम चौकन्ने हो गये। उस समय का इन्तजार करने लगे कि कब जापानी बन्दूकची पेड़के नीचे उतरते हैं। थोड़ी देर में पत्तों में खड़बड़ हुई और दो जापानी डाल की टहनी पकड़ते हुए पेड से उतरने लगे। हमारे लिए यह मौका अच्छा था। जैसे ही उनमे से जो युवक था, लद-से एक बड़ी डाल से नीचे कूदा और तेजी से भागा, प्लैटून के कुछ जवानों ने फायर किया। उसकी बाईं टाँग में गोली लगी और वह गिर गया। कुछ लोग उसकी ओर लपके और उसको घेरकर बन्दी कर लिया।'

हिम्मतसिंह ने लम्बी साँस लेकर बताया कि दूसरा जापानी बन्दूकची अधेड़ था। पेड के नीचे आते ही उसने अपनी राइफिल डाल दी। वह पकड़ लिया गया और उसकी तलाशी शुरू हुई। जब तक लोग इस में उलझे थे, पास के दूसरे बड़े पेड़ से अचानक एक तीसरा जापा

ऊँची डाल से एक ओर को कूदा और अपनी राइफिल से फायर करता हुआ घने जंगल मे अदृश्य हो गया। बहुत पीछा करने पर भी वह हाथ न आ सका।

'इधर अधेड जापानी ने एकाएक जोर से शोर मचाया और अपनी पेटी मे से एक कागज निकाल, उसे मरोड़ मुँह मे रखकर निगल गया। दूसरे क्षण ही उसने अपनी तेज कुकरी से वक्ष से नाभी तक अपना पेट चीर डाला। लोहू और मास के साथ उसकी अंतडियाँ बाहर को आने लगी। वह जापानी भाषा मे चिल्लाने लगा, "तेनो...हेइका...बेन्जाई...तेनो...हेइका ...बेन्जाई...बेन्जाई...बे...न्जाई...बे...न्जा...ई..." (जिसका अर्थ है जापान का सम्राट् अमर रहे)। उसकी पतली छोटी आँखों की पुतलियाँ पलटने लगी, पर "बेन्जाई" शब्द अन्तिम काल तक होंठों से निकलता रहा। उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। लोगों ने उसके मुँह से कागज के कुछ टुकड़े बड़ी मुश्किल से निकाले। उनमें से कुछ पर कुछ नक्शा-सा बना था और जापानी भाषा मे कुछ लिखा था। उन कागज के टुकडों से किसी खास बात का पता न चल सका। शायद वे जापानी स्नाइपर भारत की सेना के बारे मे जानकारी करने को वहाँ छिपे थे।'

लान्स नायक ने अपनी कटी हुई चौड़ी मूँछों पर हाथ फेरते हुए कहा, 'हम लोग दो शव और एक लँगड़े जापानी को लेकर अपने कैम्प वापस लौटे। हमारा प्लैटून कमाण्डर दुश्मन की गोली का निशाना बना था। अधेड़ जापानी सैनिक ने अपने सम्राट् के लिए "हराकिरी" (आत्म-हत्या) की थी। कैसा भयावना वह दृश्य था! हवलदार मेजर साहब! वहाँ मालूम हुआ कि जापानियों के लिए मौत एक खेल है। चोट खाये हुए जापानी ने कोई बात नही बताई। वह गूँगा-सा बना चुपचाप हमारे साथ रहा। हमने उसे *बैटेलियन हेड-क्वार्टर* पहुँचा दिया।'

'ऐसी बहादुरी के करिश्मों से तो तुम लोगों ने जापानियों को पीछे हटाना शुरू कर दिया हिम्मतसिंह! तभी तो वह इरावदी नदी के तट पर हारकर, मिक्टीला (Miktila) और मोलमीन (Molmein) युद्ध में

परास्त होकर बर्मा से भी खदेड़े गए। वे पीले रंग के सैनिक और हम काले रंगवाले योद्धा। पीले पर काला रंग क्यों न चढ़ता ?'

'सूरदास काली कमली पै चढ़ै न दूजो रंग।' सैनिक मुरलीधर पाण्डे ने मुस्कराकर कहा।

यह बात सुनकर सब प्रसन्न हो गए।

लान्स नायक हिम्मतसिंह के टेढ़े-मेढ़े दाँत होंठों के बाहर बिखरे-से, उसके सूखे चेहरे की हँसी को और भी विनोदपूर्ण बना रहे थे।

वीरता का यह अनुभूतिपूर्ण दृष्टान्त उसने सुलभ चतुराई से सुना डाला।

४

उस शाम हमारी कम्पनी के सैनिक मुरलीधर पाण्डे ने अपनी वंशी की मोहिनी से सबको मन्त्र-मुग्ध कर दिया। जब उसने बाँसुरी बजाना बन्द किया तब भी उसकी मधुर लय मानो आकाश को भेदते हुए उसमें समाने लगी। दूर फैलती हुई वह स्वर-लहरी अब भी गूँज रही थी। मथुरा का वह निवासी मानो लोगों के मन चुराने में उतना ही निपुण और अभ्यस्त था जितना उसका नामराशि आराध्य देव।

उसने फिर मल्हार की तान छेड़ी। उसके गौरवर्ण चेहरे पर गोल गाल ऊपर उठकर चमकने लगे। होंठ चौड़े हो फैल गए, सर हिलने लगा, काले घुँघराले बाल माथे पर लटक गए, आँखें बन्द हो गईं और गले की नसें खिंच गईं। वह तन्मय होकर गाने लगा। रह-रहकर अपना पैर हिलाकर वह ताल देता। उसके राग के स्वर शायद इन्द्रलोक तक पहुँच गए थे। तभी तो चारों ओर से घटाएँ घिरने लगीं और बादल उठने लगे। कहते हैं कि तानसेन ने जब दीपक राग गाया था तो दीप स्वयं जलने लगे थे, पर यहाँ तो मुरलीधर ने अपने मल्हार से जलद में प्रचण्ड गति ला दी। मन्थर गतिवाली बयार में उग्रता आने लगी और लहरों में उभार। दूर पर सफेद डैने फैलाए 'सी-गल' हवा को काटते हुए दूर दिशा में ओझल होने लगे।

बिखरे काले बादल सिमटने लगे, एक-दूसरे से टकराने लगे। अचानक बिजली कौंधी और जैसे हमारे जहाज की ओर लपकी। फिर घोर गर्जन और तड़ित की तड़तड़ाहट। मूसलाधार वर्षा होने लगी। गाना बन्द हो गया, पर मल्हार के स्वर क्षितिज पर छा गए।

जंग की बातें फिर छिड़ गईं। मराठा पल्टन के नायक नरसिंहराव ने अराकान के मायेबोन के युद्ध का वृत्तान्त कहना शुरू किया और मैं आँखें बन्दकर उस समय की स्मृति मे डूबने लगा। मैं भी तो उस युद्ध मे लड़ा था। *मैंने भी तो वहाँ ऐसी मुसीबतों का सामना किया था जिससे जिन्दगी* में अडिग दृढ़ता आ गई थी। कठोर यथार्थ और सत्यो को देखते-देखते मानसिक स्थिति ऐसी हो चुकी थी जहाँ मानव का मरना-जीना मन को अप्रभावित छोड़ देता। रण के बीर साथी मिट्टी के खिलौने-से टूटकर बिखर जाते। शायद बच्चो को अपने प्यारे खिलौनो के टूटने का कहीं अधिक क्षोभ होता होगा, पर हम निर्मम, पाषाण-हृदय वीरगति पानेवाले अपने सैनिकों के लिए दो बूँद आँसू भी न बहाते। वहाँ साथियो के प्रति सहृदयता के स्थान पर शत्रु के लिए घृणा और विरोध की भावना अधिक उत्कट थी। हम सब नृशंस हत्या के उल्लंग नृत्य के पात्र थे।

नायक नरसिंहराव कहने लगा, 'जापानी फौजें पीछे हटने लगी थीं। उन्होंने अराकान का बहुत-सा भाग खाली कर दिया था। पर मायेबोन प्रायद्वीप में उनका मोर्चा मजबूत था। अकयाब से लगभग पैंतीस मील दूर स्थित यह स्थान जंग के इतिहास मे अमर हो चुका था। समुद्र के किनारे की हरी ऊँची उठती हुई पहाड़ियों में जगह-जगह जापानी छिपे थे। उनको वहाँ से निकाल भगाने का खतरनाक काम फौज के पन्द्रहवें कोर (XV Corps) को मिला था। जनवरी सन् १९४५ में वहाँ हमला बोल दिया गया। हमारे मेजर साहब भी हमारे साथ थे।' उसने मेरी ओर इशारा करते हुए कहा। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में चमक और पतले छोटे होंठों पर मुस्कान झलकने लगी। उसने गहरी साँस खींचकर अपने सीने को ऐसे फुलाया जैसे कोई पहलवान कुश्ती लड़ने के पहले तैयारी करता हो। दोनों

जहाजों में दिन-भर बनता। रात में चुपके-चुपके छोटी किश्तियों में लादकर, किनारे के रेतीले मैदान को पारकर हर खाई मे पहुँचाया जाता। अक्सर खाना ले जाने वाले जापानी गोली के शिकार हो जाते और इसमें से कुछ को भूखा और प्यासा रहना पड़ता। मुझे ऐसा अनुभव हुआ था जब दो दिन तक भूखा रहना पड़ा था। पानी भी समाप्त हो चुका था और हम सूखे होंठों पर गीली जीभ फेरकर उनको तर कर रहे थे। गले में खुश्की ऊपर रेंगने लगी थी। अचानक दैवी लीला से प्राण बचे। काले बादल घिरने लगे और लगभग एक घण्टे वर्षा हुई। अपनी खाइयों में हम आकाश की ओर मुंह खोले पड़े रहे। अपनी-अपनी 'स्टील-हेलमेट (लोहे की टोपी) को दोनों हाथो मे साधे उसमें पानी जमा करते रहे। वह जल वर्षा नहीं, अमृत-वृष्टि थी।

नरसिंहराव ने बताया कैसे जब उसके मोर्चे मे तीन दिन तक उसे पानी नहीं मिला, वह रात के अँधेरे में बाहर निकलकर स्वयं जल की खोज करने लगा। कुछ खण्डित शवों मे से रास्ता टटोलते हुए, कुछ छिन्न-भिन्न मूर्छित सैनिकों की अन्तिम कराह सुनते वह आगे बढ़ा। एक मृतक सैनिक के ठण्डे शरीर से वह टकराया। उसका हाथ उस सैनिक की कमर मे लटकती हुई पानी की बोतल मे लगा। वह भारी थी, जल से भरी थी। उसने चट से वह बोतल खीच ली। वहीं घुटने टेक, मुंह लगाकर पानी पिया। बोतल हाथ मे ले अपने मोर्चे की ओर भागा। तड़-से एक गोली उसकी बाईं पिंडली में लगी। वह लड़खड़ाता हुआ अपनी खाई में आ गिरा। उसके साथियों ने उसकी मरहम-पट्टी की, देख-भाल की। वह अपने गोली के घाव को दिखाते हुए कहने लगा, 'अगर गोली कमर के ऊपर लगी होती तो यह कहानी सुनानेवाला यहाँ न होता।'

'ऐसी अनहोनी बात क्यों होती? शेर तो गोली लगने के बाद और खूंखार हो जाता है। ऐसे ही घायल शेर की तरह तुमने जापानियों पर झपट की होगी नरसिंहराव!' हवलदार मेजर गुरदयालसिंह ने मुस्कराते हुए कहा, 'हर गोली अपनी निर्धारित जगह ही पड़ेगी। भगवान जैसे मनुष्य

का सघन अँधेरा, जहाँ न दिन का रात से सम्पर्क और न उससे विछोह, घोर वर्षा ने प्रकृति के इस नियम को भी डुबो दिया था। बंकर में तिरपाल के तले सदा रात्रि का अंधकार और सदा लालटेन की विकल मन्द ज्योति। कभी पत्थर, बाँस, वल्लियों में रिसती हुई पतली जल-धारा खाई को भिगोती रहती और उसमे से उठती हुई पाताल-गंगा से जा मिलती। यहाँ दोनो का संगम होता। अदृश्य सरस्वती भी यहाँ तिरपाल के छिद्रों मे दर्शन देने लगती और सैनिक मिट्टी से लथपथ भारी बूटो का बोझ उठाकर, पैरो को सिकोड़कर पतले तख्तो पर टँगे रहते। नीचे कभी झींगुर झनझनाते तो कभी मेढक टर्राते। सब कपड़े और शरीर भीगने से आत्मा तक तर रहती। खाई मे दलदल हो जाता। इस गीलेपन मे गर्मी लाने के लिए लोग अपनी सीली हुई नम सिगरेट पीते। भीगी हुई माचिस जल न पाती। उसकी सैकड़ो तीली माचिस के गीले मसाले पर रगड़-रगड़ के सब रह जाते। आखिर मे निराश हो कोई लालटेन की चिमनी थोडी ऊपर उठाकर उसकी जलती बत्ती से सिगरेट सुलगाता। फिर क्या, जैसे नई जिन्दगी मिल जाती। सब उसी एक जलती सिगरेट से अपनी सिगरेट का एक सिरा होंठों मे दबाकर कश लेकर दूसरे सिरे को चहकाते। बारी-बारी से सबकी सिगरेटें जलती। कश पर कश खीचे जाते और खाई की गीली मिट्टी की गन्ध मे, मिट्टी के तेल से टिमटिमाती लैम्प की बदबू समाने लगती और वहाँ सिगरेटो का धुआँ भारी हो तिरपाल के अन्दर घुमड़ने लगता। कभी दम घुटने लगता, और बरसात होते हुए भी लोग तिरपाल को राइफिल की बैनेट से या तो ऊँचा उठाते या एक ओर हटा देते।

इस समय मैं अपनी सिगरेट को जलाने का प्रयास कर रहा था। मैं माचिस पर कई तीलियाँ रगड़ चुका था, उनमे से कोई भी नही जली थी। माचिस को अपनी मुट्ठी मे स्पर्श कर मैंने समझा कि वह कुछ गीली हो चुकी है। मैंने कैप्टेन नन्दलाल शाह का सिगरेट-लाइटर लेकर अपनी सिगरेट जलाई। जब मुँह से निकला छल्लेदार घुँघराला धुआँ ऊपर उठने लगा तब मेरी समझ में आया कि इस समय वर्षा नही हो रही और हम लोग किसी

वह कागज सबके हाथ लगने से गीला हो गया। लोगों ने उसे मसल डाला। तस्वीर फीकी पड़ गई। वह परी परिस्तान को चली गई। हमारे बंकर में और भीगी खाइयों में भला वह क्यों रहती ?'

उसने बताया, लगभग बीस दिन तक ऐसे ही समय बीता। वर्षा की झड़ी अनवरत लगी रही। एक सुबह काली घटाओं की गड़गड़ाहट के साथ अचानक एक अद्भुत घोर गर्जन ! फिर बम फटने का और माइन विध्वंस होने का धड़ाका। सब सतर्क हो गए। दूरबीन लगाकर देखने से मालूम हुआ कि दूर पर जापानी टैंक आगे बढ़ते चले आ रहे हैं। सब युद्ध के लिए तत्पर हो गए। बंकर में सबने अपना नियत स्थान ले लिया और राइफिल और मशीनगन का निशाना भी साध लिया। पास में धड-से एक बम गिरा और फटा। गीली मिट्टी के लोंदे खाई में आ गिरे। ऊपर से बाँस-बल्ली उड़ गई, तहस-नहस हो दूर जा पड़ी। तिरपाल भी गुब्बारे की तरह कुछ ऊपर उड़कर मालूम नहीं कहाँ गायब हो गया। खाई की दीवारें आगे झुकने लगीं और उनमें लम्बी दरारें पड़ गईं। मालूम होने लगा कि वे धँसकर आपस में मिल जाएंगी। सब बंकर से बाहर निकल आए और बाँसों के झुरमुट की आड़ लेकर लेट गए।

'टैंकों की घड़घड़ाहट बिल्कुल सर पर आ गई। जो आगे पड़ता उसे वे कुचलकर पीस डालते। अब समय लड़ने का था। कुत्ते की मौत मरने का नहीं।

'मैं और मेरे साथी उठ खड़े हुए और गोली चलाना शुरू कर दिया। एक टैंक बहुत पास था और उसमें से फायर होती हुई गोलियाँ लोगों को भून रही थीं। लोग भुनगों की तरह मरकर गिर रहे थे। मैंने बाँस के ठूँठों की आड़ लेकर एक 'हैण्ड-ग्रैनेड' फेंका जो टैंक के मुहाने में से अन्दर जा गिरा। एक धड़ाका हुआ और शायद टैंक ड्राइवर वहीं खत्म हो गया होगा, क्योंकि मैंने भागते हुए जब पीछे मुड़कर एक बार देखा तब टैंक लड़खड़ाता-सा एक गहरी खाई में गिर रहा था। मैं तेज भागा और मेरा दम टूटने लगा।' कहते-कहते नाकिन गुरंग सचमुच हाँफने लगा।

ज्योति को अक्षुण्ण रखने—उसे पुनः प्रज्वलित करने की साधना में लीन।

एक दिन जब इस सुनसान और निःस्पन्द भूमि से मेरी तबीयत बहुत ऊब गई तब मैंने लहराते सागर की ओर मन चलाया। टूटे 'डाक्स' में से होता हुआ मैं किनारे पर पहुँच गया। दूर पर हरी पहाड़ियाँ और पाइन के वृक्ष मुझे आमन्त्रित-सा कर रहे थे। दिन ढल रहा था और प्रकृति की छटा निहारने को नयन आतुर थे। एक जापानी पुरुष मोटरबोट चलाने की तैयारी कर रहा था। मैं उसकी मोटर-बोट में पहले बैठ गया और फिर अभिवादन किया। वह कुछ झिझका और फिर मुस्कान की रेखा उसके मुँह पर उभर आई। मैंने पहली बार कूरे के निवासी को हँसने की चेष्टा करते देख उससे जापानी भाषा में प्रश्न कर ही तो डाला।

'आपको प्रसन्न देखकर मुझे अपार आनन्द मिल रहा है। आप यहाँ कितने दिनों से रह रहे हैं?'

'मैं तो यहाँ जन्मकाल से हूँ।' उसने छोटा-सा उत्तर दिया।

'अच्छा, तब तो आप कूरे नगर के बारे में सब-कुछ जानते होंगे?'

'क्यों नहीं! क्यों नहीं!'

'कभी यह भी उन्नतिशील स्थान रहा होगा?'

'अब भी है। बहुत उन्नतिशील, उद्योगशील!'

'पर मुझे तो यहाँ खण्डहर-ही-खण्डहर नजर आए।' मेरे मुँह से निकल गया।

'आप विदेशी हैं। सब विदेशियों की आँखों में जापान आज खण्डहर नजर आता है।'

मैं अपनी कही बात पर शर्माकर कहने लगा, 'आप बुरा मान गए! मेरा कहने का मतलब था कि यहाँ के घर अधिक संख्या में टूट-फूट गए हैं।'

'इसमें हम लोगों का क्या दोष है! यह विदेशियों की कृपा है।' उसने गम्भीर होकर उत्तर दिया।

'पर मैं वैसा विदेशी नहीं हूँ। मैं तो एशिया का रहने वाला हूँ।'

'किस देश के?'

'इंडिया, या हिन्दुस्तान का।'

'यहाँ कैसे आये ?'

'अपने देश की सेना के साथ।'

'ओह ! तो आप भी अमरीका के जरनल मेकआर्थर की फौजों के साथ हमारे देश को विदीर्ण करने आये हैं !' उसकी मुस्कराहट उसके कसकर भिचे होंठो मे समा गई। उसकी गाल की चौडी हड्डियाँ ऊपर उठ गईं और आँखें और छोटी हो गईं। उसकी मुखाकृति पर घृणा का भाव गर्दन नीचे करके बोट चलाने मे भी नहीं छिप सका। उसके उठे हुए बाजू और मज-बूत कलाइयाँ बोट को निर्धारित पथ पर लिए जा रहे थे।

मुझे आश्चर्य हुआ कि एक मोटर-बोट चलानेवाला मामूली जापानी भी विश्व की राजनीति और अमरीका के नाम से परिचित है ! मैंने बात बदलते हुए कहा, 'हम लोग तो कुछ ही दिन पहले यहाँ आये हैं। यहाँ के मामलो के बारे मे कुछ नही जानते। मैं तो यहाँ की रमणीकता मे उलझा आपकी मोटर-बोट मे तैर रहा हूँ।'

वह कुछ न बोला।

'यहाँ के दृश्य अच्छे हैं।' मैंने फिर कहा।

उसने अपनी गर्दन दूसरी ओर मोड ली। वह बोट चलाने मे व्यस्त था।

हम लोग कूरे की खाडी के एक किनारे के पास थे, जहाँ से हरी पहा-ड़ियाँ ऊपर उठी हुई बडी भली मालूम दे रही थी। दूर तक फैले हुए शान्त गहरे नीले जल-पट के अन्तर में उनकी छाया अंकित थी।

मैं कहने लगा, 'यहाँ के दृश्य अच्छे, यहाँ के लोग अच्छे !'

वह चुप रहा।

'आपका नाम जानने की मेरी इच्छा है।'

'मेरा नाम तेरुओ ओकादा है।'

'और आपका काम क्या है ?'

'मछली मारना।'

'सिर्फ मछली मारना या विदेशियों को भी पराजित करना ?'

वह हँसकर कहने लगा, 'नहीं, विदेशियों को मोटर-बोट में सैर कराना और उनके सवालों का जवाब देना।'

'श्रीमान् तेरुओ ओकादा, आप तो तीव्र बुद्धि के मछलीमार है।'

'बाहर की फौजवालों से बचकरही रहना चाहिए।' उसने कहा।

'मगर मैं तो आपके निकट आता जा रहा हूँ।'

मैंने अनुभव किया कि उसकी दृढ भाव-व्यंजना मे कभी-कभी कोमलता प्रस्फुटित हो जाती। इसीलिए मैं उस कमल की-सी कोमलता को भ्रमर की भाँति भेदकर छू लेना चाहता था।

आकाश और जल की परिधि मे अस्त होते हुए अंशुमाली का आधा गोला डूब चुका था। उसकी पिघलती स्वर्णिम आभा काँपते सलिल मे समाई जा रही थी। हम भी अब किनारे की ओर जा रहे थे।

•

कुछ ही दिनों मे हमको मालूम हो गया कि कूरे जापान की सामुद्रिक युद्ध-कला का महत्वपूर्ण केन्द्र था। विश्व-युद्ध के पहले से यहाँ पनडुब्बी (सबमेरीन) बनाई जाती। तोप के गोले ढाले जाते। बड़े-बड़े कारखाने रात-दिन चलते। चारों ओर से द्वीपों से घिरा, पर्वत-मालाओं से सुरक्षित 'इनलैंड सी' का लबालब भरा प्याला, जहाँ पनडुब्बियाँ और जापानी नाविक गोताखोरी करते। उनकी युद्ध-कला के अभ्यास का बाहर के देशों को पता भी न चलता। यहाँ से तीन मील दूर एताजिमा द्वीप पर 'जापानी ऐकेडेमी' (सामुद्रिक युद्ध-कला का शिक्षण-केन्द्र) थी, जहाँ जापानी युवक थोड़े ही काल की ट्रेनिंग के बाद जल-युद्ध के लिए सुसज्जित सैनिकों में परिणत कर दिए जाते। कूरे बन्दरगाह के 'डाक्स' भी विशाल रहे होंगे, जहाँ बड़े-से-बड़े जहाज आ सकते थे।

विगत महायुद्ध के अन्तिम काल में अमेरिका के बममारों ने कूरे परअन्धा-धुन्ध बम-वर्षा की थी। वहाँ के बहुत-से निवासियों और सैनिकों के जीवन का अनायास ही अन्त हो गया। कितने ही समुद्र की अथाह गहराइयों में समा

गए। युद्ध का यह भीषण कांड इस नगर के प्रत्येक भाग पर अंकित था।

एक दिन फिर जब खण्डहरों की इस नगरी में मेरा मन उकताने लगा, मैं स्वतः ही समुद्र के किनारे जा पहुँचा। इठलाती, अलबेली प्रभात की समीर मन को छूने लगी। दूर पर मैंने देखा, कुछ मोटर-बोट जल पर भागी जा रही थीं, कुछ चलने को तैयार और कुछ किनारे पर बँधी थीं।

तेरुओ ओकादा के साथ बोट की सैर की याद आ गई। कितनी मजेदार, मर्मस्पर्शी वह सैर थी और कैसे वाह्य रूखेपन की अस्पष्ट मधुरता का सामंजस्य लिये बोट का वह अधेड़ चालक था। भूला-भूला-सा मैं मोटर-बोट और किश्तियों के जमघट के पास पहुँचकर जोर से पुकारने लगा, 'मिस्टर तेरुओ ओकादा! मिस्टर तेरुओ ओकादा! क्या वह यहाँ है? मोटर-बोट वाले तेरुओ ओकादा!''

कुछ लोग मेरी ओर देखने लगे। वे सब एक-से लग रहे थे। उनमें एक व्यक्ति ने तेरुओ ओकादा का नाम जोर से लिया। मुझे लगा जैसे जल को स्पर्श करती हुई इस शब्द की ध्वनि जापानी स्वर में प्रतिध्वनित होने लगी हो। एक मोटर-बोट में जाल और रस्से सँभालता हुआ जापानी उधर देखने लगा। मैंने पहचान लिया कि वह तेरुओ ओकादा है। मैंने हाथ ऊपर कर उसे अपनी ओर आने का इशारा किया और वह हँसने लगा।

क्षण-भर में मैं उसकी मोटर-बोट में पहुँच गया।

'आप फिर आ गये?' उसने पूछा।

'हाँ, मेरा मन था कि आज फिर आपके साथ समुद्र की सैर करूँ।'

'पर इस समय तो मैं पकड़ने जा रहा हूँ।'

'मैं भी चलूँगा।'

'चलिए। यदि आप चाहते हैं।'

शायद आपकी तबीयत जमीन पर कम लगती है और पानी में ज्यादा। क्या आप भारत की जल-सेना के सैनिक हैं?' उसने हँसकर कहा और उसकी श्वेत दन्त-पक्ति दिखने लगी।

'नहीं, मैं तो पैदल-सेना में हूँ, मगर आपके इस सागर की छटा ने

जानने की चेष्टा करने वाले फौजी गुप्तचर तो नहीं हैं ? विदेशी बड़े खतरनाक होते हैं।'

'नहीं, नहीं, मेरे मित्र ओकादा ! मैं ऐसा कोई काम नहीं करता। मैं आपको धोखा नहीं दूंगा। सत्य पर अटल रहना हमारे देश की पुरातन परम्परा है। मेरा विश्वास करो।' मैंने उसके कन्धे पर अपना पूरा हाथ रखते हुए कहा।

वह फिर भी चुप रहा। उसने अपनी आँखें सिकोड़ ली और एक ओर सागर की लहरों पर एकटक देखता रहा।

मैंने उसे थोड़ा झकझोर डाला और मैं बोलने लगा, 'आप लोगों में अविश्वास बहुत गहरा हो गया मालूम देता है। किसी देश में जन्म लेने के नाते एक प्राणी उस देश का निवासी तो अवश्य कहलाता है, पर तो भी उसे सारे संसार का मनुष्य कहलाने का अधिकार तो है ही। मनुष्यता से मनुष्य विश्व का नागरिक हो सकता है—देश और जाति की परिधियों के परे, धर्म और परिवार के बन्धनों से मुक्त।'

'ऐसा भी हो सकता है।' तेरुओ ओकादा का चौड़ा वक्ष जल्दी साँस लेने से ऊपर-नीचे हो रहा था।

'फिर आप मेरा विश्वास क्यों नहीं करते ?'

'मैं विश्वास करूँगा। मैं भी जापानी सैनिक था। एक सैनिक दूसरे सैनिक को जब वचन देता है तो वह अटल विश्वास से प्रेरित होकर।' उसने मेरा गर्म हाथ अपने ठण्डे, भीगे हुए हाथ में ले लिया। वह कहने लगा, 'मैं एताजिमा ऐकेडेमी का छात्र रह चुका हूँ। मैं अपने देश की जल-सेना का अफसर था। आज जापानी जल-सेना का नाविक विरोधी दल के सैनिक से सन्धि करता है।' उसने मेरा हाथ जोर से दबाया और उसकी सहज मुस्कान पूरे मुख पर छा गई।

'और यह सन्धि युग-युग तक स्थिर रहेगी।' मैंने भी दृढ़ता से कहा।

एक निमिष जापानियों और भारत के बीच लड़े गए कठोर युद्धों की स्मृति बिजली की तरह मेरे मन में कौंध गई। फिर जैसे विदीर्ण क्षितिज

के वक्ष की गहरी दरारों को रुपहले, हल्के, रंगीन बादलो ने भर दिया। ऐसे ही दो बादल के टुकड़े पश्चिम और पूर्व से उडते हुए आ मिले। दोनों के मिलन में अदृश्य उद्‌गार उभरने लगे। घटाएँ उठने लगीं। सम्पूर्ण आकाश अटूट मद-भरे बादलों का प्रागण बन गया। सारी वायु में सुगन्ध भर गई। दूर पर हरी-हरी सोई-सी पहाडियाँ जागने लगीं और फिर प्रेम-बिन्दु छलकने लगे—रग-भरे, स्नेह से बोझिल बरसात के बडे-बडे जल-बिन्दु।

७

एक शाम मैं अकेलेपन को भुलाने के लिए लगभग पाँच मील नगर से दूर निकल गया। चलते-चलते पैर भारी होने लगे और पिडलियो में मीठी-मीठी पीडा रेंगकर नसो में एक जगह रुकने लगी। माथे पर छलकते मोती, गालों पर से बहती हुई धारा और गर्दन से उद्‌गारित स्वेद-निर्झरिणी सब मिलकर मेरे वक्ष पर बहने लगी। मैंने अपनी कमीज की बटनें खोल डाली। पास के वृक्ष से एक टहनी तोड़ मैं अपने ऊपर पत्तों का चँवर डुलाने लगा। कुछ चैन मिलने के बजाय मेरे जल-युक्त शरीर के अन्तर मे रेगिस्तान का सूखापन समाने लगा। जैसे-जैसे गले के ऊपर पसीना बहता उसके अन्दर खुश्की की अनेक नालियाँ-सी बनती जाती—ठीक वैसी ही जैसी मायेबोन के विकट युद्ध-स्थल में खाई मे पड़े-पडे कभी पानी समाप्त हो जाने पर गहरी होती जाती थी। कैसे सूखे और कठोर वे अनुभव, कैसे रोमांचकारी और कैसे निर्जल, विकल तड़पानेवाले! प्यास से गला सूखता और गोलियों से प्राण सूखते! कहीं जल की खोज करना भी दुर्लभ!

मेरा तर तालू सचमुच सूखा हो तड़पने लगा। होंठों के कोने चिपकने लगे। रस-भरी जिह्वा उन पर अपने-आप चलने लगी। जहाँ मैं दम लेने को रुका था उसी स्थान की नम ज़मीन पर अपनी छड़ी के नुकीले छोर से मैं कई रेखाएँ कुरेदने लगा। जैसे-जैसे वे रेखाएँ स्पष्ट होती मेरे गले की सूखी नालियो में गहरापन बढता जाता। जी चाहता कि उनको जल से

लबालब भरकर कितनी बड़ी नहरें बना डालूं !

सड़क छोड़कर मैं एक जंगली मार्ग पर हो लिया। ऐसा लगा मानो दूर पर पहाड़ियों के खुरदरे कंगूरे बादलों मे निहित जल-राशि से तृप्ति करना चाहते हों। मैं उन पहाड़ियों को फोड़कर बहनेवाली किसी निष्कलुष जल-धारा को ढूंढ निकालना चाहता था। यही खोज-बीन करते-करते मैं उस राह के अन्तिम छोर तक पहुँच गया, जहाँ नीची चहारदीवारी के अन्दर पत्थर, ईंट और लकड़ी की बनी अनेक छोटी-बड़ी इमारतें थी। एक अधेड़ जापानी टहलते-टहलते मुझे देखकर रुक गया। आश्चर्य और शंका उसके चेहरे पर प्रकट हो ही रहे थे कि मैंने जापानी भाषा में उससे अभिवादन किया, 'कोन्निचिवा' (जिसका अर्थ है सन्ध्या समय का प्रणाम)। फिर कुछ रुककर पीने को जल मांगा।

वह पास की इमारत मे से एक गिलास जल ले आया और मैं एक साँस में उसे सोख गया। फिर दूसरा गिलास और तीसरा गिलास खाली करके जब चौथे गिलास को मैं रुक-रुक पीने लगा तब उसने कहा, 'बहुत प्यासे मालूम होते हो ?'

'हाँ, बहुत प्यासा ! दूर से चलकर आ रहा हूँ। यदि आप आज्ञा दें तो उस बेंच पर बैठ जाऊं ?' पास मे पड़ी लकड़ी की एक बेंच का सहारा लेते हुए मैंने कहा।

'अवश्य। आप कहाँ से आ रहे हैं ?'

'कूरे नगर से।'

'पैदल ?'

'हाँ।'

'ओह, इतनी दूर से ! यहाँ क्यों आना हुआ ?' मैंने देखा उसकी पतली-नुकीली आँखें मुझ आगन्तुक पर बरछी की तरह लगी थी। शायद मुझे चीरकर वे अन्दर तक का भेद ले लेना चाहती थीं।

'मैं थका-हारा भटकता पथिक इसी राह पर आ निकला।'

'इस जंगल के रास्ते ! क्यों ? यहाँ तो कोई आसानी से पहुँच न सकता।'

जल पीने के बाद मेरी तबीयत हरी हो चली थी और बातचीत करने की उत्कण्ठा भी जगने लगी थी।

मैंने उत्तर दिया, 'आप समझते हैं कि घने पाइन के वृक्ष इस मग को रोक सकते है ? जब मैं इतने सागर पारकर आपके देश मे आ सकता हूँ तो क्या क्रूरे नगर से यहाँ पहुँचना सम्भव नहीं ?'

'सम्भव है। पर अधिकतर विदेशी यहाँ नही आते। दुर्गम रास्ते की वजह से।' उसने नम्रता से कहा।

'मै बहुत प्यासा था। आपने मुझे जल नही अमृत पिला दिया। इसी अमृत को संचित किए हुए यहाँ की लतिकाएँ और वनस्पति मुझे आपके निकट ले आईं।'

'आपको जंगल का दृश्य शायद अच्छा लगता है।'

'बहुत अच्छा, क्योकि मेरे देश मे भी प्राकृतिक सौन्दर्य है।'

'किस देश मे ?'

'इण्डिया या भारतवर्ष में।'

'हाँ, इण्डिया भी तो एशिया का ही एक भाग है।' उसने कहा।

मुझे एक निमिष बर्मा और अराकान के घने जंगलों की याद आ गई। उन जंगलों मे मैं कितना पैदल चला था ! कैसे टेढ़े-मेढे रास्ते, जिनको पारकर हम थककर किसी बड़े वृक्ष के तने के सहारे बैठ जाते ! ठंडी समीर के साथ नीचे गिरी पत्तियों की नम, गीली बदबू नाक मे जाने लगती। नथुने फैलने लगते, फड़कने लगते। एक अजब तरह की दवाइयों की-सी बदबू वायु के एक झोंके के साथ मेरी नाक मे भरने लगी। मैंने चट से सवाल कर दिया, 'क्यों महाशय ! यह क्या स्थान है ? इन इमारतों में क्या होता है ?'

वह चुप रहा। सशंकित-सा वह अपने मोटे चश्मे में से दूसरी ओर देखने लगा। उसकी छोटी आँखें चश्मे में से और छोटी लगने लगी।

मैंने फिर कहा, 'आपने मेरे सूखे गले की प्यास तो बुझाई पर अब मेरी

मानसिक प्यास तो शान्त कीजिए।'

वह फिर भी कुछ नही बोला। बातों के क्रम को मोड़ने की चेष्टा करते हुए वह कुछ देर बाद बोला, 'और आप मेरी शंका का समाधान पहले कीजिए। इतने दूर देश से आप यहाँ क्यों आए ?'

मैने समझा हम दोनों में होड-सी लगी है कि कौन किसके विषय में पहले जानकारी करने में सफल हो। इस द्वन्द्व की निरर्थकता को समझते हुए मैंने अपने शिथिल शरीर को ढीला कर बेंच के सहारे आराम दिया और फिर मैं कहने लगा, 'महाशयजी ! हमारे देश में सत्य को हम छिपाने का प्रयास नही करते। सत्य सूर्य की तरह जाज्वल्यमान होता है। इसीलिए मैं आपको बताता हूँ कि मैं अपने देश की तेजस्वी सेना का सैनिक हूँ। हम लोग कूरे में रहते है।'

यह सुनकर वह एक कदम पीछे हट गया। आश्चर्य मे उसने केवल इतना *ही कहा, 'ओह ! दूसरे देश की सेना के सैनिक !'*

'हाँ, हाँ, पर अब तो कहिए कि यह स्थान क्या है ?'

'यह स्थान''' यह स्थान''' इसको जगली जगह समझिए।'

'देखिए, आप मुझसे सब बातें पूछकर अपनी बातों पर पर्दा डालने का प्रयत्न कर रहे है।'

'नही तो।' *वह कुछ घबरा-सा गया।*

'तो फिर मैं जंगली जगह का क्या अर्थ समझूँ ?'

'यही कि यह जगह जंगल मे है।'

मुझे हँसी आ गई और मैं कहने लगा, 'आप तो मुझसे पहेली-सी बुझा रहे हैं। इस समय हम-आप सब जंगल मे हैं।'

'हाँ !' उसने छोटा-सा उत्तर दिया।

'आप तो इस पास की पहाडी के पत्थर-से लगते है जो मनुष्य के सम्पर्क से भी नही पसीजते।' मैंने कहा।

'ऐसा नही है। मैं मनुष्य-जाति का सेवक हूँ।'

'क्या मतलब ?'

'मैं डॉक्टर हूँ।'

हवा के दूसरे झोंके ने मेरी नाक के भीतर तक दवाइयों की दुर्गन्ध भर दी।

मैंने पूछा, 'तो क्या यह कोई अस्पताल है?'

'हाँ। पर किसी से कहना नहीं। तुम्हें मेरी सौगन्ध।' उस अधेड़ जापानी ने मेरे कन्धे पर अपना हाथ रखते हुए कहा।

'मुझ पर विश्वास रखिए। आप डॉक्टर, नर-नारियों की पीड़ा हरनेवाले चिकित्सक, मेरा सौभाग्य जो आपके दर्शन कर सका।'

यह बात सुन उसकी गम्भीर मुद्रा पर मुस्कान की रेखा दौड़ गई। उसकी चौड़ी नाक के नीचे दोनों होंठ फैलने लगे। उसने उत्तर दिया, 'मैं इस चिकित्सालय का मुख्य चिकित्सक हूँ।'

'डॉक्टर! अब हम सैनिकों का काम भी आपके देशवासियों की सेवा करना है। मुझे आपका देश और यहाँ के निवासी बहुत अच्छे लगते हैं।'

'वीर सैनिक और विश्वासपात्र डॉक्टर सब देशों के लिए आवश्यक हैं।'

'हम आपके पास दूर देश से आए है—आपसे मित्रता का हाथ बढाने, आपकी गम्भीरता को मधुर मुस्कान में परिणत करने।' मैंने उठकर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर बातों की झडी लगा दी, 'आप लोग कितने परिश्रमशील और अल्पभाषी होते हैं! मेरी तरह से अधिक बोलनेवाले नहीं।'

उसने दूसरे हाथ से अपने मोटे चश्मे को सँभाला। उसके ऊँचे माथे पर एक सलवट पड गई और उसने केवल यही कहा, 'मुझे भी इण्डिया के निवासी कुछ-कुछ भरोसे के लोग लगे। पर वे पिछले युद्ध में मजबूर थे।'

'कैसी मजबूरी?'

'यही कि उनको हमारे देश से लड़ना पड़ा।'

'डॉक्टर! आप ठीक कहते है। हम लोगों को आपके विरुद्ध कुछ परिस्थितियों के कारण युद्ध करना पड़ा। वैसे हम शान्त स्वभाव के लोग

हैं। हमारा देश विश्व-शान्ति चाहता है।'

'क्या यह आपके देश की नीति है?'

'मेरी समझ में तो यही नीति है। हमारा इतिहास इसकी पुष्टि करता है। मनुष्य की समानता और बन्धुत्व का प्रचार हमारे देश में गौतम बुद्ध ने किया था। आपके देश में भी यह धर्म अपनी चरम सीमा पर पहुंचा हुआ है। इससे गहरा बन्धुत्व का नाता और कहाँ मिल सकता है?' मैं एक दार्शनिक की भाँति कहता चला गया।

उसकी मुस्कान अब और चौडी होकर सारे चेहरे पर फैल चुकी थी। छोटी आँखे सिकुडकर और पतली हो गई। गम्भीरता का बाह्य आवरण भी हटने लगा। वह कहने लगा, 'सैनिको मे शान्ति की चर्चा मैंने आपसे ही सुनी। अधिकतर तो सैनिक अपने अस्त्र-शस्त्रों से असंख्य हृष्ट-पुष्ट लोगों के अंग छिन्न-भिन्न कर हम डॉक्टरों के पास भेजते रहते हैं।'

'पर रण मे हम सैनिको मे भी कभी सहानुभूति जगने लगती है। यह गुण केवल डॉक्टरो की ही धरोहर नहीं है।'

यह सुनकर वह हँसने लगा। उसकी श्वेत दत-पंक्ति मे दो ऊपर के सोने के मढ़े दाँत चमकने लगे। उसकी हँसी मे प्राणियो के प्रति सद्भावना निखरती प्रतीत होने लगी। मेरे पूछने पर उसने बताया कि उसका नाम डॉक्टर तोशियो तनाका है। इस चिकित्सालय मे सुबह से शाम तक काम करके वह रोगियो की सेवा करता है।

अब सन्ध्या ढल रही थी, पर डॉक्टर से बातें करने की इच्छा मुझमें प्रबल थी। यह विचारकर कि इस इच्छा की पूर्ति मैं फिर किसी दिन करूँगा, मैंने उससे कहा, 'डॉक्टर! आप एक व्यस्त व्यक्ति है। मुझे भी दूर जाना है। यदि आपको सुविधा हो तो फिर किसी शाम को आपके पास आऊँ।'

'अवश्य आइए। मेरा यह समय खाली रहता है।' डॉक्टर ने उत्तर दिया।

मैं वहाँ से चल दिया। कितने विचारों का काफिला मेरे मस्तिष्क मे चल रहा था! मुझे मालूम ही न हुआ कि वापसी की मेरी मंजिल कब

खत्म हो गई।

•

एक सप्ताह बाद मैं सन्ध्या समय फिर डॉक्टर तोशियो तनाका के चिकित्सालय पहुँच गया। फाटक के पास टहलते देखकर मैंने अभिवादन किया और वह निःसंकोच मुझसे कहने लगा :

'मैं तो कई दिन से आपकी बाट जोह रहा था। फिर सोचा कि यह स्थान दूर होने के कारण आप शायद समय न निकाल सकें।'

'नहीं, डॉक्टर! फुरसत तो आप लोगों को कम मिलती है। मुझ-जैसे भ्रमण करने वाले को समय की क्या कमी? और फिर समय बचाने का यह साधन तो है।' मैंने अपनी साइकिल एक ओर रखते हुए उत्तर दिया।

'तब तो आपसे कुछ देर बातचीत हो सकेगी। चलिए, मेरे साथ चाय पीने की कृपा कीजिए।' डॉक्टर मेरी बाँह पकड़ते हुए बोला।

'चलिए।' और मैं उसके साथ-साथ चलने लगा।

हम लोग डॉक्टर के छोटे-से लकड़ी के मकान में पहुँच गए। कमरे में एक चबूतरे पर मोटी 'तातामी' (एक तरह की मोटी चटाई) पर बिछे 'जबुतोन' (रुई भरी गद्दी) पर हम बैठ गए। जूते नीचे उतार अपने देश की रीति के अनुसार पैर सिकोड़कर मैं जम गया। कमरे में सादगी मगर सफाई थी। सब वस्तुएँ तरतीब से लगी हुई। एक ओर 'तुकोनोमा' (अलमारी) में लाल रंग का चिकना गोल एक गुड्डा-सा रखा था, जिसके न हाथ और न पैर। दूसरी ओर एक कोबीन (गुलदान) में सजाये हुए फूल।

मेरी आँखें उस गोल गुड्डे पर फिर आ अटकी और मैंने प्रश्न कर ही डाला, 'डॉक्टर, यह क्या वस्तु है?'

'इसको हम लोग "दरूमा" कहते हैं। यह उस भारतवर्ष के बौद्ध सन्त की प्रतिमा है जो छठी शताब्दी में नौ वर्ष तक अडिग तपस्या करता रहा। इसके आगे सर झुकाने से वरदान मिलता है। उसके वस्त्र शायद लाल थे इसलिए इस प्रतिमा का भी रंग लाल है।'

मैंने झुककर दोनों हाथ जोड़ अपने देश के उस सन्त को प्रणाम किया,

'नहीं मेरे मित्र ! यह इमारतों का खंडहर नहीं, वरन् प्राणियों का खण्डहर है।'

'यह आप क्या कह रहे हैं ?' मैंने विस्मय से पूछा।

'सच, बिल्कुल सच। यह रोगियों की प्रदर्शनी है। वे एक दिन अच्छे-भले चलते-फिरते व्यक्ति थे और अब नए-नए रोगों से ग्रसित ऐसे रोगी बन गए हैं जो शायद कभी भी अच्छे न हो सकें।' डॉक्टर की आँखों में गीला-पन था, जिसको उन पर लगा मोटा चश्मा भी न छिपा सका।

'ऐसा कौन-सा रोग ? कैसे रोगी ? मुझे बताओ। मैं जानना चाहता हूँ। मैं सुनने को अधीर हूँ।' मैंने उद्विग्न हो डॉक्टर का हाथ पकड़कर कहा।

'शि ! शि !' उसने अपने मुँह पर एक उँगली रखकर यह शब्द किया। फिर धीमे स्वर में मुझसे कहा, 'मैं किसी को अपने चिकित्सालय और रोगियों के बारे में नहीं बताता। लेकिन आप मेरे मित्र हैं, विश्वासपात्र मित्र। आप किसी से कहेंगे तो नहीं ?'

'नहीं !' मेरी दोनों आँखें आतुरता से बहुत चौड़ी और गोल हो गई थीं।

'मेरे चिकित्सालय में अणु-बम के प्रभाव से पीड़ित रोगी हैं।'

'अणु-बम ! अणु-बम !!'

यह सुनकर मेरे रोंगटे खड़े होने लगे। भय की भयंकरता अपनी सीमा पर पहुँच गई। एक अजब विह्वलता का तूफान मन में उठने लगा, जिसने मेरी अन्तरात्मा को भी कँपा दिया। जी चाहने लगा कि मैं भागकर चिकित्सालय के हर रोगी को गले लगा लूँ, जो मृत्यु की अवहेलना कर अब भी जीवित थे। कैसा वीभत्स और केन्द्रित शक्ति का अपार रूप—अणु-बम !

सब बमों का दानव रूप—अणु-बम ! नश्वरता का मूल-मंत्र, अणु-बम !

अचानक एक तेज भड़ाका और फिर शान्त।

'क्या डर गए ? हवा के तेज झोंके से खिड़की का एक पल्ला बन्द हो

गया था। क्या आपने समझा यहाँ बम फूटने लगे ?'

'नहीं, डॉक्टर तोशिया ! नही, नही ! यहाँ बम कहाँ ? अब तो युद्ध समाप्त हो चुका।' मैंने अपने को सँभालते हुए कहा।

'पर उसकी यादगारें बाकी हैं। लो, एक प्याला चाय और पिओ।'

मैंने काँपते हाथों में चाय के प्याले को अपने होंठो से लगा लिया। मेरे मन मे सहानुभूति की सरिता उफनकर अपने कूलो के ऊपर छलकने लगी। डॉक्टर का हाथ दबाकर मैं कहने लगा, 'मुझे भी उन रोगियों को देखने का अवसर दीजिएगा। मैं भी उनकी सेवा करना चाहता हूँ।'

'फिर किसी दिन। सैनिकों का काम तो प्राणियो पर प्रहार कर उनको रोगी बनाना है। रोग का निराकरण, उसका उपचार, और मानव-मात्र की सेवा हम डॉक्टरों का कर्त्तव्य है।'

मैंने खिड़की में से देखा अर्द्ध चन्द्र श्यामपट मे से झांकने लगा था। कुछ तारिकाएँ भी टिमटिमाने लगी। समय अधिक हो चुका था। डॉक्टर तोशियो तनाका को धन्यवाद दे मैं अपनी साइकिल पर चढ़कर चल दिया, अपनी टूटी-फूटी खडहर की-सी बैरेक की ओर।

८

तेरुओ ओकादा और उसकी मोटर-बोट मेरी सैर के साधन बन चुके थे। जब जी ऊबता मैं उसके साथ हो लेता। उसके मजबूत बाजुओं के इशारे पर जल पर उतराने वाला यह वाहन बहता। कभी मेरा भुजबल भी उसकी गति-वृद्धि करता और मेरे मन मे गुदगुदी होने लगती। कभी वह और कभी मैं अपनी-अपनी भाषा मे लोकगीत उच्च स्वर मे गाने लगते। भाषा तो अलग-अलग रहती पर गीत के बाद की हँसी और खिल-खिलाहट में अपूर्व सामंजस्य और रस भर जाता।

उसकी मोटर-बोट मे हम दोनों 'इनलैण्ड सी' में दूर निकल गए थे। सन्ध्या की अनेक समीर एकाकार हो मानो जल मे उत्फुल्लता का ज्वार ले आई। बोट डगमगाने लगी और हम उसको सन्तुलित करने लगे।

'ओकादा ! इस शान्त सागर में यह हलचल कैसी ?'

'इस समय हर ओर उभार है, हर ओर रंग है। वे पहाड़ के शिखर कितने ऊँचे ! शिखरों पर लाल सूर्य का कलश कैसा रंगीन ! उसकी रुपहली, स्वर्णिम राशियाँ मानो ऊँचे आकाश को छू लेना चाहती। इसीलिए हमारी छोटी हल्की बोट भी लहरों की चोटी पर रहना चाहती है। डरो नही। मैं तो नाविक हूँ।'

'यही इत्मीनान है कि मैं एक अनुभवी नाविक के साथ हूँ, जिसने शायद बहुत-से सागर की गहराइयाँ खोज डाली होंगी।' मैंने कहा।

'बहुत-से सागर की तो नही, किन्तु हाँ, मैंने कुछ मे तो पनडुब्बी के बेड़े के साथ घण्टो जल के नीचे समय बिताया है, बहुत-से दुश्मन के जहाजों की तली को फोड डाला—मिट्टी के घडो की तरह।'

'आपके देश के वायुयान और सामुद्रिक बेडे—दोनो ही तो दूसरे देशों के जल-पोतों के पीछे बुरी तरह से पड गए थे। सन् १९४१ का पर्ल-हार्बर और हवाई के हवाई-अड्डे पर आक्रमण की याद करके अब भी अमरीका के सेनानी के दिल दहल जाते होंगे।'

'उन दिनों की क्या याद करना ? तब हमारे देश के प्रताप का प्रसार था। आपने सुना होगा कि हमारी सेनाएँ हागकाग, बोर्नियो और सोलोमन के द्वीप ले चुकी थी। हमारे वायुयानों ने गुआम और फिलीपीन्स पर बम बरसाए थे। बेटेविया, मलाया और बर्मा तक इस देश का विस्तार था—ऐसा विस्तार और तेज जैसा नवोदित प्रभाकर का।' तेरुओ ओकादा ने क्षण-भर मे पूरे युद्ध का दिग्दर्शन-सा करा दिया।

'क्यों नही, क्यो नही ! आपका देश तो ससार का वह भाग है जहाँ से, कहा जाता है कि, सूर्य उदय होता है।'

'इसीलिए मेरे देश ने सब पूर्वी देशो को एक नया मार्ग दिखाने की ठानी—आर्थिक उन्नति का, स्वावलम्बन का।' ओकादा ने कहा।

मैं इस कथन से सहमत न होकर चुप हो गया। क्यों विवाद किया जाए, क्यो देशो की कूटनीतियों पर टिप्पणी की जाए ? हम सबको पूर्णतया

विदित हो चुका था कि इस क्षेत्र का नेतृत्व करने की जापान को उत्कण्ठा थी। अपनी विजय की चरम सीमा पर उसने चीन के मुख्य भाग मंचूको, मलाया और बर्मा से माल लाद-लादकर जापानी फैक्ट्रियों और मशीनघरों में पहुँचाया था। परन्तु यह विजय और आर्थिक उद्योग का बहाना क्षण-भंगुर ही रह सका। और फिर जापान के सागर से उठी विजय की उद्विग्न लहर उसी में समाने लगी।

'तुम क्या विचार करने लगे मेरे मित्र? हमारा यह स्वप्न पूरा भी न होने पाया था कि अमरीका की जल-सेना ने अपनी शक्ति सचित कर हम लोगों पर आक्रमण कर दिया।' वह बोला।

'हाँ, तेरुओ ओकादा! मैंने सुना है जल और थल के उन भीषण युद्धों के बारे में।' मैंने छोटा-सा उत्तर दिया।

'आपने केवल सुना ही है। पर मैं तो कोरल सागर और सोलोमन द्वीप के बीच में किए हुए जल-युद्ध में लडा हूँ। कितने हमारे जल-पोत और उन पर कितने सिद्ध-हस्त नाविक जल मे समा गए। एक भी अपने स्थान से नही डिगा। पर मैं अभागा जीवित बच गया।'

'आप अभागे क्यो? आप तो अपने देश के भाग्य का नवनिर्माण करने को जीवित हैं। अगर आप न होते तो भला मोटर-बोट मे यह मजेदार सैर कैसे होती?' मैंने उससे कहा।

वह सूखी-सी हँसी हँस दिया। जापान की पराजय शायद उसके अन्त-स्तल को द्रवित कर रही थी। वह लहरों की अठखेलियों के परे एकटक आँख गडाए देख रहा था। गहरी साँस लेकर वह कहने लगा, 'अब इसी इनलैण्ड-सी की छोटी-सी झील मे सदा उतराते रहना है। हमारे विशाल सागर तो दूसरों के अधिकार मे हैं। मालूम नहीं कभी मैं स्वच्छन्द हो उन जल-क्षेत्रों को अपना बना सकूँगा या नही!'

'क्यो नहीं, जापान तो अब भी स्वच्छन्द है। हम लोग तो केवल कुछ काल के लिए आपके अतिथि हैं।'

'अगर सब आपकी तरह के अतिथि होते तो कितना अच्छा था! हम

अतिथि-सत्कार करते, उनको सर-आँखों पर रखते।' वह कुछ सोचता रहा, फिर सहसा कहने लगा, 'मैं आपको अपना अतिथि समझता हूँ— अपना पक्का मित्र। आपको कल अपने यहाँ भोजन कराऊँगा। मैं दिखाऊँगा कि जापानी भी अतिथि-सत्कार करना जानते हैं। यह निश्चय है कि कल रात्रि मैं आपको बोट में लेकर अपने घर ले चलूँगा।' उसने मेरे कन्धे को अपने भारी हाथ से दबाया।

मैंने अनुमति दे दी और वह प्रसन्न हो गया।

आज उसकी हँसी मे गहरे विषाद की छाया-सी समाई थी। बार-बार वह अपने देश की असफलता का जिक्र करता। कभी कहता कि विजेता राष्ट्रो ने उसके देश को कितना छोटा कर दिया है। छोटा ही नही, वरन् विध्वंस और परवश! वह ऊँचे स्वर मे अपने आन्तरिक ताप को प्रदर्शित करने लगा।

'विजयी देशो ने हमसे उत्तर मे क्यूराइल द्वीप और दक्षिण मे रयूक द्वीप ले लिए। कोरिया और मचूरिया मे हमारे आधिपत्य का अन्त हो गया और हम अपने ही द्वीपो मे बन्दी बन गए।'

'क्यों विकल होते हो ओकादा! प्रत्येक देश और राष्ट्र के भाग्य मे सागर की तरह ज्वार-भाटा आया करता है। जापान फिर स्वतन्त्र होगा और फिर शक्तिशाली होगा। आप जैसे चतुर नाविक ही इसके भाग्य की नौका को पार लगाएँगे।'

हम दोनों को वापस लौटने की जल्दी थी इसीलिए मोटर-बोट की गति उसने तीव्र कर दी। पर्वत-शिखर से उतर सूर्य का अर्द्ध भाग आकाश और सागर की गहरी नीली परिधि मे समा चुका था। उसकी काचन आभा पिघलकर जल पर फैल चुकी थी।

•

दूसरे दिन मैं नियत समय पर ओकादा की बोट के पास पहुँच गया। वह मेरा इन्तजार कर रहा था। आज उसके कपड़ों मे नवीनता और स्वच्छता, चेहरे पर चिकनाहट और हँसी, बालो में तेल और पैरो पर पालिश

किये हुए जूते थे। इस नयेपन में केवल एक चीज पुरानी—वह थी उसकी अल्हड़ता, जो ये आवरण नहीं छिपा सके। वह बहुत भला लग रहा था। गले में बँधा, बल खाता दूली रूमाल उसमें रंगीनी भर रहा था। हर्ष से हाथ मिलाते हुए उसने मुझसे कहा, 'चलिए आज आप मेरे कब्जे मे हैं। मैं आपको बहुत देर तक नही छोड़ूँगा।'

'आपके कब्जे मे तो पहले दिन मिलने के बाद ही से आ गया हूँ। जब तक जी चाहे अपनी बोट में रखिए।'

'बोट में थोड़ी देर और, मकान में बहुत समय तक।'

'मैं तो आपके मकान में बन्दी बनने को तैयार हूँ। मेरी बैरेक से तो हर जगह अच्छी होगी।'

यह सुनकर वह हँस दिया। हँसी और उल्लास उसके प्रत्येक अवयव को पुलकित-सा कर रहे थे। अपनी मजबूत कलाइयों से उसने मोटर-बोट चलाना शुरू किया और हम पवन की गति से उड़ने लगे।

वह कहने लगा, 'मित्र! जैसे आप और हम प्रसन्न है कहीं वैसे ही यदि सब राष्ट्रों के नागरिकों में प्रेम हो जाए तो शायद विश्व-युद्ध कभी भी न हो।'

'युद्ध की आवश्यकता ही क्या है! एक दिन हम आपके देशवासियों के विरुद्ध लड़े थे—कितनी भयंकरता और विषमता थी आपस में! पर आज··· आज हम और आप एक हैं। कौन कह सकता है कि दो देशों के प्राणी हैं?'

'परन्तु मेजर! सब लोग तो ऐसा विचार नहीं करते। तभी तो कुछ शक्तिशाली देशों ने मिलकर यहाँ अपनी फौजें उतार दी है। यहाँ सुप्रीम कमाण्डर नियुक्त कर दिया है।'

मैं चुप रहा। उसकी लचीली त्वचा आगे-पीछे हो रही थी। आकाश मे बादल भाग रहे थे और शायद उससे भी आगे उसके वक्ष मे दबे, सिमटे उद्गार। उसका चौड़ा सीना ऊपर उठने लगा। आँखें सिकुड़कर छोटी हो गईं। सर्प-जैसी फुफकार मारते हुए वह कहने लगा, 'कैसा अंधेर है! हमारे मुल्क को बरबाद करके यहाँ बाहरी सेना रखना कहाँ का न्याय है? हमारे

देश के छोटे-छोटे द्वीप भला इतना भार सहन कर सकते हैं? और फिर आपस की घृणा और द्वेष!'

'अब युद्ध समाप्त होने पर भी आप लोगों के मन में आन्तरिक संघर्ष चल ही रहा है। आपके रंगीन द्वीप तैरते कमल-से और हम दूर देश से आए मधुप यदि कुछ रस लेकर चल भी दिए तो आपको इतना क्यों क्षोभ? आप तो सदा रस-प्लावित रहेंगे ही।' मैंने कहा।

उसकी गम्भीर मुद्रा मे फिर कमल खिलने-से लगे। उससे केवल इतना ही कहते बन पडा, 'हम लोगों के पुराने विचार धीरे-ही-धीरे बदलेंगे मेजर! शत्रुओं से मित्रता कहीं एक दिन मे होती है?'

'इस नौका ने तो दो शत्रुओ मे मित्रता एक दिन मे ही करा दी।'

'क्या आप शत्रु थे? कभी नही, ऐसा विचार भी न करना। मेरे गहरे, प्यारे दोस्त! अपने देशवासियों से भी अधिक भरोसे के मेरे साथी!'

मै अपनी प्रशंसा सुनकर झेंप गया।

वोट हिलोरो के शिखरों को चूमती-सी, अजित अरमानों के पर लगाए, रंगीन, नि.स्पन्द बादलो की छाया मे उड़ती जा रही थी। उसकी उड़ान तब रुकती सी मालूम हुई जब एक झटके से वह तीर पर जा लगी।

हम दोनो कुछ सीढीनुमा धान के खेतो के किनारों से होकर ऊपर चढने लगे। तेरुओ ओकादा बताता जाता कि ये उसके खेत हैं, जिनकी देखरेख उसकी स्त्री और बच्चे करते। खेत पारकर हम लकडी के एक छोटे साफ़ मकान के दरवाजे पर पहुँच गए। बाहर फुलवारी और उसमें रंग-बिरंगे फूल। वैसी ही रंगीन फूलदार किमोना पहने एक स्त्री ने हमारा स्वागत किया।

'यह हैं हमारे इण्डिया के मित्र और यह मेरी स्त्री रेइको।' तेरुओ ओकादा ने कहा।

मैंने झुककर प्रणाम किया। हम सब एक छोटे कमरे में चटाई के ऊपर रंग-बिरंगे छोटे गद्दों पर बैठ गए। जापानियो के कई घरों को मैंने देखा है। वहाँ जैसी सफाई और चमक शायद ही कहीं मिलती हो। सुथरापन ही नहीं,

किन्तु गहरे रंगों की रंगीनी, अद्भुत वस्तुओं से कमरे में सुन्दरता और सब जगह कायदा और तरतीब। घर की बनावट से लेकर उसकी सजावट तक उस देश की भिन्न सभ्यता प्रगट होती है। इस कमरे में भी दीवारें फूलदार रंगीन कागज से मढी थी। एक दीवार में हुक से लटकता हुआ एक कण्डील, जो मैंने पहली बार यहीं देखा। मछली की रंगीन खाल से बना वह लैम्प समझिए, जिसके अन्दर प्रकाश होता है। मैं उत्सुक हो पूछने लगा, 'ओकादा ! यह क्या मछली की-सी वस्तु ?'

'मेरे घर में मछली दीवार पर चढ़ जाती है और वहाँ से लटककर चमकती है।' उसने हँसकर कहा।

'नहीं। तेरुओ कभी सीधी बात नहीं कहता। इसीलिए मैं इस पर बिगड़ जाती हूँ। इसको हम अपनी भाषा में फूगू-जोचिन (Fugu Jochin) कहते है। मछली की खाल से बनी लैम्प। हम मछली मारने वाले, उसकी खाल तक काम में ले आते हैं।' रेइको ने अपना किमोनो सम्हालते हुए कहा।

दुहरे बदन की मझोले कदवाली वह गोरी बातें करने में मुझे चटपटी मालूम दी। उसका गोल भरा चेहरा और उसमें पतली सुरमीली आँखें सतर्क-सी। छोटी चिबुक और उसके ऊपर छोटे होंठ जब जल्दी-जल्दी चलने लगते तो वह बातों की झड़ी लगा देती। जब वह हँसती, तो आगे के दाँतों की रक्षा-सी किए हुए अगल-बगल के उठे हुए ऊपर के दाँत पहले दर्शन देते। उसकी वाक्शक्ति ही कर्मठ नाविक तेरुओ ओकादा पर अंकुश रखती और वह कभी सहम जाता। सबसे अनोखे ढंग के थे उसके लहराते-से केश, जो फुलाकर एक अजब तरीके से बाँधे गए थे। बाएँ हाथ से एक पंखा झलते हुए वह कहने लगी, 'आपके बारे में तेरुओ मुझे सब बता चुका है। हम लोगों को कितनी प्रसन्नता है कि आप यहाँ आज आए।'

'सौभाग्य मेरा, आपके पति तो मेरे प्रगाढ़ मित्र हैं। कितने सहृदय हैं वे !'

'उनकी सहृदयता क्षणिक और कठोरता स्वाभाविक, निरन्तर।

सहृदयता तो बड़ी-छोटी मछलियाँ जानती होंगी, जिन्हें मारकर ये रोज लाते हैं। अपने को चतुर सैनिक और सफल नाविक समझते हैं। पर जैसे हैं मैं जानती हूँ—भूले-से, अटपटे-से, एक आदर्शवादी।' रेइको ने ओकादा पर फबती कसते हुए कहा।

'मछली न मारूँ तो काम कैसे चले ?' ओकादा बोला।

'और हम सब खेत और बाग मे काम न करें तो शायद मछलीमार नाव में पड़ा-पड़ा ऊँघता रहे।' उसने चट-से उत्तर दिया।

'युद्ध-काल में तो आपको अपने खेतों में बहुत काम करना पड़ता होगा?' मैंने प्रश्न किया।

'कुछ पूछिए मत। रात-दिन काम। खेत मे काम, बाग मे काम, पड़ोसियो के काम और देश के काम।'

'यह क्या ? मैं समझा नही।' मैंने कहा।

'हजरत तेरुओ ओकादा तो अपने युद्ध-स्थल पर चले गए और रह गईं हम स्त्रियाँ और बच्चे। हम पर भार पड गया हवाई हमलों से बचाव करने का। हम बोरों मे रेत भर-भराकर अपनी पीठ पर लाद ऊँची-ऊँची जगह पहुँचाते और मकानो के चारों ओर लगाते। पानी के कनस्तर ढो-ढोकर बड़ी टब भरते। और न मालूम क्या-क्या करते।'

'तभी तो आपने जापान को बचा लिया। इसीलिए इस देश के बच्चे तक बहादुर और निडर हैं।' मैंने प्रशंसा की।

'मगर यह देवीजी समझती हैं कि जिन्दगी की कठोरता इन्ही ने सबसे ज्यादा झेली है, हम सैनिको ने नही।' ओकादा बीच मे कहने लगा।

'आप चुप रहिए। जब आप यहाँ थे ही नही तो आपको हमारी कठिनाइयों के बारे में क्या मालूम ?' उसने ओकादा को झिटक दिया और कहने लगी, 'कभी हम आग बुझाने की मश्क करते। किसी पेड़ पर तेल का डिब्बा रखकर आग लगा दी जाती और हम स्त्रियाँ उसे लम्बे बाँस और बल्लियों से बुझाती। जब यह काम खत्म होता तो घर का काम। और सबसे बड़ा काम राशन लाना। लोग चिल्लाते—हाय क्यूगा-मेरी-मशीता (Hai

kyuga mairi mashita—मतलब राशन आ गया) और हम सब लाइन लगाकर खड़ी हो जातीं और एक-एक करके राशन लेती। इसमें बड़ा समय लगता—कभी घण्टों लग जाते।' वह कहती जा रही थी।

'मगर आप लोग तो मछली अधिक खाते हैं। मछली तो आपको खूब मिल सकती होगी।' मैंने पूछा।

'कहाँ मछली! कुछ दिनों ताजी मछली मिली, कुछ हम लोगों ने पकड़ी। और फिर जब हवाई हमले होने लगे तो सूखी-साखी मछली से काम चलाना पड़ा।'

'अच्छा तो मछली की बातें ही करती रहोगी या मछली बनाकर भी खिलाओगी?' ओकादा ने कहा।

'जरूर खिलाऊँगी। कुछ खाना तैयार है, कुछ यहीं बनाऊँगी अपने अतिथि के लिए।' कहकर वह रसोईघर में चली गई।

'बड़ी बातूनी है मेरी रेइको। जब तक इसके पास बैठो बराबर कान खाती रहती है।' ओकादा कहने लगा।

'आपका सौभाग्य है कि आपको इतना काम करनेवाली और मन-बहलाव करनेवाली स्त्री मिली।' मैं बोला।

वह हँस दिया और मैंने अपनी आँखें कमरे में रखी सब अनूठी वस्तुओं में उलझाना आरम्भ किया। एक ओर दीवार पर चमकदार और नक्काशी की मूठवाली कुकरी एक-दूसरे को क्रास किए लटकी थीं। दूसरी ओर छोटी मेज पर लकड़ी का बना जहाज़ का एक छोटा नमूना। तोकोनोमा के बीचोंबीच लगी अत्यन्त चतुराई से बनाई गई एक पेंटिंग, जिसमें बाँस के वृक्ष और उसकी लम्बी पत्तियों के बीच बैठी दो छोटी चिड़ियाँ। उसके नीचे रखी अष्टधातु से बनी गौतम बुद्ध की एक प्रतिमा।

मेरे पूछने पर ओकादा ने बताया कि कुकरी एक सैनिक का अस्त्र ही नहीं वरन् उसके घर की शोभा है। बाँस के झुरमुट में अंकित ये दो पक्षी इस घर के दाम्पत्य जीवन के अपार स्नेह के परिचायक हैं।

'यह बुद्ध की प्रतिमा कहाँ की है?' मैंने पूछा।

'हमारे देश के तीर्थस्थान नारा मे अधिष्ठित दायेबुत्सू की महान प्रतिमा की छोटी नकल।'

दायेत्बुसू की उस छोटी प्रतिमा की गम्भीर मुद्रा मानो हम लोगों को उपदेश देती-सी प्रतीत होने लगी। मेरे स्वप्निल नयनों के आगे बौद्ध धर्म के उपदेशों की दीप्तिमान अनेक रश्मियाँ मानो उस छोटे कमरे मे और वहाँ से प्रसारित हो पूर्ण निवासस्थान मे भरने लगी। वह मूर्ति ज्योति की केन्द्र-सी बन गई—शत-शत किरणों का स्रोत, अनुपम प्रकाश का पुंज। सन्ध्या की अटपटी वेला मे प्रभात की-सी आभा निहार मैं चकित होने लगा और मेरे मुँह से ये शब्द बरबस निकल पड़े, 'जापान मे तो हर घर मन्दिर है, जहाँ अनेक रूप मे एक ही ठाकुर और उसके असंख्य अनन्य पुजारी। फिर भी बाहर अशान्ति और देशों के प्रति द्वेष। कैसी यह विडम्बना?'

'किन्तु घर के अन्दर तो शान्ति है। परिवार तो यहाँ सुख का स्रोत है। यहाँ स्नेह है। बाहर तो देशों में कलह मचा है। उस द्वन्द्व में कुछ राष्ट्र हमें दबोचना चाहते हैं। उनके लिए वे कुकरी टँगी हैं—वे तेज धारदार, बड़े टेढ़े चाकू। यहाँ टेढ़ों के लिए टेढ़े हथियार...' तेरुओ ओकादा ने कुछ रुष्ट होकर आवाज ऊँची करते हुए कहा।

'और यहाँ अच्छे लोगों के लिए स्वादिष्ट भोजन सामग्री।' बीच मे बात काटते हुए रेइको बोली। हमारी बातों की भनक शायद उसके कानों में पड़ चुकी थी जब उसने कमरे में प्रवेश किया।

खाना खाने की नीची मेज पर अनेक रंगीन सजे हुए पदार्थ सामने आ गए और हम सब पैर सिकोड़कर तैयार हो गए। मेज के एक सिरे पर श्रीमती रेइको अपने फूलदार किमोनो का दामन सँभालकर बैठी और बेल-बूटे अंकित प्यालों और प्लेटों पर से ढक्कन हटाए तो गर्म भाप की खुशबू, खिड़की पर चढ़ी लता में लगे गुलाब के फूलों की भीनी सुगन्ध के साथ मिश्रित हो दिमाग को तर करने लगी और मुँह मे पानी ले आई। ऐसा लगने लगा जैसे इस छोटे-से घर में चारों ओर फूल खिले हैं और हर वस्तु में सुन्दरता का निखार है। प्याले मे भरे स्वच्छ सूप मे फूल-पत्तियों

शवल के कटे सब्जियों के टुकड़ों को उतराता देखकर और एक घूंट लेकर मैं बोला, 'श्रीमती रेइको, आपने तो खाना बनाने में कमाल कर दिया। कितनी सुन्दरता भर दी है हर ओर !'

'अपने मित्रों को प्रसन्न करने की क्यों न चेष्टा की जाए। अब अधिक प्रशंसा न करके आप गर्म-गर्म खाना खाइए।' उसने अपनी गोरी पतली उँगलियों से पास मे रखी अँगीठी पर 'सुकियाकी' (एक तरह का सब्जी-गोश्त इत्यादि से बना खाद्य-पदार्थ) पकाते हुए कहा।

'हां, इस समय भोजन अधिक कीजिए और बातें कम।' तेरुओ ओकादा ने सूप का प्याला खाली करते हुए कहा।

'मुझे याद है इनके एक मित्र ने एक बार भोजन कम किया था और इधर-उधर की बातें अधिक। मैं इस बार ऐसी गलती नहीं होने दूंगी। आपको छककर खाना पड़ेगा।' रेइको ने कहा।

'क्यों नहीं ! क्यों नहीं ! इस सुन्दर स्वादिष्ट खाने को कौन नहीं जी भरकर खाएगा ! और फिर मैं तो फौजी मैस मे खाना खानेवाला हमेशा भूखा-सा ही रहता हूं।' मैंने उत्तर दिया।

वह सुकियाकी बनाकर हम लोगों को परोस रही थी और उसका सर नीचे झुका था। ऊपर-नीचे लहराते-सँवारे उसके केशों पर रोशनी की झलक और परछाइयां नाच-सी रही थीं। मैं एकटक उधर देखता रहा। अचानक मेरे मुंह से निकल गया, 'क्षमा कीजिए, आपके केशों की लहरें कितनी चमकती हैं और कितनी भली हैं !'

उसके गालों पर गुलाबी चढ़ने लगी और वह कहने लगी, 'धन्यवाद, लड़ाई के जमाने में जब हम स्त्रियाँ अपने केश सँवारकर किसी "ब्यूटी पारलर" से निकलती तो अधिकतर मुझसे कहती "ओ मेडेटो"(O medeto अथवा बधाई-बधाई) ! मेरे केश सदा से अच्छे रहे हैं और उनकी देखभाल भी मैंने बहुत की है।' रेइको ने कहा।

'तुम्हारी क्या चीज नहीं अच्छी मेरी रेइको !" ओकादा ने हँसकर कहा।

'हर समय मजाक करना अच्छा नहीं।' रेइको ने अपने सर को हल्का झटका देते और अपनी बातों का तार जोड़ते हुए कहा, 'हाँ तो उस समय सब "पारलर" में बिजली आना बन्द हो गया था और केश सँवारने में कठिनाई होने लगी थी। फिर भी केश सँवारनेवाले हमारे बालों पर जलते कोयले के छोटे-छोटे टुकड़े रखकर गर्म करते और बहुत-सी लहरें डालते। कितने वे चतुर थे! वहाँ हम स्त्रियों की भीड़ लगी रहती। वे भी क्या दिन थे?' रेइको की बातों का क्रम चल निकला था।

अँगीठी में से फर्श पर गिरे जलते कोयले के एक टुकड़े की ओर इशारा करके ओकादा बोला, 'तुम सुन्दरता के लिए आग के जलते कोयलों को भी सर पर चढ़ा सकती हो, पर इस कोयले को तो जल्दी हटाओ नहीं तो चटाई जल जाएगी।'

उसने चौप-स्टिक से 'सुकियाकी' को खाना आरम्भ कर दिया था।

'क्या खूब है आपका यह खाना!' मैंने प्रशंसा की।

'फौजवाले तारीफ करना खूब जानते हैं। जब तेरुओ युद्ध में चला गया था, मैं बैरकों में से फौजी गाना "बैन्जाई-बैन्जाई (Banazai)" सुना करती थी। हर रात को शायद खाना-पीना होता था और सुबह को सैनिक जहाजों में बैठ-बैठकर दूर देशों को चले जाते थे। एक दिन हमारे देश का एक सैनिक इधर से होकर अपनी बैरक की ओर जा रहा था। उस दिन मैंने अपने बच्चों के लिए सुकियाकी बनाई थी। उस सैनिक को भी एक प्लेट दे दी। उसे खाकर भूरि-भूरि प्रशंसा करता, होंठों पर जीभ फेरता हुआ वह चला गया।' वह पुरानी बातों को याद करने लगी।

मैं सचमुच अपनी जीभ होंठों पर फेरकर 'सुकियाकी' का स्वाद ले रहा था। चट-से जिह्वा अन्दर सिकोड़कर मैं कहने लगा, 'वह भी मेरे जैसा भटकता हुआ कोई सैनिक रहा होगा। मैं भी तो युद्ध के कारण अपने देश से आपके देश में भटक आया हूँ।'

सब हँसने लगे। हँसी-खुशी, उमंग और स्वाद से मैं बहुत देर तक भोजन करता रहा। रेइको गरमा-गरम खाना बनाकर देती जाती। मैं उस

परिवार का स्नेह-भाजन हो चुका था और आज भी हूँ।

९

दिन की कांपती किरणों के ढलाव और आसमानी, सिलेटी बादलों के चढाव के समय मैं डॉक्टर तोशियो तनाका के छोटे-से घर में था। कोने की खिड़की के पार क्षितिज पर रंग गहरा होता जाता···रुई के पहल के-से उड़ते बादल एकत्रित हो जाते। डॉक्टर के किसेरू से उठता धुआँ भी उसी ओर जा रहा था, क्योंकि जब उसके हाथ से मेरे कन्धे का स्पर्श हुआ और मैंने मुड़कर देखा तो वह मेरे पास खडा गहरे कश खीच रहा था।

'क्या देख रहे हो मेजर ?'

'आपके अस्पताल पर चढ़ती काली घटाएँ।'

'इनका क्या देखना ? ये रोज उठती हैं और बरसकर अदृश्य हो जाती हैं।'

'अस्पताल के ऊपर का ही दृश्य देखकर मन भर लेता हूँ; क्योंकि उसके अन्दर तो देखने की आपकी आज्ञा नही।'

वह अपनी सीपी-सी पतली आँखों को मोटे चश्मे के अन्दर मिचकाकर हँसने लगा।

'तिरछी बातें भी मैं समझ सकता हूँ।' उसने अपने कन्धे कुछ सिकोड़कर कहा।

'क्यों नहीं, तिरछे-बाँके चाकू चलानेवाले डॉक्टर क्या नहीं समझ सकते ! पर मेरी बातें तो सीधी हैं। उन काले बादलों के परे मैं कुछ भी नहीं जान सकता। आपके चिकित्सालय के अन्दर तो मेरी उत्सुकता को शान्ति मिल सकती है।'

'फिर यों क्यों नहीं कहते कि चिकित्सालय में चलना चाहते हो ? उसमें रहनेवाले टूटे-फूटे रोगियों को देखना चाहते हो—हमारे देश के उन खंडित भग्न शवों को, जिनकी साँसों का क्रम अब तक नहीं टूटा है।' यह कहते डॉक्टर एक क्षण रुककर गंभीर हो गया। उसके ललाट पर

कुछ सलवटें उभरी और उनमें से कुछ छोटे-छोटे जलकण कनपटी तक छा गए। दोनों होंठ समेटकर वह फिर बोलने लगा, 'मैं बाहर के देशवासियों को इस चिकित्सालय मे पग भी नही रखने देता। वे शायद हमारी हँसी करें, मजाक उड़ाएँ। हमारे देश की रज से बने वे पुतले कभी भी दूसरों के मनोरंजन के साधन नहीं बनेंगे। मैं ऐसा कभी नही होने दूंगा'''कभी''' नही'''नहीं'''

डॉक्टर की सांस तेजी से चलने लगी। उसकी उच्छ्वसित मनोभावनाओं से वातावरण भारी होने लगा। उधर काली घटाएँ फूट-फूटकर रोने लगीं। मैं कुछ सशंकित-सा, कुछ हतबुद्धि-सा केवल यही कह सका, 'डॉक्टर तनाका ! आप तो मुझे जानते है। मैं तो आपके देशवासियों के दु:ख में सदा समवेदना प्रगट करता रहा हूँ। भला रोगियों के कष्ट में कौन सुख ले सकता है ? खेद तो यही है कि उनकी पीडा कोई भी बँटा नही सकता। डॉक्टर ही पीड़ा और रोग का निराकरण कर सकते है।'

'अच्छा चलो। पहले नायलोन का मास्क पहनो जिससे रेडियो ऐक्टिव प्रभाव से बच सको।' उसने कहा।

मैं गर्दन नीची कर उसके पीछे-पीछे हो लिया। मैंने और डॉक्टर ने मे मास्क धारण किए और फिर आगे बढ़े।

हम दोनों एक लम्बा बरामदा पारकर एक और बड़े कमरे में पहुँचे। वह कमरा क्या था एक अजायबघर था। एक ओर जाली के कटघरों में कुछ चूहे फुदक रहे थे। शीशे से बने एक बड़े तालाब मे तरह-तरह की मछलियाँ तैर रही थी। पास में जाली से मढे चौकोर चौखटों में सफेद खरगोश। दूसरी ओर कोने में मेज पर खड़ी एक बिल्ली बिल्कुल स्थिर और एकटक हमे घूरती हुई-सी। कमरे की आधी छत पर शीशे लगे हुए, जिसमें से सूर्य की किरणें नीचे रखे फूल और वनस्पति के गमलों को जीवन-दान देती। कुछ दूर एक बाड़े में बन्द भेडों का एक जोड़ा और दो छोटे मेमने कभी-कभी मे-में करने लगते; उनकी छोटी दुम हिलने लगती।

'डॉक्टर, आप तो जानवरों के भी शौकीन मालूम होते हैं।'

'हां, मैं सभी जीवधारियों से प्रेम करता हूं।' उसकी मुद्रा अभी तक गंभीर थी।

'अच्छे डॉक्टर की यही पहचान है। हर जानदार वस्तु को चाहना और हर वस्तु में जान कायम रखना।' मैंने कहा।

'जीवन की देन तो "ओशाका समा" (Oshaka sama—भगवान् बुद्ध) के हाथ में है।'

'पर जीवित प्राणी तो आपके हाथ में है। हां, तो आपके मरीज कहां हैं ?' मैं पूछने लगा।

'मरीजों को बाद में दिखाऊंगा। पहले मेरी इस अनुसन्धान-शाला को देखो।'

'अनुसन्धान-शाला या पशु-प्रदर्शनी ?' मेरे मुंह से यह शब्द अचानक निकल गए।

'कुछ भी समझो। मेरे लिए यह अनुसन्धान-शाला है—अणु-बम की विभीषिका से सम्बन्धित अन्वेषण का कमरा, इस चिकित्सालय का मुख्य अंग।'

मैं किसी चक्र-व्यूह में घिरा, चकित, उस सैनिक के समान था जिसे कोई मार्ग ही न दिखता हो। सब चौकड़ी भूलकर मैं भी एक मृग-शावक की भांति उन जीवों के समूह में मिला जा रहा था। मेरी किंकर्त्तव्य-विमूढ़ता पर शायद तरस खाकर तोशिया तनाका कहने लगा, 'मेरे मित्र, मैं तुमको यहां की एक-एक बात समझाऊंगा। इस कमरे का प्रत्येक जीव और वनस्पति तेज सक्रिय (Radio-Active) प्रभाव से प्रभावित है।'

मेरे सम्पूर्ण शरीर में बिजली-सी दौड़ गई। ऐसा अनुभव हुआ मानो किसी अदृश्य शक्ति ने मुझे झकझोर डाला। यह कौन-सा प्रभाव है जिसका नामोच्चारण करते ही आत्मा तक डिगने लगे ? मैंने अपने को संभालते हुए कहा, 'डॉक्टर, यह तेज सक्रिय प्रभाव कैसा ? इस प्रभाव का उद्गम कहां से और प्रसार कहां तक ?'

'आपके ये प्रश्न इतिहास में समा चुके हैं—हमारे देश के

हिरोशिमा के धूल-भरे इतिहास में। विदेशियों के अणु-बम ने ऐसे झंझावात को जन्म दिया जिसमे जड और चेतन सब पदार्थ मिटने लगे !'

कमरे के बाहर इस समय वर्षा के साथ तूफान उठ रहा था। पेड़-पौधे झुके जा रहे थे। टीन की छत पर बूंदो की तड़तड़ाहट मानो भेदकर अन्दर घुसी आ रही थी। डॉक्टर के चश्मे पर नमी का धुन्ध-सा छा गया। वह अपने रूमाल से चश्मे को साफ करते हुए कहने लगा :

'इनको मामूली पशु मत समझना। ये नर का नारकीय जीवन से उद्धार करने के साधन हैं—अणु-बम के द्वारा बनाया दुःखित नारकीय जीवन।'

'यह कैसे ?' यह प्रश्न करते समय शायद मेरी आँखें विस्मय से गोल हो गई होंगी, तभी तो डॉक्टर तोशियो ने झट-से कहना शुरू किया, 'मेजर ! आप तो ऐसे अचम्भे से देखने लगे हैं जैसे जादू से भूला कोई हरिण। घबराइए नहीं, यहाँ हर पशु की अपनी एक कहानी है।'

मैं चुप रहा और डॉक्टर के पास खिसककर उसके कन्धे का सहारा लेने लगा। उसने वनस्पति के गमले की ओर इशारा करते हुए कहा, 'इन वनस्पतियों में अणु-बम का प्रभाव निहित हो चुका है। इनको मैं हिरोशिमा से लाया था। इनमे "स्ट्रोन्शियम" हर डाली, पत्ते और अंकुर में समाया है।'

'स्ट्रोन्शियम'—मैंने मन मे दुहराना चाहा, पर शब्द स्पष्ट ही मुँह से फिसल ही पड़े, 'यह क्या बला है स्ट्रोन्शियम ?'

हाँ, हाँ, "स्ट्रोन्शियम" यह "रेडियम" और "कैलशियम" के परिवार का पदार्थ है। घास और पत्तियों द्वारा "कैलशियम" पशुओं में पहुँचता है और उनके दूध से हमारे शरीर मे प्रविष्ट होता है। "कैलशियम" शरीर की हड्डियों की पुष्टि के लिए आवश्यक है—नितान्त आवश्यक। पर "स्ट्रोन्शियम" उतना ही घातक।' तोशियो तनाका इस समय ऐसे लेक्चर दे रहा था जैसे कोई डॉक्टर अपने शिष्यों को समझाता हो।

'इन सब बातों से और अणु-बम से क्या सम्बन्ध ?' मैंने बिना कुछ समझे ही प्रश्न कर डाला।

'घनिष्ठ सम्बन्ध, बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध। अणु-बम के विस्फोट के समय हिरोशिमा पर घातक किरणों—गामा, बीटा, अल्ट्रा-वायलेट (Ultra-violet) और एक्स-रे का प्रसार हुआ। उससे भी घातक और मारक "स्ट्रोन्शियम" अथवा "स्ट्रोन्शियम ९०" या "रेडियो स्ट्रोन्शियम" हर वनस्पति और खाद्य-पदार्थ में समाने लगा, लोगों की अस्थि-मज्जा में प्रवेश करने लगा। मैंने इसके बारे में अनुसन्धान किया है।'

'डॉक्टर, आप तो अब बहुत कठिन विषय पर आते जा रहे हैं।' मैं बोला।

'आपके लिए कठिन हमारे लिए जटिल और जापान के जीवन-मरण का यह विषय! खैर, आपके लिए इस विषमता को सरलता में परिणत करूँगा। देखो इन भेड़ के बच्चों को। इनकी टाँगों की हड्डियाँ कितनी टेढ़ी हो चुकी है। यह है "स्ट्रोन्शियम ९०" का प्रत्यक्ष प्रभाव।' डॉक्टर ने कहा।

मैंने अपनी कमर झुकाकर गौर से मेमनों की टाँगों को देखा। वे सचमुच बल खाकर झुक गई थीं। मैंने और पास जाकर दोनों घुटनों के बल बैठकर और निगाह गड़ाई। 'आप ठीक कहते हैं। इन बच्चों की टाँगें अपने माँ-बाप से भिन्न हैं।'

'इन्होंने "स्ट्रोन्शियम ९०" से मिश्रित अपनी माँ का दूध पिया है। यह पदार्थ "कैलशियम" के साथ-साथ इनकी हड्डियों में सदा के लिए समाहित हो चुका है और अब संसार की कोई भी दवा इनको ठीक नहीं कर सकती। इनकी टाँगे टेढ़ी ही रहेंगी। शायद और टेढ़ी होती जाएँ।'

डॉक्टर अपना लेक्चर दे रहा था और मेरी घुटनों की हड्डियों में दर्द होने लगा था। मालूम हो रहा था कि कमर की रीढ़ की हड्डी झुककर टेढ़ी हुई जा रही है—भेड़ के बच्चों की टाँगों की तरह। यदि यह टेढ़ापन अमर हो गया तो क्या होगा? मैं भड़भड़ाकर उठ खड़ा हुआ और को सीधा करने की चेष्टा करने लगा।

'इन भेड़ के बच्चों की तो जिन्दगी ही खराब हो जाएगी'

मैंने कहा।

'भेड के बच्चों की ही नही वरन् मनुष्य की सन्तति की भी। अब आपने समझा यह कैसा अनर्थ है! यह हिरोशिमा पर ही प्रहार नहीं हुआ, यह हमारी आनेवाली पीढ़ियों का हनन है। घोर, पैशाचिक, अस्पष्ट हनन और मर्दन।' डॉक्टर उत्तेजित होने लगा।

'यह भयंकर रोग है'''अति भयकर और विनाशक। मुझे इसका कभी अनुमान भी न था।' मैंने कहा।

'आप लोगों को अनुमान करने की चिन्ता भी क्यो हो? फौजवालों का तो काम आक्रमण करना है—शत्रु देश पर आक्रमण, उनके देश-वासियों को दलित करना, उनकी सन्तान को विकृत कर डालना!' वह कहता गया।

'हे भगवन्! यह कैसा कलुषित कार्य! नर-भक्षकता का-सा घृणित पाप!' मैं मन-ही-मन विचार करने लगा।

'मेजर! पापों का घट तो हिरोशिमा पर फूट ही चुका। अब तो हम सबका यही महायज्ञ है कि जो जीवित बचे है उनका जीवन हम सुखी कर सकें। हाँ! तो मैं आपको अणु-बम के प्रभाव के बारे में बता रहा था।' डॉक्टर ने फिर अपनी उँगलियाँ चश्मे की एक कमानी पर फेरते हुए कहा।

'डॉक्टर तोमियो, युद्ध में जिन सैनिकों का रक्त बहना था वह तो बह चुका। आप ठीक कहते है। शायद संसार के सब देशवासियों की यही कामना होगी कि अब लोग शान्ति और मित्रता से रहें।' मैंने उत्तर दिया।

'सैनिकों का रक्त बह चुका। उसे कौन रोक सकता था! प्राणियो मे रक्त कम हो जाए उसका इलाज भी है। पर जब रक्त बनना ही बन्द हो जाए तो कौन क्या करे? वह किसी विचार मे डूबा-सा अपने बालो पर हाथ फेरता हुआ धीमे स्वर मे कहने लगा।

'आप तो पहेली-सी बुझा रहे हैं। मेरी कुछ भी समझ में नही आता।'

'मेरे मित्र! यह समझने की बात नही, देखने की बात है। आपको मालूम होगा कि प्रत्येक प्राणी के रक्त मे अरुण कोष और श्वेत कोष होते हैं। दोनो

की नियत संख्या है। इन्ही पर प्राणी का स्वास्थ्य निर्भर रहता है। हमारा शरीर केलशियम क्यों चाहता है, क्योंकि उसकी प्रतिक्रिया से रक्त के जीवित कोष अथवा अरुण कोष बनते है। पर उसका दूसरा सहोदर ''स्ट्रोन्शियम'' इसके प्रतिकूल क्रिया करता है। वह अरुण कोषों का बनना समाप्त कर देता है और फिर रह जाते हैं शरीर मे श्वेत कोष अथवा रिक्त कोष।'

'अच्छा, फिर क्या होता है डॉक्टर ?' मैंने प्रश्न किया।

'होता क्या है—''ल्यूकीमिया'' का रोग, जिससे लोग सिसक-सिसककर और घुल-घुलकर मरते है।'

'आप तो बहुत-से नए पदार्थों और नए रोगों का नाम ले रहे हैं जो मैंने अभी तक सुने भी नही थे।' मैंने आश्चर्य मे कहा।

'और अणु-बम भी तो नया बम था, जिसका नाम शायद किसी देश के सैनिक जानते भी न होंगे। खैर, छोड़िए इन बातों को। आप देखिए इन चूहों को जो इन पिंजड़ों में जिन्दगी के दिन काट रहे हैं।'

मैंने भेड़ के बच्चों से दृष्टि हटाकर चूहों पर लगा दी। कुछ चूहों की दुम छोटी थी और कुछ सफेद लाल-रंग के चूहे एक ओर सुस्त-से बैठे थे। कुछ के बाल उनकी चमड़ी से जगह-जगह पर गायब हो गए थे। मैंने बिना सोचे-समझे कहना आरम्भ कर दिया, 'आपने तो कई किस्म के चूहे पाल रखे हैं— देशी, विलायती, सफेद-लाल, लम्बी दुमवाले, छोटी दुमवाले।'

'ये कई किस्म के चूहे नही हैं। ये सब एक जाति के चूहे थे—जापान देश के चूहे; पर अब वे ''ल्यूकिमिया'' रोग की अलग-अलग दशा में ग्रसित हैं। मैंने इनको ''स्ट्रोन्शियम'' के इन्जेक्शन दिये हैं और अब उसका नतीजा देख रहा हूँ। कुछ चूहों की चमड़ी से उनके रोयें नदारद होने लगे और अब ये सफेद हैं। कुछ को इस रोग के कारण रक्त-केन्सर हो गया है और अब लाल मांस दिखने लगा है और कुछ की दुम ही झड़ गई है।' डॉक्टर ने विस्तारपूर्वक मुझे बताया।

'ओह ! डॉक्टर !! कैसे-कैसे रोग !!! भविष्य में क्या होगा

एक आह भरी।

'भविष्य का क्या विचार करना ! वर्तमान से उलझो। जीवन के यथार्थ को देखो। आओ मेजर, मेरे साथ चलो। जग के मैदान के बाद जीवन-संघर्ष को देखो। मृत्यु की छाया में टिमटिमाती-बुझती जीवन-ज्योति के मिटने की कसक को निहारो।' डॉक्टर ने मेरी दाहिनी भुजा कसकर पकड़ते हुए कहा। वह मुझे कमरे के बाहर खींचकर ले गया।

दूसरी ओर के बरामदे में से चलकर हमने एक लम्बे वार्ड में प्रवेश किया। दो कतारों में लकड़ी के बने तख्तों पर बहुत-से मरीज लेटे थे। सब सर से पैर तक पट्टियों में लिपटे, केवल मुँह और नाक के नथुने खुले। मालूम होता कि मरने के पहले ही कफन लपेट दिया हो। दवाइयों की बदबू और गन्ध मस्तिष्क तक को चकराने लगी। मैंने अपना सफेद रूमाल जेब से निकालकर अपनी नाक पर रख लिया। मरीजों के प्रति समवेदना प्रकट करना तो दूर रहा वहाँ अधिक देर ठहरना भी मुश्किल हो गया। जहाँ मरीजों के नाक के नथुने खुले उसी हवा में साँस ले रहे थे मैं योग-क्रिया-सी किए अपने रूमाल से नाक दबाकर इस डर से कि मेरी साँस का उस वायु से सम्बन्ध न जुड़ जाए, अपने दम को कण्ठ से ऊपर ही नहीं उभरने दे रहा था। दम अन्दर-ही-अन्दर घुटने लगा। यह चिन्ता होने लगी कि कहीं इस वार्ड की दुर्गन्ध में सना "रेडियो स्ट्रोन्शियम" मेरे अन्दर प्रविष्ट न हो जाए। मेरे पलक स्वतः ही मुँदने लगे। ऊपर-नीचे की दन्त-पंक्ति देर तक जोर से भींचे रहने के कारण जबड़ों में दर्द होने लगा। पहले डॉक्टर तोमियो मुझे खींच रहा था, पर अब मैं अपने एक हाथ से उसे आगे ठेल रहा था। फिर भी उसने दो-चार मरीजों के पास रुककर कुछ बात की। कुछ के सिरहाने लटकती तख्तियों को पढ़ा, कुछ के सर पर हाथ फेरा और कुछ को अपनी मुस्कान-भरी दृष्टि से विभोर किया। यह अच्छा हुआ कि न उसने कुछ बात की और न मुझे कुछ उत्तर देने की आवश्यकता हुई। मैं तो आत्म-रक्षा के योग में तल्लीन था।

जब हम वार्ड के दूसरे दरवाजे के बाहर हुए, डॉक्टर ने मुझसे बहुत

अवश्य जाना चाहिए। मैं आज ही उसे देखूंगा।

तीसरे पहर अपनी साइकिल पर सवार हो मैं डॉक्टर तोशियो के घर पहुँच ही तो गया। वह वहाँ नहीं था। पूछने पर मालूम हुआ कि वह अनु-संधान-शाला में है। जब मैं वहाँ गया तो डॉक्टर तरह-तरह के यन्त्रों के बीच में बैठा कार्य में व्यस्त था। मुझे आते देख वह खड़ा हो गया और मुझसे हाथ मिलाते हुए बोला, 'दोस्त, आज बहुत दिनों के बाद आए।'

'हाँ, सरकारी काम करता रहा था।' डॉक्टर, आपके उस रोगी मिनोरु कोजिमा का क्या हाल है ? मैं उसे देखना चाहता हूँ।'

'कोजिमा'''बेचारा कोजिमा ''वह मेरे पास नहीं, अब वह ओशाका समा (गौतम बुद्ध) के चरणों में है।' उसने ऊपर इशारा करते हुए कहा।

'क्या ? क्या उसकी मृत्यु हो गई ?'

'उसके सब स्नायु-तन्तु गल गए। और गलित शरीर अनन्त में समा गया।' डॉक्टर ने गम्भीर होकर उत्तर दिया।

'मैं आज खासतौर से उससे मिलने आया था। डॉक्टर, अब क्या होगा ?'

'अब क्या होगा ? अब उसका छोटा कमरा खाली है। उसमें दूसरा रोगी रहेगा। और उसके अन्त के बाद तीसरा, और चौथा।' तोशियो तनाका पत्थर-जैसी कठोरता से कहता गया।

'आज आपमें यह कठोरता कहाँ से आ गई ?'

'परिस्थितियों के कारण।' उसने छोटा-सा उत्तर दिया।

'ऐसी क्या परिस्थितियाँ ?'

'अणु-बम से उत्पन्न हुई परिस्थितियाँ, तेज सक्रिय रेडियो-ऐक्टिव प्रभाव की समस्याएँ। मेरा सर चकराने लगा है। मेरे प्रयत्न विफल हो रहे हैं। मेरे उपचार व्यर्थ होते जाते हैं। मेरी आँखों के आगे रोगी मर रहे हैं। मैं किस-किसके लिए अश्रु बहाऊँ ?' यह कहते-कहते भी डॉक्टर तोशियो तनाका की आँखें गीली हो चलीं और उसे चश्मा हटाकर रूमाल उन पर रखना पड़ा।

'कर्म करना मनुष्य का ध्येय है और उसका फल देना ईश्वर के अधिकार में है, ऐसा हमारे देश में अधिकतर लोगों का विश्वास है।' मैंने समझाते हुए कहा।

'यह भी ठीक है। पर इन रोगों का निदान शायद ईश्वर के अधिकार के भी परे है। मेरा अनुभव होता जाता है कि अब मनुष्य अपने निर्माता के विधान को भी बदलना चाहता है।' डॉक्टर ने कहा।

'ऐसा कभी भी नहीं हो सकता। इस बात में मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। हमारे धर्म के अनुसार ब्रह्मा सब संसार का और सब प्राणियों का रचयिता है। उसके विधान में कोई भी बाधक नहीं हो सकता।' मैंने अपने धर्म के दृढ़ विश्वास से प्रेरित होकर कहा।

'मेजर! आप उस समय की बातें करते हैं जब मनुष्य के जीवन में धर्म का अनुष्ठान था। अब इस वैज्ञानिक काल में सब-कुछ हो सकता है। एक चिकित्सक के नाते मैं कहता हूँ कि अब तो स्वस्थ और पूर्ण भ्रूण बनना और जन्म-काल के बाद उनका जीवित रहना भी कठिन मालूम होता है। प्रजनन-क्रिया पर भी आक्रमण आरम्भ हो गया है।'

'यह कैसे?'

'मैं इस समय इसी विषय के अध्ययन और अनुसन्धान में लगा हूँ। प्रत्येक प्राणी का प्रादुर्भाव एक बहुत छोटे जीव-कोष अथवा "सैल" से होता है, जो नर-कोष और मादा-कोष के सम्मिश्रण से उत्पन्न होता है। हर "सैल" में बहुत बारीक धागे के-से जोड़े होते हैं, जिनको "क्रोमोसोम्स" (Chromosomes) या "वंश-सूत्र" कहते है। इनमे भ्रूण के माता-पिता की विशेषताएँ निहित होती हैं। जैसे-जैसे भ्रूण बढ़ता है सैल की संख्या भी बढ़ती जाती है और क्रोमोसोम्स हर बच्चे में भिन्नता लाते रहते हैं। क्रोमोसोम्स के अन्तर्गत "जीन्स" (Genes) होते हैं जिनको धागे में बिंधे छोटे मोतियों के समान समझिए। इनका प्रत्येक मोती लगभग एक करोड़ अणु-कणों से बना नव-शिशु का रूप-रंग निर्धारित करता है। तभी तो प्राणी बिल्कुल एक-से नहीं होते। सबमे कुछ-न-कुछ अन्तर होता है।' डॉक्टर

तोशियो तनाका ने मनुष्य के सृजन पर भाषण-सा दे डाला।

मैंने कुछ समझकर और कुछ बिना समझे ही कहा, 'पर, डारविन के सिद्धान्त के अनुसार तो मनुष्य बन्दर का वंशज है।'

'उस समय डारविन के सिद्धान्त सही थे। शायद अब भी ठीक हों, क्योंकि अब मनुष्य-जाति बन्दरों में तो नहीं, पर राक्षसों में तो अवश्य परिणत हो रही है—सूरत-शक्ल मे, आदतों मे, व्यवहार में।' उसने उत्तर दिया।

'इस परिवर्तन का कारण ?'

'अणु-बम।'

'या मनुष्य की मान्यताओ का विध्वंस।'

'दोनों। अणु-बम से मनुष्य जाति की सूरत बिगडती है और मान्यताओं के विनाश से उसके आचार-विचार।'

'तब तो भविष्य अन्धकारमय और हमारी सन्तान धर्म-सिद्धान्तों से च्युत। कैसा भीषण, शुष्क, खंडित प्रस्तरों का-सा आगे का दृश्य !' मैंने कहा।

'कहाँ धर्म और कहाँ सिद्धान्त ? मनुष्य यदि मनुष्य ही रह जाए तो बहुत समझो। हाँ, तो मैं "जीन्स" के बारे मे कह रहा था।' डॉक्टर फिर अपने विषय पर लेक्चर देने लगा, 'जीन्स (genes) अत्यन्त अडिग होते हैं और परिवार की, व्यक्ति की विशेषताएँ सन्तान की अनेक पीढ़ियों तक स्थिर रखते हैं। इनमें परिवर्तन तभी होता है जब सन्तानोत्पत्ति का क्रम ही समाप्त हो जाए या टूट जाए। इस परिवर्तन को वैज्ञानिक भाषा मे म्यूटेशन (mutation) कहते हैं।'

'यदि ऐसा भी हुआ तो भी मनुष्य-जाति तो चलती ही रहेगी। यह सम्भव है कि कुछ परिवारों का अन्त हो जाए।' मैंने कहा।

'पर समाज तो परिवारों का समूह है। यदि एक परिवार दूषित हुआ तो समाज अछूता नहीं बच सकता। और फिर अणु-बम का प्रभाव तो पूर्ण समाजवादी है। ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, जाति या देश मे भेद नहीं रखता।

सब व्यक्तियों में उससे प्रसारित एक्स-रे, गामा और बीटा किरणें एक-सा मारक असर करती हैं। वह "क्रोमोसोम्स" और रक्त-कोषों का विनाश कर डालती हैं। उनसे "जीन्स" में "म्यूटेशन" होने लगता है। मैं यही अन्वेषण कर रहा हूँ।' डॉक्टर अनुसन्धान-शाला में रखी एक्स-रे की मशीन की ओर इशारा करते हुए बोला।

'आपके अनुसन्धान तो सारे संसार का कल्याण करेंगे। कितना महत्त्वपूर्ण कार्य आप कर रहे हैं!' मैंने कहा।

'मेजर! मैंने मछलियों, चूहों और सफेद खरगोशों पर इन मारक किरणों का प्रयोग किया है। "रेडिएशन" अथवा तेज सक्रिय का "रौजन यूनिट" (Roentgen Units) में माप किया है। उनका मानव-सन्तति पर प्रभाव देखा है। देखो, इन बोतलों में रखे मनुष्य-भ्रूणों को देखो, इनको आँख फाड़कर ध्यान से देखो। अब मानव-जाति स्थिर रहेगी अथवा नष्ट होगी?' तोशियो तनाका ने अपनी आवाज भारी कर आवेग में कहा। इंगित करती हुई उसकी उँगली और हाथ रोष से काँपने लगे और उसके ललाट पर सलवटें उभर आईं, चिन्ता और क्षोभ को व्यक्त करती टेढ़ी सलवटें और रेखाएँ।

मैंने ध्यान से भिन्न-भिन्न बोतलों में रखे मृत भ्रूणों को देखा और मैं अवाक् रह गया। न वे मनुष्य के भ्रूण थे और न किसी अन्य जानवर के भ्रूण, न वे एक आकृति के और न एक साँचे के। एक भ्रूण के दो बड़े सर, जिनमें नाक और आँख का आकार उभर रहा था मगर कान गायब। भुजाओं की जगह माँस की दो फुनगियाँ। न पैर, न वक्ष और न पेट। सब सिकुड़कर माँस का गोलाकार एक पिण्ड। दूसरे भ्रूण में टाँगों की अनोखी लम्बाई। बहुत लम्बी टाँगें, उन पर मनुष्य का-सा छोटा सर रखा हुआ और हाथ नदारद। मुझे भारत के ग्राम-बालकों के खिलौने 'टेसू' का ध्यान हो आया, कैसे वे बाँस की लम्बी खपच्ची को बाँधकर और उस पर गीली मिट्टी का छोटा लौंदा रखकर 'टेसू' को अस्तित्व प्रदान करते थे। जग-निर्माता ने शायद उन बच्चों से इस भ्रूण-रचना का आकार सीखा होगा।

तीसरा भ्रूण गोल-मटोल मांस की गेंद—टेनिस की गेंद के बराबर। उस चिकने गोले में न सर, न पैर, न हाथ और न पांव। एक जगह छोटा छिद्र, जिसको डॉक्टर ने कहा कि यह भ्रूण का मुख है।

चौथे भ्रूण का आकार तो मनुष्य के बालक-जैसा पर दोनों भुजाएँ अत्यधिक लम्बी—घुटनों से नीचे पिंडलियों तक लटकती। इसको तोशियो ने बोतल में खड़ा करके रखा था। छुटपन में मैंने कहानी सुनी थी कि जिस बालक की भुजाएँ लम्बी होती है वह चक्रवर्ती राजा होता है। यह बेचारा राजा तो नहीं हो सका, पर चक्रवर्ती होने की उत्कण्ठा रखनेवाले देशों के शस्त्रों का परिणाम अवश्य था।

मेरा गला सूखने लगा। चिन्ता और विस्मय से शायद मैं अपनी दोनों भुजाएँ सीधी कर उँगलियों से घुटने छूने की क्रिया कर रहा हूँगा या उनकी लम्बाई नापने की चेष्टा में संलग्न रहा हूँगा, कि डॉक्टर ने मुस्कराते हुए मेरे कन्धे पर हाथ रखकर कहा, 'यह फौजी कसरत करने की जगह नहीं, डॉक्टर के अन्वेषण का कमरा है और फिर आपकी कमर तो सुडौल है, उसे कम करने का व्यायाम करने की क्या जरूरत ?'

'नहीं डॉक्टर, मैं व्यायाम नहीं कर रहा था। मैं तो इन भ्रूणों को देख रहा था।' मैंने झेंपते हुए कहा।

'इन मृत भ्रूणों से भी अधिक दिलचस्प जीवित खरगोश और मछली के बच्चों को दिखाऊँ। मेरे साथ दूसरे कमरे में चलो।'

हम दोनों उसी बड़े कमरे में फिर पहुँच गए जिसको उसने पिछली बार दिखाया था। खरगोश के पिंजड़े के एक कोने में अद्‌भुत सफेद बच्चा। डॉक्टर फिर कहने लगा, 'इस खरगोश के बच्चे को भी ध्यान से देखो। यह एक नई नस्ल दुनिया में लाएगा। दो कानोंवाली और तीन मुखोंवाली।'

'ओह ! इसके तो सचमुच तीन सर और दोनों ओर लम्बे दो कान—सब फड़कते और सब चलते।' इस समय खरगोश का वह बच्चा घास और दाना तीनों मुँह से जल्दी-जल्दी कुतर रहा था। वह अपनी आगे की दोनों टाँगों में दाना पकड़े बारी-बारी से तीनों मुखों के आगे ले जाता और सबको

'इसमें आश्चर्य क्या ? जो प्राणी हमारे देश पर अणु-बम गिराकर हमारे देशवासियों को घृणित रोगों से ग्रस्त कराकर गए हैं, जो हमको कच्चा चबा डालना चाहते थे, क्या वे जीवित रह सकते हैं ? कभी नही ! इसी बिल्ली की तरह उनका भी नाश हो सकता है। मैंने इस बिल्ली को यहाँ इसीलिए रखा है।' डॉक्टर फिर गम्भीर हो गया और मेरा हाथ पकड़कर उस ओर ले गया जहाँ मछलियाँ पानी मे तैर रही थी।

'कैसी रगीन छोटी-बडी मछलियाँ आपने पाल रखी हैं !'

'इनका रंग इस लैम्प के प्रकाश में अच्छा दिखेगा।' तोशियो तनाका ने एक रिफ्लेक्टर लगी बिजली की लैम्प जलाई, जिसका प्रकाश मोटे शीशे को पारकर जल के अन्दर तक पहुँच गया।

'वह उस कोने मे क्या तैर रहा है ? दो टाँगो का मेंढक या पैरवाला सांप।' मैंने विस्मित हो प्रश्न किया।

यह सुनकर डॉक्टर जोर से हँस पडा। बडा कमरा हँसी से गूँज गया। मुझे झकझोरते हुए वह कहने लगा, 'मेरे मित्र ! मछली के बच्चों को मेंढक और सांप कहते हो ? ये तो इन्ही रेडियो-ऐक्टिव मछलियों की सन्तति है।'

'ओह ! क्या यह भी हो सकता है ! मछलियों के टाँगें निकल आएँ ?'

'आजकल सब-कुछ हो सकता है। इस मछली के बच्चे के दूसरे भाई को देखो। उसका मुँह चपटा हो गया है और उसके एक ही आँख है, परो की जगह ऊपर उठे दो लम्बे कान-से निकल आए हैं।'

मैंने फिर गौर से देखा। एक मछली मे उत्पन्न उसके बच्चो के भिन्न स्वरूप। मुझे बताया गया था कि कुछ जीव-जन्तु संसार से मिट रहे हैं। उनकी संख्या कम हो चुकी है और शायद भविष्य मे उनकी जात ही विनष्ट हो जाए। पर यहाँ तो एक ही जीव के अनेक रूपो की रचना हो रही थी। मेरा सर घूमने-सा लगा और मैं विचार करने लगा—सचमुच सृष्टि की क्रिया ही बदलने लगी। भगवन् ! हम सब पर दया कीजिए। इस संसार को देव-दानव की भूमि मे परिणत होने से बचाइए। डॉक्टर का सहारा

लेते हुए यह शब्द अचानक मेरे मुंह से निकल गए, 'डॉक्टर तोशियो ! आपने तो मेरी आँखें खोल दी। मेरा मस्तिष्क भ्रमित होने लगा।'

'आजकल सबको आँखें खोलकर चलना चाहिए और दिमाग ठीक-ठीक रखना चाहिए। मैंने ये मछलियाँ हिरोशिमा की नदी से पकड़वाई थी और उन पर अनुसन्धान किया। जिस जल मे ये थी उससे कई गुना रेडियो-ऐक्टिव प्रभाव इनमें था। इनमे यह प्रभाव "जिन्क ६५" (Zinc 65) के कारण हुआ—यह पदार्थ अणु-बम के विस्फोट मे अधिक न होने पर भी इन मछलियो मे बहुत अधिक था। शायद ये जल के अन्दर की घास-पात खाती रही होंगी जिनमे जिन्क और स्ट्रोन्शियम बहुत मात्रा में भिद जाती है।'

डॉक्टर ने फिर विस्तारपूर्वक वैज्ञानिक भाषा मे बात करना प्रारम्भ कर दिया।

'आपने जल और थल के सब जीवों पर कठिन अनुसन्धान करके बड़ा ही गहन अध्ययन किया है। आप मामूली चिकित्सक नहीं, मनुष्य-जाति के अग्रगण्य पोषक हैं।' मैंने उसके अथक परिश्रम की सराहना की।

'कोई भी पुरुष किसी प्राणी का पोषक नही हो सकता। हाँ, प्रयास करने से प्रकृति के गूढ रहस्यों की झाँकी अवश्य ले सकता है। आओ मेजर, मेरे साथ आओ ! तुमको ऐसी ही झांकी दिखाऊँ।'

हमने एक तीसरे कमरे मे प्रवेश किया। इस कमरे में शीशे के एक वैक्यूम चेम्बर में कुछ कीटाणु किलबिला रहे थे। सब ऐसी शक्लों के जिनको मैंने अभी तक कहीं भी नहीं देखा था। किसी का अग्र भाग लम्बी-पैनी बल्लम-सा, कोई घूमी हुई पतली सूँडवाला, किसी के टेढ़े अस्तित्व में बहुत बारीक रोएँ, और कोई एक ऐंठी हुई-सी रस्सी के छोटे टुकड़े-सा। मैंने चेम्बर की दीवार के पास अपना मुँह इतना सटा दिया कि मेरी श्वासों से शीशे के कुछ भाग पर धुन्ध छा गई।

'मेरे मित्र ! ये सब भयंकर संक्रामक रोगों के कीटाणु यहाँ बन्द हैं। ये साधारणतः आँखों से नही देखे जा सकते। केवल 'माइक्रोस्कोप' (अथवा

अणुवीक्षण) से देखने में आते थे।' डॉक्टर बतलाने लगा।

'तब क्या किसी विशेष भोजन पर आपने इनकी पुष्टि की है?' मैंने प्रश्न किया।

'मैंने नहीं, प्रकृति ने इनकी पुष्टि की है। रेडियो-ऐक्टिव होने पर इनका स्वास्थ्य निखरा है। कोई इस प्रभाव से मिटता है और कोई पनपता है। ये दूसरों को मिटाने वाले अब हृष्ट-पुष्ट होकर आपस में ही जूझ रहे हैं।' डॉक्टर तोशियो के मुख पर शरारत-भरी मुस्कान थी।

'वाह री रेडियो-ऐक्टिविटी! घातक कीटाणु का उद्धार और जीवित प्राणियों का हनन?' मैं कहने लगा।

'मेजर, इसको प्रकृति की करामात कहते हैं। यह "म्यूटेशन" का जीवित परिणाम है। यह "जीन"-परिवर्तन का प्रभाव है।'

डॉक्टर तोशियो तनाका की मुस्कान, विषाक्त हँसी में परिणत हो गई। एक लम्बी साँस भरकर वह कहने लगा, 'यह भी सम्भव है कि "जीन"-परिवर्तन में मनुष्य की नस्ल ही खत्म हो जाए। ये संक्रामक रोग के कीड़े-मकोड़े कई फुट बढ़कर पृथ्वी पर वास करने लगें।'

इस समय कोई उड़ता हुआ मच्छर मेरे एक कान के ऊपरी भाग पर बैठ गया था। उसका बोझ बढ़ता हुआ-सा मालूम देने लगा। उसके पैने डंक ने तीर मारा। ऐसा लगने लगा जैसे मच्छर से निकली कई सूँडों ने मेरा गला लपेटकर कसना शुरू कर दिया हो। साँस घुटने लगी। बड़ी मुश्किल से अपना निर्जीव-सा हाथ उठाकर जब मैंने उस कीटाणु को झटक दिया तब मेरे होश-हवास ठीक हुए। माथा पसीज चुका था। मैंने रुमाल निकाल अपने ललाट पर रखा।

'क्यों, क्या घबराने लगे मेजर?' डॉक्टर कहने लगा।

मैं चुप था।

'अगर घबराए नहीं हो तो आओ एक वस्तु और दिखाऊँ।'

'अवश्य।'

'तो चलो।'

हम पासवाले एक छोटे कमरे में पहुँचे। वहाँ देखा एक भ्रूणवत् शिशु इन्क्यूबेटर में रखा था।

'अभी तक तुमने रेडियो-ऐक्टिव प्रभाव से प्रभावित मृत भ्रूण देखे हैं। अब देखो मनुष्य-जाति की जीवित सन्तति।'

'अरे! यह बच्चा तो अंग-विहीन मांस का लोथड़ा है।'

'हाँ, इसकी शरीर-यष्टि मनुष्य-जैसी है, पर इसके आँख, कान, नाक, हाथ-पाँव अभी नहीं बन पाए। यह कच्चे रूप में जन्म भ्रूण है।' डॉक्टर ने कहा।

मैंने फिर ध्यानपूर्वक देखा। उस भ्रूण की नाक के स्थान पर दो छिद्र थे, जिनसे सम्भवतः श्वास-प्रक्रिया चल रही थी और डायफ्राम धमनी की तरह ऊपर-नीचे होता था।

'यह जीवित है, डॉक्टर?'

'हाँ, पर इसकी जन्मदात्री मर चुकी। वह रेडियो-ऐक्टिव रोग से ग्रसित थी, और यह देन हमको दे गई है।'

'कैसी भयावनी और विकृत यह देन! अब तो भगवान् ही रक्षक है।' मेरे मुँह से ये शब्द निकल गए।

'मेरे मित्र, मेजर! आपने बहुत-से संग्राम लड़े होंगे। पर यह मनुष्य के जीवन-मरण का युद्ध है। आपने देखा, राक्षसों की नवीनतम जाति का प्रादुर्भाव! सम्भव है इस संग्राम में मनुष्य-जाति ही समाप्त हो जाए और प्यारी मनुष्य-जाति की यह विकृत आकृति पृथ्वी-तल पर अवशिष्ट रह जाए।' कहते-कहते डॉक्टर अपना मोटा चश्मा हाथ में ले अपने रुमाल से साफ करने लगा।

मैं एक हाथ अपने हृदय पर रखे उस जीवित भ्रूण की हृदय-गति को माप रहा था। उसकी गति भी मेरी ही जैसी थी। मालूम नहीं मैं वहाँ कब तक खड़ा रहा। भविष्य की छाया गहरी, टूटी, सिकुड़ी, विकृत-सी मेरे मन पर छा गई।

अणुवीक्षण) से देखने मे आते थे।' डॉक्टर बतलाने लगा।

'तब क्या किसी विशेष भोजन पर आपने इनकी पुष्टि की है?' मैंने प्रश्न किया।

'मैंने नहीं, प्रकृति ने इनकी पुष्टि की है। रेडियो-ऐक्टिव होने पर इनका स्वास्थ्य निखरा है। कोई इस प्रभाव से मिटता है और कोई पनपता है। ये दूसरों को मिटाने वाले अब हृष्ट-पुष्ट होकर आपस में ही जूझ रहे है।' डॉक्टर तोशियो के मुख पर शरारत-भरी मुस्कान थी।

'वाह री रेडियो-ऐक्टिविटी! घातक कीटाणु का उद्धार और जीवित प्राणियो का हनन?' मैं कहने लगा।

'मेजर, इसको प्रकृति की करामात कहते हैं। यह "म्यूटेशन" का जीवित परिणाम है। यह "जीन"-परिवर्तन का प्रभाव है।'

डॉक्टर तोशियो तनाका की मुस्कान, विषाक्त हँसी में परिणत हो गई। एक लम्बी साँस भरकर वह कहने लगा, 'यह भी सम्भव है कि "जीन"-परिवर्तन मे मनुष्य की नस्ल ही खत्म हो जाए। ये संक्रामक रोग के कीडे-मकोड़े कई फुट बढकर पृथ्वी पर वास करने लगें।'

इस समय कोई उड़ता हुआ मच्छर मेरे एक कान के ऊपरी भाग पर बैठ गया था। उसका बोझ बढ़ता हुआ-सा मालूम देने लगा। उसके पैने डक ने तीर मारा। ऐसा लगने लगा जैसे मच्छर से निकली कई सूँडों ने मेरा गला लपेटकर कसना शुरू कर दिया हो। साँस घुटने लगी। बड़ी मुश्किल से अपना निर्जीव-सा हाथ उठाकर जब मैंने उस कीटाणु को झटक दिया तब मेरे होश-हवास ठीक हुए। माथा पसीज चुका था। मैंने रूमाल निकाल अपने ललाट पर रखा।

'क्यों, क्या घबराने लगे मेजर?' डॉक्टर कहने लगा।

मैं चुप था।

'अगर घबराए नही हो तो आओ एक वस्तु और दिखाऊँ।'

'अवश्य।'

'तो चलो।'

हम पासवाले एक छोटे कमरे मे पहुँचे। वहाँ देखा एक भ्रूणवत् शिशु इन्क्यूवेटर मे रखा था।

'अभी तक तुमने रेडियो-ऐक्टिव प्रभाव से प्रभावित मृत भ्रूण देखे हैं। अब देखो मनुष्य-जाति की जीवित सन्तति।'

'अरे! यह बच्चा तो अंग-विहीन मांस का लोथडा है।'

'हाँ, इसकी शरीर-यष्टि मनुष्य-जैसी है, पर इसके आँख, कान, नाक, हाथ-पाँव अभी नही बन पाए। यह कच्चे रूप मे जन्म भ्रूण है।' डॉक्टर ने कहा।

मैंने फिर ध्यानपूर्वक देखा। उस भ्रूण की नाक के स्थान पर दो छिद्र थे, जिससे सम्भवतः श्वास-प्रक्रिया चल रही थी और डायफ्राम धमनी की तरह ऊपर-नीचे होता था।

'यह जीवित है, डॉक्टर?'

'हाँ, पर इसकी जन्मदात्री मर चुकी। वह रेडियो-ऐक्टिव रोग से ग्रसित थी, और यह देन हमको दे गई है।'

'कैसी भयावनी और विकृत यह देन! अब तो भगवान् ही रक्षक है।' मेरे मुँह से ये शब्द निकल गए।

'मेरे मित्र, मेजर! आपने बहुत-से संग्राम लड़े होंगे। पर यह मनुष्य के जीवन-मरण का युद्ध है। आपने देखा, राक्षसों की नवीनतम जाति का प्रादुर्भाव! सम्भव है इस संग्राम में मनुष्य-जाति ही समाप्त हो जाए और प्यारी मनुष्य-जाति की यह विकृत आकृति पृथ्वी-तल पर अवशिष्ट रह जाए।' कहते-कहते डॉक्टर अपना मोटा चश्मा हाथ मे ले अपने रूमाल से साफ करने लगा।

मैं एक हाथ अपने हृदय पर रखे उस जीवित भ्रूण की हृदय-गति को माप रहा था। उसकी गति भी मेरी ही जैसी थी। मालूम नही मैं वहाँ कब तक खडा रहा। भविष्य की छाया गहरी, टूटी, सिकुडी, विकृत-सी मेरे मन पर छा गई।

११

क्रूरे के टूटे नगर में मेरी टूटी बैरक, और खण्डित मानवों का व्यथित, क्षुभित उत्पीडन—सबने मिलकर मेरे व्यक्तित्व को द्रवित कर बिखेर-सा दिया। मैं अपने को ही भूलने लगा। बैरक के कोने में कभी अकेला बैठा-बैठा मैं अपने मन-मुकुर के बिखरे टुकड़ों को बीन-बीनकर जोड़ना चाहता। उनको एकाकार कर कल्पना का रंग भर अपने अस्तित्व का प्रतिबिम्ब निहारना चाहता। पर मुझे सफलता न मिलती। टूटे, धुंधले टुकड़ों में से किसी रोगी का श्वेत कफन में लिपटा निश्चल शव झलकता, तो कभी पीले, मुरझाए मुख पर कैंसर के लाल रक्त स्राव के धब्बे उभरते, और कभी गलित जबड़ों के पार बिखरी-हिलती दन्त-पंक्ति झड़ती। कहीं कराह, कहीं आह और कहीं मौन वेदना का मूर्त रूप। शायद समवेदना तरल हो मेरे नेत्रों में उफन पड़ी थी जब कैप्टेन नन्दलाल शाह ने पीछे से मेरे दोनों कन्धे दबाते हुए कहा, 'मेजर! यह आपकी आँखों में निर्झरिणी क्यों बह रही है? क्या घर की याद सताने लगी?'

'नहीं नन्दलाल, नहीं तो! एक आँख में कोई तिनका चला गया है।' मैं बहाना बनाते हुए बोला और अपने रूमाल को आँखों पर रख लिया।

'आपके दोनों नेत्र लाल थे इसलिए मैंने पूछा। खैर, आप शायद मुझसे दुराव करना चाहते हैं। जाने भी दीजिए। तिनका आँख में रहे तो निकल भी सकता है, मगर यदि दिल में समा जाए तो उसकी कसक वेदब होती है और निकलना भी असम्भव।' यह कहकर वह हँसने लगा।

'नन्दलाल, मजाक न करो। मैंने कोई बात क्या कभी तुमसे छिपाई है? मैंने इस देश में मनुष्य-मण्डन के ऐसे दृश्य देखे हैं जो भुलाए नहीं भूलते।'

'किस युद्ध में मनुष्य-मण्डन नहीं होता? यह कोई नई बात नहीं। जीवन में दुःख को बहुत घूरकर नहीं देखना चाहिए, नहीं तो नेत्रों में पानी आ जाता है। सुख और मस्ती में आनन्द लेने में नयन सुन्दरता निरखकर अटपटे रहते हैं और मन बल्लियों उछलने लगता है—हा-हा-हा-हा!' वह

उछल-उछलकर कहने लगा।

'मगर सुख में भी दुःख समाया रहता है।'

'वाह रे दार्शनिक ! इसमें आपने क्या नई बात कह डाली ! यह तो प्रतिदिन दिखती है। गुलाब के पौधे में काँटे भी हैं, फूल भी। काँटों में उलझो, खूनाखून हो जाओगे। किसी डॉक्टर के पास भागना पड़ेगा। फूल चतुराई से तोड़ो, उसमें सुगन्ध पाओगे। उसे किसी सुन्दरी को भेंटकर रूप और लावण्य की छटा देख सकोगे।'

'आजकल सुन्दरियों की खोज में लगे हो क्या ?'

'सुन्दरियों की खोज मे नही, केवल एक कामिनी के प्रेम-पाश में।'

'वह कौन-सी ?'

'बताऊँगा। मेरा उसूल है—केवल एक समय एक बेल को सींचना, जिसमे वह हरी हो मुझसे ही लिपट जाए।'

'अच्छा सिद्धान्त है। पर वह लता हरित हो तुमसे अभी लिपटी या नही ?'

'आपको मालूम है कि जापानी अपने सलोने पौधों को छोटा ही रखते हैं। नाटे, बौने पौधों मे ही रंग उभरता है। वैसे ही मेरी छोटी प्रेयसी भी किसी वसन्त में मेरी होगी। उसमें प्रेम का अंकुर शायद धीरे-धीरे बढ़ रहा होगा।' आँखों के चारों ओर के काले घेरों में उसके नेत्र प्रेम-विह्वल हो मुँदने-से लगे।

'ओहो ! तो अभी नन्दलाल की गोपी ने वंशी की ध्वनि नही सुनी और वह स्नेह से आतुर भी नहीं हुई है। कौन-सी है वह ऐसी गोपी ?' मैंने नन्दलाल को छेड़ा।

'वह गोपी नही, वह गेशा-गर्ल है। क्योतो की संगीत कलाकार और मादकता की सजीव मूर्ति !" नन्दलाल बोला।

'तो कैप्टेन ने मदिरा कूरे में पी और मादकता दूर नगर क्योतो में पाई। क्या तुम वहाँ इस बीच में जाते रहे हो ?'

'मैं जाता रहा हूँ और तुमको भी ले चलूँगा। वहाँ तुमको "साके"

पिलवाऊँगा—उन पतली मुलायम उँगलियों से। वह छलकते "साकाज़ूकी' (मदिरा के छोटे प्याले) में तुमको भी रस पिलाएगी।' नन्दलाल कहने लगा।

'कौन है बला वह, जिसका नाम तुम छिपाना चाहते हो ?'

'मैं क्यों छिपाऊँगा अपनी कोईको सान का नाम ! उसका गेशाहाउस कौन नहीं जानता, जिसकी ख्याति इस नगर तक पहुँची है।'

'अच्छा, तो क्या वह कहानियों मे वर्णित सिंहल द्वीप की कोई पद्मिनी है, जिसका नाम सुनते ही तुम उसी ओर भागे।' मैंने कहा।

'मेजर ! आप रहे निरे भौंडे और नीरस ही। न किसी कूकती कोयल की परख और न किसी लचीली, इठलाती, फूलों से लदी डाली से स्नेह। सुस्त पड़े-पड़े आँसू बहाना और अपने को घुलाते रहना। यह भी कोई जिन्दगी है ! तुमको मेरे साथ क्योतो चलना पड़ेगा। तुम्हारा फफकना मैं मुस्कान मे परिणत करूँगा।' नन्दलाल ने एक हाथ जोर से हिलाते हुए जोश मे कहा।

'मैं तुम्हारे साथ चलूँगा, पर एक शर्त पर।'

'वह क्या ?'

'तुमको मेरे साथ हिरोशिमा चलना पड़ेगा। मैं वहाँ का युद्ध मे हुआ विध्वंस देखना चाहता हूँ।' मैंने कहा।

'मैंने ठीक ही कहा था। आपका मन अट्टालिकाओं मे नहीं खण्डहरों मे अधिक लगता है। पुष्प-वाटिका को न देखकर आप सूखे पत्थरों पर उगी कँटीली नागफनी में अधिक आनन्द लेते हैं।'

'कुछ भी कहो। मैं क्योतो तभी चलूँगा जब तुम हिरोशिमा चलने का वादा करो।'

'अच्छा, अच्छा ! मेजर ! मैं आपको क्योतो ले चलूँगा और आप मुझे हिरोशिमा दिखाइएगा। फिर हम दोनों तय करेंगे कि कौन-सी जगह अच्छी है।' नन्दलाल बोला।

हम दोनों इधर-उधर की बातें कुछ देर करते रहे, और फिर अपने-

अपने काम में व्यस्त हो गए।

●

कैप्टन नन्दलाल और मैं कुछ दिनों की छुट्टी ले क्योतो नगर को रवाना हो गए। जब हम वहाँ पहुँचे फूलों का मौसम अपने निखार पर था। हर ओर लाली और हर बगीचे में रंगीन पुष्प। सचमुच हम शुष्क वातावरण से पुष्प-उद्यान में आ पहुँचे थे।

क्योतो नगर में जापान देश की संस्कृति विकसित है। अनेक बुद्ध-मन्दिर और शिण्टो धर्म-पूजन की वेदियाँ यहाँ हैं। दिन-भर हम दोनों इन स्थानों का दर्शन करते रहे। हमारी मातृभूमि से प्रसारित यह धर्म जापान देश के इस नगर के कोने-कोने में सजीव हो गुंजायमान था। मन्दिरों की स्वच्छता, उनकी शिल्पकला अनूठी और मनमोहक थी।

'चलो मेजर! यहाँ के नामी कत्सूरा (Katsura) महल भी देख डाले जाएँ।' नन्दलाल शाह ने कहा।

'जहाँ ले चलो वहीं चलूँगा। दिन में महल और रात में गेशागृह।' मेरे मुँह से निकल गया।

'आप ठीक कहते हैं। हर स्थान देखने का यहाँ समय निर्धारित-सा है। यह महल देखने का समय है।'

कैप्टेन नन्दलाल मुझे इन अनूठे महलों में ले गया।

'मेजर! इस देश की हर वस्तु के पीछे एक इतिहास है। इन भवनों की अपनी एक कहानी है।' नन्दलाल कहने लगा।

'पुरातन संस्कृति के क्रोड़ में इस देश के समाज की आकांक्षाएँ मुखरित हैं। और इतिहास समाज की आत्मा की कहानी है। जापान की सभ्यता भी तो अटूट और दृढ़ है।' मैंने कहा।

'कहा जाता है ये महल इस देश के प्रसिद्ध कलाकार "कोबोरी" ने एक राजकुमार के लिए निर्मित किए। पर कोबोरी बड़ा चतुर था। उसने तीन शर्तें राजकुमार पर लगा दीं—इनके व्यय पर कोई प्रतिबन्ध न निर्माण-काल की कोई अवधि न हो और जब तक यह पूर्ण न हो

इनको न देखें।' नन्दलाल ने कोबोरी की प्रशंसा करते हुए कहा।

'तभी तो उसने पृथ्वी पर स्वर्ग के ये खण्ड रच डाले! कैसी कला, और कैसे मनोरम बगीचे, कैसे कल-कल करते झरनो के किनारे पत्थर से बने पथ! और कैसे महकते पुष्प और बल खाती लतिकाएँ! नन्दलाल, तुमने अपने प्रेमालाप का क्या खूब नगर चुना है!' मैं कहने लगा।

'यदि मैं राजकुमार होता तो अपनी कोइको के साथ यहाँ उस कमरे में रहता जहाँ से पूर्णिमा के चन्द्र की प्रथम रजत-रश्मियाँ हमारा स्पर्श करती। कहते हैं कि राजकुमार इस कमरे से घने वृक्षो की उस पंक्ति के ऊपर झाँकते चन्द्र की झाँकी लेता था और इस सुन्दर तालाब के स्वच्छ सलिल में उसका बिम्ब देखता।'

'तुम शायद ऐसा न कर सकते। तुम अधीर, उद्विग्न प्रेमी चन्द्र को भी क्षितिज से तोडकर अपने पास ले आते।'

'क्यो नही, हर सुन्दर वस्तु को अपना बना लेना चाहिए; अपने पास रखना चाहिए।'

'तभी तो न तुम्हारे हाथ चन्द्र लगा और न उसकी धवल चन्द्रिका। टिमटिमाती तारिकाओं के जाल में सदा उलझे रहे और उलझते रहोगे।' मैंने नन्दलाल पर व्यंग्य कसा।

'मेजर! समय दिखा देगा कि मैं इस देश की किसी सुन्दरी को वश में कर सकता हूँ या नही।'

'अच्छा, अच्छा! देखा जाएगा। इस समय तो यहाँ की रमणीकता निहारी जाए।' मैंने उत्तर दिया।

हम लोगो ने इन महलो का वह कमरा भी देखा जहाँ जापानियों के प्रचलित रिवाज से चाय पेश की और पी जाती थी। कत्सूरा के महलों मे हम उन पुराने महलों को देखने गए जहाँ पहले जापान के सम्राट् रहा करते थे। क्योंकि एक समय में इस देश की राजधानी थी। चीन के विद्वान् पुरुषों और साधुओं के जगह-जगह दीवारों पर चित्र चित्रित थे। महलों की सुन्दर सुगन्धित पुष्प-वाटिका में मालूम नहीं हम दोनों कब तक टहलते रहे।

मेरे मन में इस नगर की महान् सत्ता और जापान की संस्कृति के प्रति श्रद्धा उमड़ने लगी। अनायास ही भारत का इतिहास अदृश्य सूत्रों से बँधा अदृश्य शक्ति से प्राणित होने लगा। यदि कही चन्द्रगुप्त के विशाल भवन जीवित होते, पाटलिपुत्र में संचित संस्कृति अँगडाई लेती, नालन्दा के विद्वानों के मन्त्र प्रतिध्वनित होते। अपनी प्राचीन नगरियाँ—मायापुरी, अवन्तिका और कांची एक राग से सप्त सिन्धव आकाश को गुंजाती रहती। यदि देश पर बाह्य आक्रमण न होते और सब मन्दिर, भवन स्थिर रहते तो सम्भवतः संसार में हमारी कला, हमारी संस्कृति और अधिक जाज्वल्यमान होती।

अब दिन ढल चला था। छिपता दिनकर मानो उल्लसित हो इस कला-समूह पर रंग और गुलाल उड़ा रहा था। भवनों के छत्र स्वर्णिम हो दमक रहे थे। मेरे मानस-पट पर तिरछी रश्मियों की आभा में सोमनाथ के सीधे ऊँचे मन्दिर-कलश उभरने लगे। यदि वह खण्डित न हुआ होता तो मेरा जागृत स्वप्न भी साकार रहता।

●

चौड़ी सडक छोड जब हम पतली गली के सुदूर छोर पर पहुँचे, अँधेरा हो चुका था। एक खिडकी मे लगे लकड़ी के डण्डों की बड़ी परछाईं उसके अन्दर की मन्द ज्योति से आलोकित हो गली की पूरी चौड़ाई पर फैली थी। अँधियारे के ऊपर वह सोने की-सी नक्काशी, कालिमा के हृदय पर वे सुनहले इन्द्रजाल देख हम दोनों वहाँ ठिठक गए। वह तो सचमुच इन्द्रजाल ही था, क्योंकि दूसरे क्षण बडी लटों से घिरा एक सर बीच मे उठने लगा। मैं एक ओर हट गया। कही मेरे पैर मे वे लटें उलझ न जाएँ। नन्दलाल खिड़की के पास पहुँच जाली के परे उचका और उधर से मधुर कण्ठ से निकली खिलखिलाहट ने उसका स्वागत किया। कैसा भाग्यशाली था वह! जब मैं ज्योति-बिम्ब और परछाईं के उलझाव में, तब वह प्रतिबिम्बित मुख की प्रत्यक्ष मूर्ति के पास। चट-से छोटे लकड़ी के गृह के पट खुल गए और नन्दलाल ने मुझे बुलाते हुए कहा, 'अन्दर आओ मेजर!'

मैं उस पालतू कुत्ते की तरह, जो दुम हिलाता हुआ अपने मालिक के

पीछे-पीछे चलता हो, नन्दलाल के बुलाने से कुछ सहमा-सहमा अन्दर पहुँच गया।

'ये हैं मेरी कोइको सान, और यह मेरे मित्र मेजर...' नन्दलाल बोला।

मैंने झुककर प्रणाम किया, और उस नवेली ने हमको पास बैठने को कहा, 'इतने दिनों के बाद अब आप आते है ! आपको नही मालूम कि मेरे दिन कितने लम्बे-लम्बे होकर बीते है ?' उसने कैप्टेन नन्दलाल से कहा।

'क्या करूँ जल्दी-जल्दी आकर ! दूर से आनेवाले को आराम करने को लम्बी रातें चाहिए। पर कोइको के साथ तो रात छोटी हो जाती है... हा...हा...हा...' नन्दलाल के चेहरे पर शैतानी से भरी हँसी छा गई।

'आपके देश के ये कैप्टेन मेरी बहुत छेड़खानी करते हैं। अब इनके साथ आप हमेशा आया कीजिए।' कोइको सान अपने रंगीन चमकते किमोनो के ऊपर पतली कमर पर बँधी 'ओबी' (Obi—कपड़े की चौड़ी पेटी) को सम्हालती हुई बोली।

'हाँ-हाँ, अब मेजर आपके शरीर के रक्षक होंगे और मैं लूट-मार करनेवाला डाकू।' नन्दलाल ने निर्लज्जता से कहा।

'देखिए न उस "काकीमोनो" (दीवार पर लगी पेंटिंग) में एक शेर बेचारी हरिणी पर झपट कर रहा है। शायद आपके देश में शेर बहुत होते हैं। वहीं के शेर की तस्वीर है।' कोइको सान ने कमरे में लगे एक चित्र की ओर इशारा किया।

'अभी शेर ने हरिणी को पकड़ कहाँ पाया है ? यह जापान देश की चालाक मृगी है।' नन्दलाल ने उत्तर दिया। सिगरेट जलाकर उठते धुएँ में वह देखने लगा।

हम लोग जूते उतार, मोटे गद्दे पर बैठे आनन्द ले रहे थे। पुष्प-सुगंधित उस कमरे में मोरपंखों के चटक रंगों के बीच कोइको अप्सरा-सी मुस्कराती बैठी थी। छोटा, नाटा कद, पतला शरीर, गोरा रंग और गुलाबी गाल। उसके रंग-ढंग, सूरत-शकल से यही नहीं मालूम होता कि वह जापान की

या चीन की सुन्दरी है । न आँखें पतली, न गालों की हड्डियाँ उभरी और न नाक छोटी गठीली । सुडौल उसके चेहरे मे बडे सलोने नयन, जिनमे मधुर चितवन, पतले छोटे लाल अधर और सीधी नासिका । काले केश जापानी ढंग से सँवारे हुए, जिनमे अनेक "हेयर पिन" और कंघी खुसी हुई । उसकी पतली उँगलियों की सुन्दरता मैंने जी भरकर निहारी, जब वह 'साके' (जापानी मदिरा) प्यालों (साके-जूकी) मे देने लगी । उसने साके-जूकी देते हुए कोकिल-से मधुर-कण्ठ-से कहा, 'मेरे अतिथि ! दो-जो (मेहरबानी से यह लो) ।

मैंने जापानी भाषा में उत्तर दिया, 'अरी-गातो' (धन्यवाद) ।

कुछ देर के ही वार्तालाप में मुझे मालूम हो गया कि कोइको सान बडी चतुर और सभ्य स्त्री है । उसकी कला-प्रियता उसके कमरे की सजावट और सफाई में व्यक्त हो रही थी । मदिरा के पात्रों में शायद जीवन का सब सुख उसने घोल दिया था, तभी तो कैप्टेन नन्दलाल मस्त हो कहने लगा, 'मेरी मधुबाला, क्या आज इन छलकते प्यालो मे मधुर संगीत नही उमडेगा ?'

कोइको के मतवाले नयन लज्जा के भार से झुक गए । कपोलों पर लाली चढने लगी । गर्दन नीची कर उसने उत्तर दिया, 'क्यो नही ! अपने मेहमानों को संगीत जरूर सुनाऊँगी ।'

वह एक अद्भुत ढंग की वीणा ले आई । चौकोर छोटे डिब्बे का-सा नीचे का भाग जिस पर पतली झिल्ली मढी हुई । लम्बे लकडी के टुकड़े के एक सिरे से तीन तार इस डिब्बे से सम्बन्धित थे ।

'मैं आज इस "शामीसेन (Shamisen)" पर वह गाना सुनाऊँगी जो पूर्ण चन्द्र की छटा निहार इस देश की महिलाएँ गाती हैं ।'

कुछ देर कोइको ने शामीसेन पर वह गत बजाई जो आज तक मेरे कानों में कभी-कभी गूँज जाती है । उसकी पतली उँगलियाँ उस वाद्य-यन्त्र पर चतुराई से चलने लगी और सब तार स्वरो मे झंकृत होने लगे । यही नही मालूम हुआ कि झंकार मे उसके कण्ठ से उतरे मधुर स्वर कब समाने लगे । उसने एक ऐसे राग का अलाप लिया मानो चन्द्रलोक को छूकर उसके

स्वर प्रतिध्वनित होने लगेंगे।

मैं कमरे में रखी बिजली की एक लैम्प के मन्द प्रकाश की ओर अनायास ही देख रहा था और गायिका के कोकिल-स्वर मेरी स्मृति पर अमिट हो जाते थे। अचानक लैम्प की ज्योति गोलाकार हो विस्तारित होने लगी। स्वच्छ गोल-गोल स्वर्णिम प्रकाश और हमारे इतने निकट। छोटी मेज पर गुलदान की डालियाँ भी ऊपर उठने लगीं। अरे! वह तो पाइन और सीडर की-सी हरी-हरी डालें बन गईं।

साके-जूकी में भरी मदिरा उफनकर स्वच्छ सलिल बन गई, जिसमें पूर्ण चन्द्र का प्रकम्पित प्रतिबिम्ब छा गया। क्या मैं किसी सरिता के तीर, सुन्दर वन में पूर्णिमा की चन्द्रिका में विभोर था? कोई सुन्दरी शशि को पृथ्वी पर आमन्त्रित कर रही थी। वह सचमुच हमारे निकट आता जा रहा था। हम स्वरों के अदृश्य तारों से जुड़ने लगे थे। मैंने बच्चे की तरह चन्दा मामा को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया। उसी क्षण शायद स्वर्गिक संगीत-स्वर बन्द हो गए होंगे और मेरा स्वप्न भी टूटा होगा, क्योंकि नन्दलाल हँसकर मुझसे कह रहा था, 'वाह मेजर, वाह! आप तो ताल देने को हाथ बढ़ाते ही रह गए। यह जापानी गाना है, अपने देश का नहीं जहाँ श्रोतागण शरीर का एक-न-एक अंग हिलाकर ताल देने लगते हैं।'

'नहीं-नहीं, मैं ताल नहीं दे रहा था। ताली बजाना चाहता था।' दूसरा हाथ बढ़ाकर मैंने ताल बजाई और कोइको की सराहना की। नदलाल ने भी प्रशंसा करते-करते साके का पूरा प्याला अपने गले में उँडेल लिया। साके साक़ी की कृपा से फिर प्याले में लहराने लगी।

वह हमारे भोजन का प्रबन्ध करने चली गई और हम मदिरापान करते रहे। नन्दलाल रंगीनी के रंग में उतराने लगा था।

'मेजर...अब...आप...मुझे...सम्भाले...रहिए...गाना...आने...वाला है...' उसने लड़खड़ाते स्वर में कहा।

'हाँ...हाँ।'

'गाना...अच्छा लगा...या...गानेवाली...?'

'दोनों।'

'कैसी...बेढंगी...बातें...गानेवाली अच्छी...बहुत...अच्छी।'

'अच्छा, गानेवाली ही अच्छी।'

'लो...वो...आ गई...मेरी...को...इ...को...'

उसने गरमागरम खाना छोटी नीची मेजों पर लगा दिया। नन्दलाल उसके पास खिसकता जाता था। वह मदहोश था—प्रेमालाप के लिए उता-वला-सा। वह कहने लगा, 'को-इ-को तुम मेरी हो।'

'जो संगीत का प्रेमी उसी की।'

'कैसी बातें करती...हो...कहो बिल्कुल मेरी ही हो। इन मेजर की भी नहीं।' नन्दलाल ने चॉप स्टिक रख दी और कोइको की ओर घूरने लगा।

'आप खाना खाइए। गरम खाना।' कोइको ने बात बदलते हुए कहा।

'नहीं...मैं...तुमको...अपना बनाना चाहता...हूँ...हमेशा के लिए...' नन्दलाल उसके और पास खिसक गया।

'आप अपने मित्र को समझाइए।' कोइको ने मुझसे कहा।

'मेजर...क्या...समझाएँगे?...मैं तुम्हारा...पुराना मित्र हूँ, तुमको चाहनेवाला अलबेला प्रेमी। तुमको मेरा बनना होगा। हमेशा के लिए।' नन्दलाल की आँखें लाल थीं और होंठ सूख रहे थे।

'जापान की गेशा-गर्ल किसी एक की नहीं होती, समझे!' कोइको ने दृढ़ता से कहा।

'तो इसका...मतलब...तुम कभी भी मेरी नहीं बन सकती—कैसी धोखेबाजी...' वह बोला।

'बन सकती हूँ। अगर तुम मेरे देश में सदा के लिए रहो। इस देश को अपनी मातृभूमि समझो।' उसकी दृढ़ता कठोरता मे परिणत होती जाती थी।

'लो मेजर! कोइको हमारे देश को हमसे छीनना चाहती है। मैं ऐसा क्यों करूँ!' नन्दलाल का नशा सर पर सवार था।

'इस मामले में मैं कुछ नहीं जानता। तुम जानो और ये।' मैंने धीरे-से कहा।

कैप्टेन नन्दलाल ने कोइको का मुलायम हाथ अपने हाथ में ले लिया था और वह उसके पास फुस-फुस करने लगा, 'कोइको . तुम...कितनी... कठोर...हो...? मेरी क्यों नहीं बन जाती ?'

उसने फिर सर हिला दिया। ऐसी दृढ़ता कि सर के सँवारे काले बालों में एक भी विचलित न हुआ। कमर में बँधी ओबी में उसने दोनों हाथों की उँगलियाँ खोंस लीं और वह मृगी सिंहनी-सी अकड़कर बैठ गई।

कैप्टेन नन्दलाल की चाटुकारी की वह उपेक्षा करती रही। उपेक्षा में भी मधुरता थी। शब्दों में अडिग दृढ़ता। उस कोमल कुमुदिनी में वज्र की-सी कठोरता का सामंजस्य मैंने वहीं देखा। कला की प्रतिमा में देश-प्रेम की उच्छ्वासें मैंने वहीं पाईं।

वाह री कोइको सान ! तुम गेशा-गर्ल के रूप में पूजनीय, वन्दनीय देवी थी।

१२

चयोतो में हमारे मन में विकसित उन्माद की लहरियाँ कूरे के खण्डित तट पर टकराने लगीं। पथरीला तट तो स्थिर ही रहा; पर मस्ती की ललित, कलित फेनिल लहरें विस्मृत होने लगीं—कूरे की खाड़ी के निश्चल वक्ष में वे समाने लगीं। गेशा-गृह के मधुर संगीत के कोमल स्वर, डॉक्टर तोशियो तनाका के चिकित्सालय की दर्द-भरी आहों और कराहों में डूबने लगे। रोगियों की विवशता की कल्पना ने मुझे ही विवश कर फिर डॉक्टर के निवास-स्थान पर पहुँचा दिया।

वह कमरे में बैठा किसी पुस्तक का अध्ययन कर रहा था। मुझे आते देख उसने चश्मे की कमानी पर उँगलियाँ फेरते हुए कहा, 'मेरे मित्र ! अब आप अधिक व्यस्त रहने लगे हैं। क्या इधर का मार्ग भी भूलने लगे ?'

'नहीं डॉक्टर ! ऐसा कभी सम्भव नहीं कि मैं आपके पास न आऊँ।

आपके देश का ऐतिहासिक और सुन्दर नगर क्योतो देखने चला गया था !' मैंने उत्तर दिया।

'वह नगर कैसा लगा ?'

'बहुत अच्छा, बहुत श्रेष्ठ। पर मेरा मन तो हिरोशिमा नगर में उलझा है। मैं उसे देखना चाहता हूँ।'

'आपकी आदतें भी कुछ-कुछ मेरी-सी हैं। दुःख से आकृष्ट होना और सुख से दूर भागना।' तोशियो तनाका ने मुस्कराते हुए कहा।

'हाँ। शायद। पर मैं तो उस नगर को अवश्य देखूँगा।'

'क्यों, क्रूरे नगर के टूटे दृश्यों से मन नही भरा ?'

'नही। मैं तो देखना चाहता हूँ अणु-बम का वह विनाश-स्थल जहाँ वर्तमान के साथ-साथ मानव-जाति के भविष्य को भी खंडित करने की चुनौती दी गई है।' यह कहते-कहते मेरी आवाज ऊँची उठने लगी।

'विचलित मत हो मेजर ! आप हिरोशिमा अवश्य जाइएगा। मैं आपका सब प्रबन्ध कर दूँगा। अब इस समय शान्तिपूर्वक चाय पीजिए।' डॉक्टर तोशियो तनाका ने मुझे समझाते हुए कहा।

'डॉक्टर ! मैं हिरोशिमा का ध्वस्त-शेष केवल देखना ही नही चाहता, मैं तो वहाँ के उन वीर नागरिकों को, जिनके प्राण अणु-बम की वेदी पर अर्पण हुए हैं, अपनी श्रद्धांजलि भेंट करना चाहता हूँ। वह नगर मेरे लिए पुण्य-स्थान होगा और वहाँ की यात्रा तीर्थ-यात्रा।' मैं कहता गया।

'आज तो आप बड़े जोश में मालूम देते है। क्योतो की सैर ने आपमें उमग भर दी है। मैं अणु-बम के प्रभाव से पीडित रोगियों मे उलझा हूँ और आप अणु-बम से उत्पन्न दर्शन-शास्त्र में। फर्क केवल इतना है कि मैं यथार्थ संसार में हूँ और आप विचारो की बेपर की उड़ान में।' डॉक्टर हँसने लगा। उसके दो सोने से मढ़े दाँत चमकने लगे।

इतने मे चाय के प्याले भी ले आए गए और हम चाय पीने लगे। सचमुच आज मेरा मन कभी उदास, कभी विकल और कभी उद्विग्न होता। कुछ देर चुप रहकर मैं तोशियो तनाका से प्रश्न करने लगा, 'डॉक्टर !

आपने मुझे अणु-बम के अनेक प्रभावों का ज्ञान कराया है। मैंने उसके विनाशकारी फल प्रत्यक्ष देखे हैं। मगर मेरी समझ में नहीं आता कि यह कौन-सी अणु-शक्ति है जो इतनी भयंकर है।'

'मेजर! आज आप सचमुच कल्पना और सिद्धान्त के जगत् में पहुँचे हुए प्रतीत होते हैं। खैर, मैं आपके कठिन प्रश्न का उत्तर भी दूंगा।' डॉक्टर ने अपना चश्मा हाथ में लेकर रूमाल से पोंछा और फिर अपनी नाक पर रखते हुए अपनी आँखें पतली कर ली। कुछ देर मौन रहकर वह फिर बोला, 'अब तक मनुष्य बहते हुए जल और जलते हुए कोयले में संचित शक्ति का प्रयोग करते थे। पर अब वैज्ञानिकों ने हर वस्तु में निहित अणु-शक्ति पर विजय प्राप्त कर ली है।'

'अणु-बम, अणु-शक्ति, अणु-प्रभाव! क्या हर ओर मनुष्य का नहीं अणु का राज्य होगा?' मैंने कहा।

'हाँ अवश्य, यदि मनुष्य असुर होने लगे और यह महान् शक्ति उनके मस्तिष्क विचलित करने लगे। मेजर! अणु हर पदार्थ का सबसे छोटा भाग, पर अपार शक्ति का संचित स्रोत। यह कैसी विडम्बना!'

'उसी तरह जैसे आपका छोटा तेज चाकू बड़ों-बड़ो के पेट चीरने-वाला।' मैंने मजाक किया।

'नही, उससे भी बहुत खतरनाक। हाँ, तो मैं अणु-शक्ति के विषय मे कह रहा था। प्रत्येक अणु मे एक अणु-केन्द्र होता है जिसके चारो ओर भ्रमित होते हैं "इलेक्ट्रोन" (Electron), 'प्रोटोन" (Proton) और "न्यूट्रोन" (Neutron)। एक अदृश्य शक्ति इन सबको जोड़े हुए है। अणु का अपना ससार अलग है। अणु-केन्द्र को एक सूर्य समझिए, जिसके चारों ओर पृथ्वी, चन्द्र और तारों के समान इलेक्ट्रोन एक गति से चलते हुए-से है।' डॉक्टर तोशियो तनाका ने इस विषय का विश्लेषण करते हुए कहा।

'जब अणु की दुनिया तलग, तो मनुष्य को क्या पड़ी कि वहाँ हस्तक्षेप करे?' मैंने प्रश्न किया।

'लोलुपता से प्रेरित होकर प्रभुत्वशाली बनने के लिए। जिस देश ने

अणु-शक्ति को वश में किया उसी ने सर्वशक्तिशाली होने के स्वप्न देखे। उन देशों ने स्वप्न देखे और हमने स्वप्नों को घोर यथार्थ में परिणत होते देखा—हिरोशिमा में, नागासाकी में, वहाँ के खण्डहरों में और मेरे चिकित्सालय में।' डॉक्टर का स्वर भर्रा गया और उसकी उँगलियाँ रोष से प्रकम्पित होने लगीं।

'आज देश भौतिक बल से पृथ्वी पर विजयी होना चाहते हैं। वे नहीं समझते कि उनसे भी कहीं बड़ी शक्ति पूर्ण जगत् को संचालित करती है। मनुष्य का आध्यात्मिक विकास आवश्यक है।' मैंने कहा।

'मेजर! आप ठीक कहते है, पर इन आदर्शों को मानता कौन है? इस विज्ञान के युग मे तो जहाँ भी शक्ति का स्रोत मिला देश उसी ओर पागल हो भागे। अणु-शक्ति को ही ले लो। देशों ने ऐसे अन्वेषण किए जिनसे अणु विस्फोटित हो सके और उसमे निहित शक्ति भी हाथ लगे। अन्त मे "यूरेनियम २३५" (Uranium 235) और "प्लूटोनियम २३९" (Plutonium 239) दो रासायनिक पदार्थ इस उद्देश्य की पूर्ति को मिले और दोनों का प्रयोग हमारे ही देश पर हुआ।'

'मुझे तो अपने सैनिक शिक्षण मे बताया गया था कि टी-एन-टी (T.N.T.) ऐसा रासायनिक पदार्थ था जो बमों का विस्फोट करता था।'

'आपकी शिक्षा पुरानी हो चुकी है। अब तो एक अणु-बम के विस्फोट मे टी-एन-टी (T. N. T.) के बम से बीस हजार टन अधिक शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। आप कुछ समझे।' डॉक्टर ने अपना मोटा चश्मा फिर सम्हाला।

'बीस हजार टन टी-एन-टी (T. N. T.) की शक्ति! कैसा यह बवं-डर?' मैं मन-ही-मन विचार करने लगा। मेरी आँखों के आगे अट्टालिकाएँ बिखरने लगी और पर्वत-श्रेणियाँ घाटियों के गर्त में समाने लगी। एक लम्बा विस्तृत, शुष्क मरुस्थल फैलने लगा, जिसमें धूमिल भुरभुरे रजकण। पवन के तीव्र झोके और उड़ते भ्रमित रजकण फव्वारे के रूप में ऊपर उठ गए। अरे! यह गगनभेदी नाद! प्रत्येक कण विस्फोटित। लाल-पीले अंगारे

और फिर गहरा काला धुआं। रेगिस्तान की जगह मँडराते, घुमड़ते, कालिमा के पुंज !

'मेजर, उधर खिड़की पर आँख गड़ाए क्या देख रहे हो ? बादलों को या उनके अन्तर में छिपे वज्र को ?' डॉक्टर ने मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा।

'दोनों को डॉक्टर ! आज आकाश में मरुस्थल का-सा विस्तार है। सूर्य के लाल गोले ने जैसे दिशाओं में आग लगा दी है।'

हम दोनों क्षितिज की ओर देख ही रहे थे कि अचानक कमरे का दरवाजा खुला और एक नर्स ने डॉक्टर से कहा कि एक रोगी स्त्री उसे अभी बुला रही है। वह अपने घर जाने की जिद कर रही है।

तोशियो तनाका ने मुझसे भी चलने को कहा और हम दूर एक छोर पर बने कमरे की ओर चलने लगे।

'मेजर ! तुम इस रोगी से अधिक बातचीत न करना। उसका मन चंचल होने लगता है।'

'मैं तो स्वयं आपके रोगियों को देख अवाक् रह जाता हूँ। बातचीत का सवाल ही क्या ?'

हम जब कमरे के पास पहुँचे, मैंने देखा कि किवाड़ों की जगह एक मोटे कम्बल का पर्दा पड़ा था। मैंने समझा कि शायद यह कमरा अभी पूरी तौर से बन नहीं पाया। अन्दर जाकर भी मैंने देखा कि किसी भी खिड़की या दरवाजों में किवाड़ नहीं। उनमें भी अस्पताल के लाल कम्बलों का पर्दा पड़ा था। एक ओर पलग पर बैठी एक युवती अपनी मेज के गुलदान में फूल सजा रही थी। साफ-सुथरे उसके कपड़े; पतला, छरहरा शरीर और छोटे हाथ, जिनकी पतली उँगलियाँ जल्दी-जल्दी फूलों को ठीक करने में चल रही थीं। उसके चेहरे पर हल्दी का-सा पीलापन, जिसमें तिरछे नेत्र और उनकी काली पुतलियाँ अधिक बड़ी मालूम होतीं। श्वेत पानी में तैरती-सी उन पुतलियों में चमक नहीं, वरन् वे अटपटी भूली-भूली-सी। मालूम होता, उसके नयन किसी खोई वस्तु को खोजते-खोजते थक चुके हैं।

डॉक्टर ने यूरीको की पीठ पर हाथ रखते हुए कहा, 'यूरीको ! अच्छी यूरीको ! पिछली बातों की याद मत करो। सुख से रहो और हँसो। देखो मेरी ओर, और हँसो-हँसो !'

यूरीको ने पीले मुख पर, सूखे होठो मे मुस्कान भरने की चेष्टा की। उसकी उँगलियाँ फिर फूलों को सँवारने में लग गईं। डॉक्टर कहने लगा, 'शाबाश यूरीको ! ऐसे ही प्रसन्न रहा करो। जिद नही करते। इससे बीमारी बढ़ती है।' वह जैसे छोटे बच्चे को समझा रहा था। उसने मेरी ओर इशारा किया और हम लोग कमरे के बाहर आ गए।

डॉक्टर तोशियो तनाका के मकान तक पहुँचते-पहुँचते मेरी उत्सुकता के बाँध टूटने लगे थे। मैंने प्रश्न करना आरम्भ कर दिया।

'यह रोगी यूरीको तो मुझे अधिक अस्वस्थ नही लगी। इसे हिरोशिमा जाने की आज्ञा क्यों नही देते ?'

'आप नही जानते। यह वहाँ जाकर क्या करेगी ? वह यूरीको—कमलिनी (जापानी भाषा मे यूरीको का अर्थ कमलिनी है) कुम्हला चुकी है। कमलिनी रस से भरे सरोवर मे ही खिल सकती है। हिरोशिमा-जैसे शुष्क कंकड़-पत्थरों के ढेर मे नही।' डॉक्टर ने उत्तर दिया।

'फिर भी वह अपने बनते हुए घर को तो देख सकती है।'

'उसका घर कभी भी नही बस सकता। वह सदा के लिए उजड़ चुका है। उसका पति, उसके दो छोटे-छोटे बच्चे सब अणु-बम की आहुति चढ़ चुके। उसका सर्वस्व लुट चुका। मकान बर्बाद हो चुका। शायद कही दो दरवाजे बच गए होगे। उन्ही का वह जिक्र करती रहती है। आप उसके घर के खण्डहर देख आइएगा। उसे इसी से तसल्ली होगी।'

'मैं अवश्य देखूँगा। हिरोशिमा को खूब देखूँगा। वहाँ की हर सड़क और हर गली देखूँगा। केवल मुझे पथ-प्रदर्शक चाहिए।'

'मेरी नर्स सेत्सुको आपका पथ-प्रदर्शन करेगी। मैं उसे आपके साथ भेजूँगा। वह हिरोशिमा की ही रहनेवाली है। आपको सब जगह दिखाएगी।' यह कहकर डॉक्टर कुछ देर को चुप हो गया। अपने किसेरू को जलाकर

उसने बातों का टूटा क्रम फिर जोड़ लिया, 'आपके ठहरने का भी मैं प्रबन्ध कर दूंगा। हिरोशिमा में मेरे मित्र डॉक्टर गोरो हामागूची के यहाँ रहिएगा। मैं उनको पत्र लिखे देता हूँ। वह बहुत भले हैं, और हिरोशिमा विद्यालय में इतिहास के प्रमुख प्रोफेसर हैं।'

'आपको मेरे कारण बहुत कष्ट होता है डॉक्टर! पर आप कितने अच्छे हैं!' मैं बोला।

'मुझे क्या कष्ट? आप कष्ट की जगह जा रहे है मेरे मित्र! जहाँ रहने का कष्ट, जिसे देखने से कष्ट और जहाँ की जनता को महान् कष्ट।'

'काश हम सब उस कष्ट और व्यथा को बाँट सकते!' मैंने धीमे स्वर में कहा।

'आप दूर देशवासियों की सहानुभूति को ही मैं अमूल्य समझता हूँ। इस सहानुभूति से ही हमारे देश मे फिर रंग-बिरंगे पुष्प खिलेंगे—प्रेम और सहयोग के प्रसून—ठीक वैसे ही जैसे किसी समय यूरीको के घरों में खिलते होंगे।' तोशियो तनाका फूलों से भरे गुलदान को ओर देख रहा था।

'क्या यूरीको फूलों की शौकीन थी?' मैंने पूछा।

'बहुत चतुर गृहिणी और अपनी पुष्प-वाटिका की प्राण। आपने देखा होगा कि अपने कमरे में अभी फूलो मे ही उलझी थी। मालूम होता है प्रस्फुटित कलिकाएँ ही उसे प्राण-दान दे रही है। उसका जीवन-घट तो टूट चुका है और उसका मधु शुष्क रेत में सूख गया है।'

'हो सकता है कि उसके जीवन मे फिर वसन्त आए और फिर फूल खिलें।'

'कभी नही मेजर! कभी नही। न यूरीको के जीवन मे वसन्त आएगा, न फूल खिलेंगे। टूटी डाली भी कभी हरी-भरी होती है? वह बेचारी कष्टों के भार से दबी दुखिया, आशा-विलुप्त, निराशा की मूर्ति और डिगी हुई आत्मा की श्वासों से प्रकम्पित बुझती-सी जीवन-ज्योति।' कहते-कहते डॉक्टर चश्मा उतारकर अपने नेत्र रूमाल से फिर पोंछने लगा।

मैंने देखा, गुलदान में लगी कलिकाएँ झुकी जा रही थीं।

से लगने लगे थे। पवन के एक झोंके ने खिड़की का एक किवाड़ खटखटा दिया। दो-चार पीली पत्तियाँ पास में लगी बेल से टूटकर कमरे में उड़कर आ गिरीं। पल-भर को बिजली की ज्योति भी मन्द हो गई।

डॉक्टर तोनियो से पत्र ले मैंने अपनी जेब में रखा और उससे विदा ले मैं चल दिया।

१३

हमारी बैरक के सामने लगी गुलदावदी की बैंजनी और पीली पतली पंखुरियाँ घुलती जा रही थी। कैना के बड़े लाल फूलों और चौड़े पत्तों पर ढलकते शबनम के मोती बाल सूर्य की गुनगुनी रश्मि के स्पर्श-मात्र से सत-रंगों में फूट पड़ते। लॉन की घास में इतनी नमी कि मेरे बूट की टो तक गीली हो गई। हवा में एक अजब मस्ती और भारीपन था। कुछ देर टहलने के बाद जब मेरा जी उकताने लगा, मैंने भारी आवाज में नन्दलाल से कहा, 'क्या आज दोपहर तक चलने का इरादा है ?'

'नहीं मेजर ! अभी आया, बस अभी।' उसने बैरक से कुछ दूर गुसल-खाने में से उत्तर दिया और नल की धार और जोर से खोल दी।

'मेरा दिल भी है, परवाना, परवाना—ओ—परवाना...' इस गीत को वह इतनी जोर से गाने लगा कि नल की छल-छल पारकर उसकी भनक मेरे कानों तक आने लगी। कुछ देर मैं पानी की सिकुड़ी धार को फूल की क्यारियों में फैलती और बल खाती जल की चादर में परिणत होते देखता रहा। लम्बी पतली किसी टहनी से मैं क्यारी की गीली मिट्टी को कुरेदने लगा, जल को उछालने लगा। कुछ छींटे शायद मेरे माथे पर आ पड़े होंगे, क्योंकि ऐसा लगने लगा कि मैं भी इस धरती का प्रफुल्लित पुष्प बन गया हूँ और ओस-कण मेरे ललाट पर झलक रहे हैं।

'लो भई मेजर ! मैं आ गया।' कैप्टेन नन्दलाल ने अपने दोनों हाथ की हथेलियाँ जल्दी-जल्दी रगड़ते और कन्धे सिकोड़ते हुए कहा।

'आज क्या कहना ! सुबह से ही तुम्हारा दिल परवाना बन रहा है।'

'दिल फेंकनेवाले की मत पूछो। कभी दिल परवाना, कभी दिल मधुप, और कभी दिल ही नहीं, हा...हा...हा...' नन्दलाल हँसने लगा।

'कैप्टेन ! सुबह-सुबह भगवान् का नाम लेना चाहिए या यह सब खुराफात बकना चाहिए।'

'भगवान् का नाम जपते-जपते, समाधि-सी लेकर रात-भर सोया हूँ। क्या फिर अब वही नाम रटने लगूँ, तब तो हो गई छुट्टी। आपकी आज्ञा हो तो उस पेड़ के नीचे धूनी रमा लूँ।' अपनी आँखें चमकाकर वह बोला।

'अब इस बहस को छोड़ो भी। न तुमने समाधि ली और न तुमसे धूनी रमे। चलो, जल्दी नाश्ता करें और फिर हिरोशिमा की राह पर।'

हम दोनों मैस में चल दिए। खाना खाकर जब हम बाहर आए तो देखा कि दिनकर की आभा निखरने लगी थी। जल्दी-जल्दी सामान फौजी जीप में रखकर हम डॉक्टर तोशियो तनाका के चिकित्सालय की ओर रवाना हो गए।

चिकित्सालय के फाटक पर नर्स सेत्सूको सान हमारी बाट जोह रही थी। नर्स के सफेद कपड़ों की जगह आज रंगीन किमोनो और छोटे हाथों में फूलों का गुच्छा, हरी झाड़ियों के पास दुबली-पतली वह रंगीन लतिका-सी। सुनहले प्रभाकर ने उसके गोरे मुख की गुलाबी में एक अजब ताजगी भर दी थी। वह इस समय उपचारिका नहीं, वरन् सुन्दर सुडौल रमणी थी जिसे पहचानने में मुझे भी कुछ कठिनाई होती यदि वह स्वयं यह वाक्य न बोलती :

'आपकी बाट मैं बहुत देर से जोह रही थी।'

'ये मेरे मित्र कैप्टेन नन्दलाल, जिनकी वजह से मुझे देर हुई।' मैंने कहा।

'हाँ, मैं अपना कुसूर कुबूल करता हूँ। मेरे ही कारण आपको कष्ट हुआ। पर आप तो इस हरियाली में स्वयं फूल-सी लग रही हैं।' नन्दलाल ने उसे झुककर प्रणाम करते हुए कहा।

वह शरमाकर कुछ न बोली। उसका बैग उठाकर नन्दलाल ने जीप में

रख लिया। वह अकड़कर चुस्ती से सेत्सूको के पास पीछे वाली सीट पर बैठ गया और मैं आगे ड्राइवर के पास।

हम सब चुप थे। सुबह की ठण्डी नम हवा आँखों में घुसी जा रही थी। पीछे किमोनो लहरा रहा था, क्योंकि जब मैंने मुड़कर देखा नन्दलाल सेत्सूको के किमोनो की सलवटों को स्पर्श कर रहा था; उसके हाथ की उँगलियाँ हिल रही थीं। सेत्सूको ने धीमे स्वर में धन्यवाद दिया और वह एक ओर खिसक गई।

कूरे नगर के बाहर होते ही सडक घुमावदार, टेढ़ी-मेढ़ी समुद्र-तट के पास आती जाती। ऐसा लगता मानो नीले जल के विस्तृत छोरों पर भूरी लाल झालर लहराती हो। कायटाची (Kaitachi) के कस्बे से कुछ दूर मार्ग पतला होने लगा। आगे दो विशाल पत्थर, जिनके बीच में से बल खाती यह सडक। ड्राइवर ने जीप की गति मन्द कर ली। नन्दलाल के कहने से हम एक ओर रुक गए।

'मेजर ! ऐसी भाग-दौड क्या है ! हम सब छुट्टी पर जा रहे हैं, ड्यूटी पर नहीं। आओ, कॉफी पी जाए।'

उसने बोतल खोलकर कॉफी एक प्याले मे सेत्सूको सान को दी।

वह कहने लगी, 'आप हमारे नगर चल रहे हैं। मुझे आपकी खातिर करनी चाहिए थी।'

'कुछ परवाह नहीं। हिरोशिमा पहुँचकर खातिर कीजिएगा। रास्ते में आपको देख-भाल हम करेंगे।' नन्दलाल कहने लगा।

'आपकी यूरीको का क्या हाल था ?' मैंने सेत्सूको से पूछा।

'अब वह ठीक थी। बड़ी कठिनाई मे उसने मुझे छोडा और आपके साथ मैं चल सकी।' सेत्सूको ने अपनी पतली उँगलियो मे कॉफी के प्याले को घुमाते हुए कहा।

'आप हैं ही इतनी अच्छी कि जिनको मुश्किल से छोडा जा सकता है। हाँ, तो आप और आपके डॉक्टर कूरे में कितने दिनों से हैं ?' नन्दलाल ने कहा।

'डॉक्टर बहुत दिनों से और मैं लगभग एक वर्ष से।' उसने इठलाते हुए उसके कपोलों पर लाली चढ़ने लगी।

'चिकित्सालय में रोग और रोगियों के वातावरण में आप सबकी तबीयत कैसे लगती होगी? कभी-कभी हम लोगों के साथ सैर करने की कृपा किया कीजिए।' नन्दलाल ने कहा और सेरसुको की ओर एकटक देखने लगा।

'आपके साथ चल तो रही हूँ। जैसे आपका मन युद्ध करने में लगता है, मेरा मन रोगियों के उपचार में।' उसने अपनी पतली आँखें नीचे झुका लीं। उसकी घनी काली बरौनी ऐसा आभास दे रही थी मानो उसके नेत्रों में काला सुरमा लगा हो।

'इस देश की नारियाँ बातें करने में आपकी तरह बहुत चतुर होती है। पर पते की बात बहुत कम बताती हैं।' नन्दलाल सिगरेट जलाकर धुआँ निकालते हुए बोला।

'क्या आपको बहुत-सी स्त्रियों का अनुभव है?' सेरसुको ने नीची नजर किए हुए ही प्रश्न किया।

नन्दलाल कुछ सिटपिटा गया।

'इस वक्त तुम मात खा गए दोस्त!' मैंने उसकी चुटकी ली।

'अन्त में जो मात खा जाए उसको हारा हुआ समझना।' उसने धीमे शब्दों में मुझसे कहा।

'हाँ तो मेजर! आप हिरोशिमा में डॉक्टर गोरो हामागुची के यहाँ ठहरेंगे। और यदि आपको कष्ट न हो, तो मैं आपके यहाँ टिक जाऊँ।' कैप्टेन नन्दलाल ने अपनी झेंप मिटाने के लिए बातों का क्रम बदलते हुए सेरसुको सान से कहा।

'अवश्य! खुशी से। मेरे वृद्ध माता-पिता बहुत प्रसन्न होंगे।' उसने चट से उत्तर दिया।

मैंने कनखियों से नन्दलाल की ओर देखते हुए मुँह बिचका दिया। उसने अपने दाँत ऐसे पीसे मानो अपनी विफलता पर विजय पाने का

कर रहा हो। अपने दाहिने हाथ की मुट्ठी मार वह बाएँ हाथ की हथेली पर जोर से दबाने लगा। सेत्सूको सागर की ओर देख रही थी और उसका कॉफी का प्याला रिक्त हो चुका था। समीर की हिलोर उसकी लटों में उलझने लगी। हम दोनों की दृष्टि भी कभी लटों की अठखेलियों में अटकने और कभी सागर की हिलोरो पर फिसलने लगी।

०

जब हम हिरोशिमा नगर पहुँचे दिन चढ चुका था। प्रभाकर के पूर्ण प्रकाश में हमने आँख खोलकर देखा—मीलों तक विस्तृत प्रलय-प्रदर्शन। टूटे बिखरे पत्थर, और ईंटों के ढेर। मरोड़े हुए जंग लगे लोहे के ढांचे। सब ओर विनाश और ध्वंस। नगर की मुख्य सडकें भी चटकी, टूटी, जिन पर लाखों दरारें और दरारो मे से झांकती सूखी घास और कँटीले झाड़। पीछे दूर हरी पहाड़ियाँ स्थिर और निश्चल। उनकी प्राकृतिक छटा मानो नीचे फैल ध्वस्त-शेष पर आँसू बहा रही थी। जगह-जगह पर धरिणी धँस गई थी और सागर विचलित हो उफन-उफनकर तट पर थपेड़े मार रहा था।

'देखिए हमारे जापानी पंखे की शक्ल वाले इस सुन्दर नगर का हाल ! वहाँ दूर पर ओटा नदी और उससे निकले ये सात छोटे नाले यहाँ की व्यथित वेदना से उमडते अश्रुओं को सागर मे बहा ले जाने के लिए भी कम हैं।' सेत्सूको की सुरमीली, तिरछी आँखों की कोरों मे भी पानी उमडने लगा।

'हम देख रहे हैं हिरोशिमा के दुःखी कटे-फटे हृदय को और उस पर लदे खण्डहरों के भार को।' मैंने अपने होंठो को ऊपर के दाँतों से दबाते हुए कहा।

'और मैं देख रहा हूँ अवशिष्ट इमारतो की विशालता को। इन टूटे ईंट-चूने के ढेर में ये दो-चार खड़े मकान कितने बडे मालूम देते है। जैसे प्रहरी खडे खण्डहरों की रखवाली कर रहे हो।' कैप्टेन नन्दलाल बोला और उसने सिगरेट मुँह से निकालकर दाहिने हाथ की उँगलियो में ले ली।

कुछ देर चुप रहकर उसने प्रश्न किया, 'दूर पर छोटे सिपाहियों के बीच वह जनरल-सा बड़ा ऊँचा किसका मकान खड़ा रह गया है ?'

'ओ वह ! वह रेड-क्रॉस का अस्पताल था । मैं वहाँ बहुत दिन काम कर चुकी हूँ । मालूम नहीं वह बम गिरने के बाद कैसे बच गया !' सेत्सूको सान ने उत्तर दिया ।

'इसीलिए क्योंकि आप वहाँ काम कर चुकी हैं । हमारे देश में सुन्दर स्त्री को अप्सरा कहते हैं । वह आकाश में रहने वाली जिसको चाहे मारे जिसको चाहे जिलाए । और आप तो रोगियों को जिलाने वाली नर्स, कोमल सुकुमारी-सी नर्स हैं ।' नन्दलाल कहने लगा ।

'अच्छा ! आपको बेबात की प्रशंसा करना खूब आता है ।' सेत्सूको ने झेंपते हुए कहा ।

'मैं हमेशा सच बोलता हूँ । देखिए आपके गोरे रंग में कहीं धूप न लग जाए, उसे बचाने ये बादल भी छाँह करने लगे ।' नन्दलाल ने शरारत से कहा । सिलेटी बादल के एक बड़े टुकड़े ने इस क्षण अपनी ओट में सेत्सूको को ले लिया था ।

'कौन कहता है कि तुम झूठ बोलते हो ! पर हर बात करने का ठीक मौका होता है ।' मैंने नन्दलाल से सख्ती से कहा ।

'माफ कीजिए मेजर साहब ! मुझे नहीं मालूम था कि मेरे इस नर्स की प्रशंसा करने से आपके दिल में इतनी ठेस लगेगी । तो आप ही सम्भालिए उसे ।' नन्दलाल ने आँखों की पुतलियाँ घुमाते हुए मेरे कान में धीमे से कहा ।

'चुप भी रहो नन्दलाल ! क्यों बकवास करते हो ?' मैंने उसे झिड़का ।

फिर सेत्सूको सान से पूछने लगा—'वह जगह कहाँ है, जहाँ यूरीको रहती थी और जहाँ उसका पति काम करता था ?'

'चलिए, पहले वह फैक्ट्री दिखाऊँ जहाँ उसका पति मैनेजर था । यूरीको का मकान यहाँ से कुछ दूर है । ओटा नदी के किनारे ।'

हम सब ऊबड़-खाबड़ रास्ते पार कर खण्डहरों के एक बड़े ढेर के पास

रुक गए। वहाँ लोहे के ढाँचे और टूटे शहतीर और कंकर-पत्थर के ढेर थे। न कहीं छत, न दीवार, और न फर्श। केवल एक ओर दो बन्द किवाड़ खड़े थे।

'यही वह फैक्ट्री थी। यूरीको के पति का यही दफ्तर था। पूरी फैक्ट्री बर्बाद हो गई और केवल ये दफ्तर के किवाड़ बच गए।' सेत्सूको ने कहा।

'और उसका पति उस समय दफ्तर में था या अपने घर में?' नन्दलाल ने पूछा।

'इसी दफ्तर में। जापान में तो सब लोग सुबह ही से अपने काम में लग जाते हैं। मैं उस दिन बीमार थी और घर पर रही, इसीलिए आज जीवित हूँ।' सेत्सूको ने कहा।

हमने गौर से देखे वे खड़े चौखट और उनमें वे दो दरवाज़े। नश्वरता के विराट् समूह में वे कितने बड़े लगते थे! मैंने पास जाकर बन्द किवाड़ों को धक्का देकर खोलना चाहा, पर वे न डिगे।

'ये दरवाज़े नहीं खुलेंगे, कभी नहीं खुलेंगे। इन पर पटक-पटककर यूरीको ने अपनी हथेलियाँ लोहू-लुहान कर ली थीं, अपने प्रियतम की खोज में। ये टस-से-मस भी न हुए थे। ये पट सदा के लिए बन्द हो चुके हैं। अगर उनके पार देखना चाहते हैं तो आइए, इन बिखरी इमारतों को देखिए।' सेत्सूको ने चौखटों के पीछे अपने हाथ का इशारा करते हुए कहा।

'कैसा बीभत्स यह प्रकोप! एक अणु-बम द्वारा यह सर्वनाश! मेरे नेत्र खुलने-से लगे हैं।' कैप्टेन नन्दलाल ने अपने नयन कुछ बड़े करते हुए कहा।

'जब लोगों के भाग्य के पट बन्द हुए तब आपके नेत्र खुले तो क्या खुले! आप फौजी लोग तो बम चलाना जानते हैं। उसका प्रभाव हम रोगियों की शुश्रूषा करने वालों से पूछिए। यह सब देखकर भी क्या संसार में अणु-बम बनाना बन्द न होगा?' सेत्सूको ने नन्दलाल की ओर देखकर मुस्कराते हुए कहा।

इसी समय पास में धड़ाका-सा हुआ। मुझे लगा यह अणु-बम का विस्फोट था। ऊँची दीवारें भरभराकर गिर रही थीं। चूने और धूल का

गुबार उठ रहा था। चारों ओर चिल्ल-पुकार, चीत्कार और कराह। कैसा यह भूकम्प! पूरी फैक्ट्री विध्वंस और विनष्ट। इसमें काम करने वाले कहाँ गए? कहीं से दबा हुआ मन्द शब्द उठा, 'वे सब देश-प्रेम की बलिवेदी पर चढ़ गए। अब उनमें से कोई भी जीवित नहीं।' मैं हड़बड़ा गया। मध्याह्न के चमकते सूर्य की किरणें मेरी आँखों में घुसी जा रही थी और मेरे नेत्र अर्धोन्मीलित-से हो गए थे। आँखें खोल मैंने देखा, पास के एक खण्डहर को कुछ जापानी धक्का देकर ढा रहे थे। एक बड़ा शहतीर धम से नीचे आ गिरा था। मैं रूमाल से अपने माथे पर चिपके रजकण झाड़ने लगा।

सेत्सूको सान कह रही थी, 'जब वह विनाशकारी बम उस सुबह यहाँ गिरा, इस सूर्य के प्रकाश से कई गुना प्रकाश क्षितिज पर छा गया। मानो हजारों सूर्य एक में मिल गए हों। प्रभात में मध्याह्न हो गया और आकाश में आग जलने लगी। जागने वालों की आँखें बन्द हो गईं और सोने वालों की खुल गईं।'

'फिर मैं क्या गलत कह रहा था कि अब मेरे नेत्र खुलने लगे हैं। देखो मेरी ओर, मेरे नेत्र खुले हैं या बन्द?' नन्दलाल ने सेत्सूको से कहा।

'बन्द, बिल्कुल बन्द।' सेत्सूको ने प्रगल्भता से कहा।

'आपके लिए मेरे नेत्र बन्द ही सही। आप पास रहें और मैं आनन्द से विभोर अपने नयन बन्द रखूँ; सदा बन्द।' नन्दलाल ने अपनी आँखों के पलक बन्द करते हुए कहा।

हमने देखा, जगह-जगह पर जापानी युवक पुराने मकानों को गिराने में और नये घरों का निर्माण करने में जुटे थे। लोगों के रहने के लिए कनस्तर की टीनों को जोड़कर बल्लियों पर छत डालकर छोटी-छोटी झोंपड़ियाँ बना दी गई थीं। कई फैक्ट्रियों की छत नदारद जिनकी जगह तिरपाल पड़े थे। वहाँ के क्रियाशील कार्य करने वालों ने फैक्ट्री को चालू कर लिया था। वहाँ का कोई भी निवासी हाथ को नहीं कोसता था। सब इस नगर के नव-निर्माण की धुन

हम तीनों ने खाली टीन की एक झोंपड़ी में बिस्कुट खाते और कॉफी पीते हुए अगले दिनों का क्रम निश्चित किया। यह तय हुआ कि इस समय अपने-अपने ठहरने की जगह जाकर विश्राम करें और दूसरे दिन सुबह आठ बजे से फिर घूमने निकलें।

नन्दलाल तो सेत्सूको सान के साथ परछाईं की तरह लग लिया था। वह उसी के पीछे-पीछे हो लिया।

o

मैं जब प्रोफेसर गोरो हामागूची के मकान पर पहुँचा, तीसरा पहर हो चला था। प्रोफेसर कमरे में एक ओर बैठा अपने कागजों को उलट-पलट रहा था। टूटी टीनों से बना उसका घर, ठीक वैसा ही था जिसमें बैठकर हमने कुछ देर पहले कॉफी पी थी। फर्क सिर्फ इतना कि इसमें बिजली लगी थी। मैंने डॉक्टर तोशियो का पत्र उसे दिया और उसने मुझे एक ओर पड़ी लकड़ी की कुर्सी पर बैठने को कहा।

'मुझे बहुत प्रसन्नता है कि आप मेरे अतिथि हैं। डॉक्टर तोशियो तनाका कैसा है, वह मेरा पुराना मित्र है।'

'वह ठीक हैं। मैं हिरोशिमा को देखने आया हूँ।' मैंने कहा।

'युद्ध के पहले देखते। यह वाकई देखने लायक जगह थी। अब यह नगर बर्बाद हो गया। फिर भी लोग इसे बना रहे हैं। मुमकिन है पहले से भी अच्छा बन जाए।'

'हाँ। मैंने देखा है। बहुत लोग नये घर बना रहे हैं, सड़कें ठीक कर रहे हैं।'

'अभी तो आपको इस पुराने ही मकान में रहना होगा। आपको कष्ट तो होगा, पर मैं एक कमरा आपको रहने को दे दूँगा।'

'धन्यवाद। और यह सौगात आपके लिए।' मैंने बिस्कुट और सिगरेट के बहुत-से पैकेट प्रोफेसर को भेंट करते हुए कहा।

'ओह! इतनी सिगरेट! हम सब बहुत दिन तक साथ-साथ पिएँगे। यहाँ आजकल इन चीजों की कमी है।' गोरो हामागूची ने एक सिगरेट

पैकेट में से निकालकर होंठों में लगाते हुए कहा।

'डॉक्टर तोशियो तनाका ने मुझे बताया था कि आप इतिहास के प्रसिद्ध प्रोफेसर है।'

'हाँ, इतिहास मेरा मुख्य विषय है। जापान के इतिहास और चीन के इतिहास का मैंने विशेष अध्ययन किया है। पर मेरी सब पुस्तकें जल चुकी हैं। मैं ही एक चलती-फिरती पुस्तक की तरह रह गया हूँ।'

'तब तो आपसे बहुत-सा ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।' मैंने कहा।

'ज्ञान तो आजकल विज्ञान में है। मैं तो पुरातन-काल की मिटती कहानी कहने वाला हूँ, क्योंकि मैं भी पुराना हो चला हूँ।' प्रोफेसर ने अपनी छोटी सफेद दाढी पर हाथ फेरते हुए और सुनहली कमानी के चश्मे को नाक पर नीचा करते हुए कहा। मैंने देखा कि उसकी पतली आँखों की पुतलियों के चारों ओर मकडी के जाले-जैसी सफेदी थी और उसके हाथ कभी-कभी काँप जाते थे।

'इतिहास वर्तमान का निर्माता है, और वर्तमान विज्ञान इतिहास बना जा रहा है, क्योंकि नये अन्वेषण बहुत गति से आगे बढ रहे है।' मैंने कहा।

यह बात सुन वह प्रसन्न हो गया। उसकी छिरछिरी सफेद मूँछों से छिपे होंठ हँसी से खुल गए और दो-चार पीली-पीली बिखरी दाढ़ें उसके पोपले मुख में दिखने लगीं। वह बोला—'आप समझदार और दिलचस्प व्यक्ति मालूम देते है। डॉक्टर ने लिखा है कि आप इण्डिया के निवासी हैं।'

'हाँ, मैं इण्डिया का रहने वाला हूँ।'

'उस देश के रहने वाले जो पुरानी संस्कृति का स्रोत रहा है। मुझे सब पुरानी बातों से प्रेम है, क्योंकि मैं भी तो पुराना हूँ।' प्रोफेसर ने सिगरेट जलाकर एक कश खींचा।

'मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि हमारे देश की संस्कृति का आपके मन मे इतना उच्च स्थान है। आप-जैसे विद्वान के विचार मेरे लिए महत्त्वपूर्ण हैं।' मैंने कहा।

'जिस व्यक्ति ने इतिहास का थोड़ा भी अध्ययन किया है वह

होगा कि संसार के देशों में शान्ति और प्रेम के प्रवर्तकों का कहीं उच्च स्थान रहा है, उन व्यक्तियो की अपेक्षा जो अशान्ति और द्वेष के बीज बोते रहे हैं। अपने देश के गौतम बुद्ध और अशोक को ही ले लीजिए। वे इतिहास के पृष्ठों में अधिक आलोकित हैं, इस जलती रोशनी की तरह।' हामागूची ने माचिस की एक तीली जलाकर अपनी काँपती उँगलियो मे पकड़कर कहा। तीली की हिलती ज्योति एक क्षण उसके चश्मे के शीशों में प्रतिबिम्बित हो गई।

'आप ठीक कहते हैं। अधिक नर-नारी आजकल शान्ति चाहते हैं। मनुष्य-समाज शायद सुधर रहा है।'

'मेरी राय में मनुष्य-समाज अपनी आत्मा का विलोप कर जड पत्थरों का ढेर बना जा रहा है, इस नगर के खण्डहरों की तरह। इस युग में विश्व के सब देश एक ही अदृश्य सूत्र मे बँध जाने चाहिए—बन्धुत्व और प्रेम के व्यापक सूत्र मे। सारे संसार में ओशाका समा (गौतम बुद्ध) का सत्य और अहिंसा का मन्त्र एक महानाद बनकर प्रसारित होना चाहिए। ऐसा महानाद जो सागर की उत्ताल तरगों को पारकर हर देश में प्रतिध्वनित होने लगे। तभी हम सबका कल्याण होगा।' प्रोफेसर हामागूची के जीर्ण शरीर के अवयव फडकने लगे। उसके कण्ठ से ये शब्द एक अद्भुत दृढता के साथ निकले और टूटी टीन से बनी इस कुटिया की दीवारों से टकराकर गूँजने लगे। उसने अपना चश्मा दाहिने हाथ मे ले लिया। उसकी धुँधली-सी आँखें कम धुँधली मालूम होने लगीं। उसके मुख पर गम्भीरता की छाया और गहरी होने लगी।

हम दोनो बहुत देर तक बातें करते रहे। अँधेरा सघन हो चला। टूटी झोंपड़ियों में दीप टिमटिमाने लगे।

१४

दूसरे दिन सुबह लगभग आठ बजे हम ओटा नदी के किनारे यूरीको के टूटे घर के पास थे। घर का आधा भाग विध्वंस हो चुका था। केवल

उसका मुख्य द्वार और कुछ झुकती टेढ़ी दीवारें शेष थीं। इस द्वार के भी किवाड़ बन्द। पास की दो सीढ़ी चढ़कर नन्दलाल दरवाजे खटखटाने लगा और कहने लगा, 'इस नगर में यह अजब बात देखी कि इमारतें टूटी-बिखरी मगर उनके दरवाजे बन्द।'

'इसलिए कि आप-जैसे अजनबी कहीं अन्दर न घुस जाएँ।' सेत्सूको ने मजाक किया।

'हम-जैसे तो अन्दर पहुँच ही जाएँगे। जब आपके घर में आश्रय ले लिया तो और घरों में घुसने की क्या आवश्यकता? मैं तो इस देश के निवासियों के हृदय के अन्दर पहुँचना चाहता हूँ।' कैप्टेन नन्दलाल ने अपने होंठ चौड़े करते हुए और अपने दिल के पास दाहिना हाथ रखते हुए कहा।

'वाह रे नन्दलाल! आज तो रंग में हो। सेत्सूको सान के घर में एक रात ठहरने का यह असर?' मैंने नन्दलाल को छेड़ा।

'नहीं मेजर! मजाक मत समझो। इस मार-काट और विनाश के ताण्डव से मेरा माथा चकराने लगा है। मैंने पहली बार देखा है विशाल नगर को विस्तृत मरुस्थल में परिणत हुआ। इसीलिए मैं भागकर इस टूटे घर के अन्दर छिपना चाहता हूँ।' नन्दलाल ने यह कहते-कहते फिर दरवाजा खटखटाना शुरू किया।

'रात में सेत्सूको के मकान में छिप सकते हो, पर दिन में वहाँ छिपने का कोई ठिकाना नहीं।' मैंने कहा।

'कैप्टेन, यह दरवाजा ऐसे नहीं खुलेगा। यूरीको घण्टों इन पटों को खटखटाती रही होगी। तभी तो उसकी छोटी हथेली लोहू से लथपथ थी। उसका भी मस्तिष्क यहाँ चकराने लगा था। शायद इस जगह में ही कोई ऐसा असर है या शायद उस बम में जो उस सुबह यहाँ गिरा।' सेत्सूको बोली।

उस समय आकाश ताम्रवर्ण था और एक सफेद बगुला क्षितिज पर सागर की ओर उड़ता जा रहा था। मेरी आँखें उसकी उड़ान के साथ-साथ चलने लगीं। मैं कहने लगा, 'देखो वह सफेद बगुला उस श्वेत कपोत की

भाँति लग रहा है जो देशों में सन्धि के समय उड़ाए जाते हैं।'

सबने आकाश की ओर निहारा। सेत्सूको अचानक बोल पड़ी, 'ओह! आज तो आकाश ठीक वैसा ही है जैसा ६ अगस्त १६४७ को था। और समय भी यही लगभग आठ बजकर पन्द्रह मिनट।' उसने अपनी कलाई में बँधी छोटी घड़ी में समय देखा।

दूर फैक्टरी में एक भोंपू बहुत देर से बज रहा था। वह पास की झाड़ी में झुककर दुबकने हो वाली थी कि मैंने प्रश्न कर दिया—'आप वहाँ क्यों जा रही हैं?'

'ओह! ओह! अपनी पुरानी आदत से मजबूर होकर। मुझे याद आ गई उस प्रभात की जब विश्व-युद्ध मे वह एक नये अभिशाप का सन्देश लेकर यहाँ उदय हुआ। मैंने समझा, वहाँ दूर हवाई हमले का द्योतक भोंपू बज रहा है। मेजर! उस सुबह ये सन्धि के प्रतीक श्वेत बगुले और कपोत नहीं उड रहे थे। यहाँ उड रहे थे भर्राते, शोर करते शत्रु के वायुयान, बी० २६ या मिस्टर बी० अथवा हमारी भाषा में बी० सान।'

'मारो गोली बी० सान को। इस समय तो सेत्सूको सान हमारे पास है।' नन्दलाल ने हँसकर कहा।

'काश आप उनको गोली मारकर गिरा सकते! उन वायुयानो ने यहाँ ऐसे वज्र गिराए कि भूले नही भूलते। उनकी याद से रोंगटे काँपते है। बेचारी यूरीको का तो सर्वस्व ही लुट गया।' सेत्सूको बोलते-बोलते रुक गई, जैसे उसके गले में कोई चीज अटक गई हो।

मेरे दाहिने हाथ की उँगलियाँ बाईं बाँह का स्पर्श अपने-आप ही करने लगी थी। मेरे रोंगटे सचमुच ही खड़े होने लगे थे।

'यूरीको के क्या कोई चोट लगी थी?' नन्दलाल ने प्रश्न किया।

'मामूली चोट नहीं। इतनी गहरी चोट जो आज तक हरी है। उसका पति, उसके दो छोटे बच्चे, सब खण्डहरों में समा गए और वह रह गई बेचारी अनाथ दुखिया! उस चेरी वृक्ष के ठूँठ की तरह जिसकी वह याद करती रहती है।' सेत्सूको ने एक सूखे हुए वृक्ष के तने की ओर इशारा किया।

'तो यही वह चेरी का पेड़ था जिसके बारे में यूरीको ने मुझसे चलते समय कहा था।' मैं बोला।

'हाँ यही। तब पृथ्वी पर और चारो ओर लाल मास के लोथड़े और मनुष्यो के छिन्न-भिन्न अंग बिखरे थे। कैसी वह विभीषिका ! हिरोशिमा की धारा संसार के प्रथम अणु-बम के विस्फोट की प्रयोगशाला बनी। वह प्रयोगशाला जिसका अस्तित्व बम के पहले प्रयोग ही मे मिट गया। यहाँ की धरती पर बिजलियाँ गिरीं। हर ओर लम्बी-टेढी-गहरी दरारें जो प्रत्येक जीव को निगल जाने को आतुर, ठीक वैसी ही।' सेत्सूको ने गहरी साँस भरकर एक ओर खाई-सी गहरी धँसी जमीन की ओर उँगली उठाई।

'क्षमा कीजिए आपकी चेरी के लाल पुष्पो की उपमा मांस के चिथडों से कुछ भौंडी रही।' नन्दलाल ने उसे टोकते हुए कहा।

वह कुछ शरमाकर बोली—'जापानी स्त्रियाँ पुष्पो का महत्त्व खूब जानती है। पर सत्य तो सत्य ही रहेगा। उस सुबह भी इन क्यारियो मे पुष्प प्रस्फुटित रहे होंगे, क्योंकि यूरीको फूलों की शौकीन थी। वह गुलदान बडी चतुराई से सजाती थी। वह कहती थी कि उस सुबह उसका पति दफ्तर जा चुका था। दोनों बच्चे स्कूल पहुँच गए थे। सबने साथ-साथ हँसी-खुशी नाश्ता किया था। उसने गुलदान में रंगीन फूल लगाए थे। गुलदान मे सबसे बड़ी बीच की डाली "तेन" (स्वर्ग की द्योतक) का आरोपण उसने सर्वप्रथम किया था। उसके बाद उसने छोटी डालियाँ "जिन" (मनुष्य की द्योतक) और "ची" (भूमि की द्योतक) लगाई थी। इन सबकी आराधना करने पर भी उसका भाग्य उस गुलदान की तरह फूट गया और सब फूल मुरझा गए।

सेत्सूको सान ने शायद नन्दलाल के शब्दों से कुछ रुष्ट हो, जापानी ढंग से गुलदान लगाने पर एक व्याख्यान-सा दे डाला।

'आप उसी सीढी पर खड़ी किमोनो पहने वाकई "तेन" लग रही हैं और मेजर "जिन" और मैं "ची"। कैसा यह गुलदस्ता बन गया ! सुन्दर, स्वर्ग की अप्सरा आप, और हम लोग इस धरती के रहने वाले ही-ही-ही-हो !'

'आप कहती जाइए और हम सुनते रहेंगे।' मैं अपने मन मे उठते विप्लव को छिपाते हुए बोला।

'यूरीको फिर भागने लगी, भागने लगी अपने घर की ओर, इसी घर की ओर। लटें बिखरी, शरीर स्वेद-सिक्त और हृदय मे पति और बच्चों को याद लिए। वह अपने को भूल गई। उसने इन्हीं बन्द पटों को खट-खटाया। अपनी छोटी हथेलियाँ उन पर पटकी और वह तब तक पटकती रही, खटखटाती रही जब तक लोहू-लुहान होकर, अचेत होकर गिर न गई। फिर वह अस्पताल पहुँचा दी गई और इसके बाद कूरे में डॉक्टर तोशियो तनाका के चिकित्सालय मे। अब मैं उसकी देख-भाल कर रही हूँ और तब तक करती रहूँगी जब तक उसे ठीक न कर लूँगी।' सेत्सूको सान ने दृढता से कहा।

नन्दलाल ने मेरे कन्धे का सहारा ले लिया था और वह मेरे कान मे फुसफुसा रहा था—सेत्सूको सुन्दर है और मुझे अच्छी लगने लगी है पर कुछ ज़िद करने वाली लगती है।

'तुमको यही खुराफात सूझती रहती है।' मैंने एक गहरी साँस ली और सेत्सूको के पीछे-पीछे चलने लगा।

●

जब हम कियो नदी के किनारे-किनारे चल रहे थे सेत्सूको सान अचानक रुक गई। एक ओर वह ऐसे देखने लगी मानो अन्तरिक्ष में से कुछ ढूँढ निकालना चाहती हो।

'आप अभी तक दूसरो के बारे मे तो बहुत-कुछ बताती रही हैं, पर अपने बारे मे आपने कुछ भी नही कहा है।' मैंने प्रश्न किया।

'दूसरों की बातें ही कहनी चाहिए; उन बेचारो की व्यथित कथा, जिसको कहने के लिए उनमें से कोई भी जीवित नहीं है। मैं तो रोगियों की उपचारिका हूँ। मेरा क्या महत्त्व?' उसने उत्तर दिया।

'बहुत बडा महत्व। वैसा ही महत्त्व जैसा शरीर में श्वास का। बिना श्वास शरीर शव और बिना उपचारिका के रोगी अपाहिज!' मैं बोला।

'आप वैसे ही बहुत प्रशंसा करते है ! मैं भी यहाँ एक चिकित्सालय में उपचारिका थी। उसी चिकित्सालय के भग्नावशेष की झाँकी लेने को मैं यहाँ खड़ी हो गई। देखिए, नदी में लटकती वह इमारत ! वह डॉक्टर मसाकाजू फूजी (Dr. Masakazu Fuji) का निजी अस्पताल था और वहीं मैं काम करती थी।'

मैंने देखा कियो नदी के किनारे एक बड़ी इमारत के खण्डहर। कुछ भाग जमीन पर बना और कुछ नदी मे खम्भों पर सधा रहा होगा। अब केवल खम्भे शेष थे। इमारत तो बरबाद हो चुकी थी। पास मे इस नदी का पुल अब भी ज्यों-का-त्यों ठीक था। बम-वर्षा का प्रभाव भी ईश्वरीय लीला की तरह लगने लगा, एक वस्तु अछूती और बिना टूटी और दूसरी बिल्कुल बिखरी और विध्वंस और दोनों पास-पास।

मैंने प्रश्न किया—कैसे अचम्भे की बात ! यह छोटा पुल नही टूटा और यह बडी इमारत ढह गई ?

'आजकल बहुत बड़े होने में यही खतरा है कि कभी भी सर्वनाश हो जाए। परन्तु हमारा देश तो छोटा है, फिर भी अणु-प्रलय का ताण्डव यही हुआ। यह चिकित्सालय भी बडा था। लगभग तीस कमरों का, जिसमें रोगी भरे ही रहते और डॉक्टर फूजी उनकी चिकित्सा करता।' सेत्सूको ने बताया।

'आपका देश छोटा है, पर बहुत उद्योगशील। तभी तो हिरोशिमा के खण्डहर फिर जागने लगे है। यह चिकित्सालय भी शायद फिर बन जाए। अब डॉक्टर फूजी कहाँ हैं ?'

'कुछ दिनों रेडक्रास के अस्पताल मे काम करने के बाद डॉक्टर फूजी कायटाची के कस्बे मे चला गया। उसने बताया था कि उस भयंकर प्रभात में वह चिकित्सालय की बरसाती मे बैठा ओसाका से मुद्रित "असाही" अखबार पढ रहा था। अचानक उसकी आँखों में चकाचौंध घुस गई और फिर गहन अँधेरा। होश-हवास आने पर वह कुछ शहतीरों के बीच लटका था। अस्पताल की इमारत नदी मे झुककर बिखर चुकी थी। मैं उस सुबह

चिकित्सालय मे नही थी। अपने घर थी। तबीयत खराब होने पर भी मैं घर से चल दी।'

'आपमे बडी हिम्मत है कि जब आसमान से मौत बरसी, आप अपने घर से निकली।' कैप्टेन नन्दलाल, जो बहुत देर से नही बोला था, कहने लगा।

'घर से नहीं निकलती तो मरीजों की मरहम-पट्टी कैसे करती ! इस अस्पताल के ही मरीजों की नही वरन् हिरोशिमा के अनेक रोगियों की जो उस "असानो पार्क" (Asano Park) मे इकट्ठे होने लगे थे।'

सेत्सूको ने बताया कि कियो नदी के तट पर बने "असानो पार्क" में सैंकडों लोग छिपने लगे। कोई हरी झाडियो मे, कोई वृक्षो के नीचे तो कोई लतिकाओ की ओट मे। जलते-भभकते हिरोशिमा नगर मे से जो निकल सका वह इसी ओर भागा। किसी का मुख झुलसा हुआ, किसी के बाल और भृकुटी जली हुई, किसी की खाल के छितड़े लटकते और किसी के हाथ या पाँव टूटे। किसी के नगे शरीर पर बडे-बड़े चकत्ते और कुछ स्त्रियों के गोरे बदन पर जले किमोनो के बडे फूलों की गुदन-सी गुदी हुई। चारों ओर चीत्कार, कराह और सिसक। कोई चिल्लाता, 'इताई-इताई' (Itai-Itai अर्थ—यहाँ पीडा है, यहाँ पीडा है), कोई कराहता, 'तासूकेते-तासूकेते' (Tasukete-Tasukete, अर्थ—सहायता करो, सहायता करो), कोई प्यास से पीडित सिसकता, 'मीज़ू-मीज़ू' (Mizu-Mizu, अर्थ—पानी-पानी)!

'मैने कुछ को चुल्लुओं से पानी पिलाया। फिर एक ओर पड़े प्याले मे भर-भरकर बहुत-से बच्चो की प्यास बुझाई। फिर भागकर मैं टूटे चिकित्सालय मे से एक केतली, कुछ पट्टियाँ और कुछ दवाइयाँ ले आई। केतली से मैंने बहुतों के मुँह में पानी उँडेला। एक झाडी मे से बिल्ली के बच्चों की-सी पतली आवाज आ रही थी। रुक-रुककर "मीज़ू-मीज़ू" का शब्द निकलता। मैंने झुककर देखा, चार व्यक्ति मरणासन्न पड़े थे। उनका चेहरा बहुत सूज गया था। बन्द फूली-सी आँखें, झुलसी नाक और मोटे सूजे होंठ। वे बेचारे न देख सकते थे और न पानी पीने को होठ ही

खोल सकते थे। मैंने केतली से पानी पिलाने की कोशिश की पर मेरे प्रयत्न विफल हुए। पास में उपजी कांस और मोटी घास की पत्तियो को मैंने ऐसे मोड़ लिया जिससे पानी उनके मुँह में जा सके। उनके मोटे होंठों के बीच में पतली पत्ती डालकर किसी तरह थोड़ा पानी पिलाया।'

'आप तो उस समय उन असहाय लोगों की प्राणदात्री रही होंगी। कितनी सेवा की आपने! प्यासे को पानी पिलाना हमारे देश में बड़ा पुण्य कहा जाता है।' मैंने कहा।

'कुछ भी समझिए। मेरा तो कर्त्तव्य ही सेवा है। तभी तो मैं एक तुच्छ उपचारिका हूँ।' सेत्सूको ने नम्र भाव से कहा।

'आपके छोटे नरम कोमल शरीर से इतने कठिन कार्य! यही तो क़हर ढा देता है। अगर मैं यहाँ होता तो आपके काम में हाथ बँटाता।' नन्दलाल बोला।

'तो अब हाथ बटाइए। काम करने का मौका तो अब भी है। तब तो सिर्फ मरहम-पट्टी का काम था। मालूम नही मैंने कितने घावों को धोया होगा और कितनी पट्टियाँ बाँधी होंगी। खैर, यह तो मेरा काम ही रहा है। पर अब तो ठोस कर्म करने का समय आया है। उसे सब मिलकर कर सकते है।' सेत्सूको सान के नेत्रों मे आशा की ज्योति चमकने लगी।

'एक कर्मठ सैनिक कर्म से पीछे नहीं हटता। मैं भी कमर कसकर तैयार हूँ।' कैप्टेन नन्दलाल ने अपनी कमर पर दोनों हाथ टिकाते हुए कहा।

'अच्छा तो देखूँगी आप कितना काम कर सकते हैं?' सेत्सूको हँसकर बड़प्पन से बोली।

'मगर एक शर्त पर।' नन्दलाल ने कहा।

'क्या?'

'मेरे साथ आज शाम को साम्पान (एक छोटी किश्ती) में सैर को चलोगी। मैं पतवार चलाऊँगा और आपके गीत सुनूँगा।' नन्दलाल ने बेशर्मी से कहा।

सेत्सूको ने लज्जा के भार से नत अपना सर झटक दिया।

'तुम बड़े शरारती हो।' मैंने नन्दलाल से कहा।

'और आप बड़े सिद्धान्तवादी !' उसने चट से उत्तर दिया।

१५

शाम के धुँधले बुझते उजाले पर जब काले बादलों की परछाईं गहरी हो चली तब प्रोफ़ेसर गोरो हामागूची और मैं सडक से निकली एक पगडण्डी पर चलने लगे। कुछ दूर तख्तों और टीन से बनी छोटी झोंपडियों के चारों ओर अँधेरा सिमटने लगा और वे अधिक काली दिखने लगीं। मैंने कहना शुरू किया—'प्रोफ़ेसर, इस नगर के बहुत-से भाग देख चुका हूँ। मालूम होता है कि यहाँ का ऐश्वर्य गड्ढो मे बन्द हो धूल में सो रहा है।'

'मित्र ! ऐश्वर्य के निर्माता, मनुष्य की भुजाओं मे बल होना चाहिए। फिर टूटे घर आबाद होने लगेंगे।' वह रुककर मानो कुछ सोचने लगा। दाढी पर हाथ फेरते हुए उसने अपनी आँखें सिकोड़ ली। फिर अचानक उसने साँस भरते हुए कहा, 'हाँ, घर आबाद होने लगेंगे। हिरोशिमा जगमगाने लगेगा। लोगों के बाजुओं में ताकत भी आने लगेगी। पर जो सदा के लिए सो चुके है, वे यह सब वैभव कभी नहीं देख सकेंगे। आप ठीक कहते है, यहाँ के ऐश्वर्य में वृद्धि करनेवाले सैकड़ों बच्चे, युवक और वृद्ध सब धूल में सो रहे है।'

'अणु-बम का परिणाम ही ऐसा था। मैंने उसके परिणाम की भयंकरता देखी है।' मैंने कहा।

'परिणाम तो बाद की बात है। मैंने अणु-बम का यथार्थ विस्फोटन देखा है। उस सुबह सारा क्षितिज श्वेत और पीली चमक से भर गया। फिर रंग पीले और लाल होने लगे और उसके बाद नारंगी और लाल। मैं अपनी लाइब्रेरी मे काम कर रहा था। मेरी आँखें चमक, दमक और रंग के फेर में पड़ गईं और इसीलिए अब मुझे यह चश्मा अपनी नाक पर चढाना पड़ा है।' उसने अपने सुनहले चश्मे को नाक के ऊपर खिसकाते हुए कहा।

'फिर क्या हुआ प्रोफेसर ?' मैंने उत्सुकता प्रकट की।

'फिर मेरे पैरों के नीचे पृथ्वी में भूकम्प आ गया। मैं गिर गया और किताबों का ढेर मेरे ऊपर। इतनी विद्या का भार कि मैं कमर तक दब गया। और फिर चारों ओर अँधेरा छाने लगा। सवेरे का प्रकाश लुप्त हो उसमें सन्ध्या का अन्धकार घुस गया। ठीक ऐसा ही अँधेरा जैसी यह शाम है।' प्रोफेसर ने अपनी छड़ी को जमीन से उठाकर आकाश की ओर इशारा करते हुए कहा।

'और आप पुस्तकों के ढेर में कब तक दबे रहे ?' मैंने प्रश्न किया।

'केवल कुछ देर, क्योंकि मेरा पन्द्रह वर्ष का पुत्र हिसाकीची (Hisakichi), जो बाहर फुलवारी में काम कर रहा था, मेरे कमरे मे आ गया। उसने मुझे किताबों के ढेर में से मुक्त किया। मैं तो मुक्त हो गया। पर वह—वह मेरा बेटा—इस धरती से ही मुक्ति पा गया।' गोरो हामागूची के हाथ काँपने लगे। मैंने उसके दाहिने हाथ को थरथराते देखा जब उसने अपना ऊनी कनटोपा कानों तक नीचे खींचा। ठण्डी वायु तीर के समान हमको भेद रही थी। मैं उसके लम्बे लबादे के दोनों पल्लों को पास समेटने के लिए नीचे झुक गया।

'आप क्यों कष्ट करते हैं ? आइए, आपको बताऊँ अपने घर के बारे में—इस घर के बारे में नहीं जहाँ से हम आ रहे हैं। मेरे पुराने घर के बारे में, जो हमारी आँखों के आगे भस्म हो गया !' वह कुछ रुका और गला खँखारकर कहने लगा, 'घर का कुछ भाग गिर चुका था। लकड़ी के तख्ते मालूम नही कहाँ उड गए थे। अचानक पासवाले मकान में आग लग गई। फिर क्या, आग की लपटें हमारे घर की ओर भी लपकी और कुछ मिनट में हमारा घर, मेरी पुस्तकों से भरी लाइब्रेरी, सब जलकर खाक हो गई।'

'मैंने और भी जगहें देखी हैं, जले मकानों के ढेर और झुलसी ईंटें और कालिख जमे हुए पत्थर। यहाँ बहुत बर्बादी हो चुकी है।' मैंने समवेदना प्रकट की।

'घर की बर्बादी की कोई चिन्ता नहीं। पर मैं तो हिसाकीची की

बर्बादी पर आँसू बहाता रहता हूँ। बेचारे की माँ तो पहले ही चल बसी थी। पर वह उसी पथ पर इतनी कम आयु मे जैसे दौड़ता हुआ चला गया।'

इस समय प्रोफेसर छड़ी टेककर जल्दी-जल्दी पग बढ़ाने लगा था। कभी वह एक हाथ से अपनी दाढ़ी का स्पर्श करता और दूसरे में छड़ी पकड़ लेता। सन्ध्या की समीर मे दाढ़ी के सफेद दो-चार बाल बालों के उस पूरे झुरमुट से अलग होकर लहराने लगते।

गोरो हामागूची ने बताया कि कैसे सब लोग कियो नदी के किनारे "असानो पार्क" की ओर भागे—वह और उसका पुत्र हिसाकीची भी उसी ओर चल दिए। वहाँ भी खचाखच भीड़ थी और सब लोग विकल और पीड़ित थे। कोई भूख से तड़पता और कोई प्यास से व्याकुल। कुछ लोगों ने पास के एक खेत मे से लौकी तोडी, और कुछ लोगों ने शकरकन्द खोदी। दोनों चीजें उबली हुई मिली। उस बम की ऐसी गर्मी कि सब्जी बिना चूल्हे के पकी-पकाई तैयार। सबने तरकारियाँ स्वाद से खाईं। कुछ लोग कहने लगे कि यह नई तरह का बम था, जिसने सारे नगर पर मैगनिशियम छिड़ककर आग लगा दी। कोई कहता, बिजली के तारों के आपस में चिपकने से आग लगी। कुछ भी हो, आग और प्यास से सब परेशान थे।

दूसरे दिन से प्रोफेसर की आँखो मे से कीचड और पानी बहने लगा। वे चिपकने लगी और उनमें जलन होने लगी। उसके पुत्र हिसाकीची को भूख लगना कम हो गया और वह सुस्त-सा पड़ गया।

'उस ढलते दिन मे लोगों की आशाएँ पिघल रही थी। उनके सर्वस्व जल रहे थे। आग के शोले "असानो पार्क" की ओर लपक रहे थे। ऐसा लगता, असंख्य विषधरों की दुधारी जलती जीभें सब जीवित वस्तुओं को चाट जाएँगी। हम सब थके-हारो ने फिर भी, जो जिसके हाथ लगा उसी से नदी से पानी भर-भरकर अग्नि की उग्रता को शान्त किया। शान्ति-स्थापना के युद्ध में हम थके-माँदे, झुलसे-मरे-से, बाँसों के झुरमुटों और झाड़ियों में छिप गए।' उसने अपनी अस्थिर दाहिने हाथ की उँगली से लम्बी घास के झुण्ड की ओर इंगित किया, जो पास में ही था। घास का पूरा समूह हवा

से कभी उठता, कभी गिरता।

'आपकी यह आयु और यह कर्मठता ! मुझे हर्ष भी है और आश्चर्य भी।'

'पुरानी पुस्तको का भार ढोते-ढोते मेरी कमर झुकी जा रही है मेरे दोस्त ! बुढापा मेरी ओर धीमे-धीमे कदमों से आ रहा है—शायद उसी रफ्तार से जिससे मेरे पैर डगमगाते आगे बढ़ रहे हैं। तब मुझमे कुछ ताकत ज्यादा थी। मेरी आशा का दीप जग रहा था। पर अब, अफसोस, अब मेरा दीपक टूट गया, ज्योति बुझ गई ! मैं रोज ज्योति जगाने जाता हूँ और वह रोज मिट जाती है। दिल मे सर्दी घुसी जा रही है। आपकी सिगरेट मुझे गरम करती है। एक सिगरेट कृपया और जला दीजिए।' उसने अपने गले को खँखारते हुए कहा।

'लीजिए प्रोफेसर ! एक सिगरेट और पी लीजिए। आपकी कुछ बातें मेरी समझ में आती हैं, और कुछ नहीं।' मैंने एक सिगरेट जलाकर उसके फड़कते होठों के बीच मे रख दी।

'अब आप समझ जाइएगा। वह जगह पास आ गई।' उसने उत्तर दिया।

हम दोनो एक कब्रिस्तान में पहुँच गए। सैकडों कब्रें थी। कुछ पुरानी, टूटी, खण्डित अधबनी-सी और कुछ नई पूरी बनी। कहीं जंगली बेलें और फूल उग आए थे तो कहीं नीले पुष्प और श्वेत लिली सन्ध्या में सोने लगे थे। एक नई बनी समाधि के पास प्रोफेसर रुक गया। उसने अपने लबादे की जेब से एक सेन्को (एक तरह की अगरबत्ती) और एक माचिस निकाली। सेन्को को जलाकर उसने समाधि के सिरहाने रखा और अपने नेत्र बन्दकर कुछ मन्त्र-सा जाप करने लगा।

फिर वह कहने लगा, 'यह मेरे बेटे हिसाकीची की समाधि है। यहाँ वह अँधेरे मे सो रहा है और मैं चाहता हूँ कि वह उजाले में सोए। जब वह मेरे पास था हमेशा बत्ती जलाकर रात में सोया करता था। मैं रोज यह सेन्को उसके लिए जलाता हूँ। अपने प्यारे हिसाकीची के लिए।' उसकी

आवाज काँपने लगी थी।

हम दोनों फिर वापस चलने लगे। अधिकतर हम चुपचाप थे। अँधेरा गहरा हो रहा था और घटाएँ घिरने लगी थीं। यह डर था कि कहीं हामागूची की झोपड़ी तक लौटते-लौटते पानी न बरसने लगे। इसीलिए हम कुछ तेज चल रहे थे और प्रोफेसर की छड़ी का खट-खट का शब्द भी जल्दी-जल्दी हो रहा था। फिर भी उसमें अपने पुत्र की याद हरी थी—उसकी समाधि के पास फूलों की तरह।

'मेरा हिसाकीचो बीमार रहने लगा। उसके बाल झड़ने लगे। वह पीला पड़ने लगा। शरीर में जगह-जगह फफोले फूटने लगे। एक दिन उसने जब जूते से पैर निकाल मोजे उतारे तो उसके साथ एक पाँव की पूरी खाल उघड़ गई। मैं उसे डॉक्टर के पास ले गया। पर उसे कोई भी अच्छा न कर सका। उसका शरीर गलने लगा और उसकी साँस टूटने लगी। मैं यही जपते-जपते अकेला रह गया—'शू जीसस, आवारेमीतमाई' (Shu Jesus, awaremitamai अर्थात् हमारे देव जीसस, हम पर दया कीजिए।)

प्रोफेसर के नयनों में शायद नमी आ चुकी थी, इसीलिए उसने रूमाल लबादे की जेब में से निकालकर आँखों पर फेरा। मेरा भी समवेदना का घट छलककर नेत्रों की कोरों को पार करना चाहता था कि मैंने दोनों पलक कसकर बन्द कर लिए और दाँतों को भींच लिया।

'जो मैं कह रहा था वह आप सुन रहे थे या नहीं ?' उसने पूछा।

'हाँ।' मैंने छोटा-सा उत्तर दिया। कुछ रुककर मैं फिर बोला, 'आप करुणा से भरी कथा कह रहे थे—कितनी हृदय दहलानेवाली !'

'इस नगर में मालूम नहीं कितनी हृदय-विदारक घटनाएँ घटी हैं। कितने जीवित प्राणियों की समाधियाँ बनी हैं और कितनी कब्रों की भी कब्रें।'

मुझे ध्यान हो आया कब्रिस्तान की टूटी कब्रों का, जो मैं अभी देख चुका था। उनमें से कुछ के पत्थर खण्डित और कुछ के पाषाण सपाट चिकने। मैं कहने लगा, 'आप ठीक कहते हैं। मैंने भी कुछ बिखरी-सी

समाधियां अभी देखी थीं।'

'बिखरी-सी ही नहो। उन समाधियों में बहुतों का तो अस्तित्व ही मिट गया। अणु-बम के प्रहार ने उनको जमीन से ही उड़ा दिया। जो पत्थर सामने पड़ा पिघलकर चिकना हो गया। क्या मैं झूठ थोड़े ही कहता हूँ? इस प्रहार ने मुर्दों की अविचल निद्रा को भंग करने का प्रयास किया और जाग्रत प्राणियों को सुप्त संसार में प्रविष्ट कर दिया।' उसने कहा।

'किन्तु मैंने कब्रिस्तान मे, जहां तक नजर गई, कब्रें-ही-कब्रें देखी। शायद पुरानी समाधियो की जगह भी नई कब्रें बना दी गई हो।' मैं बोला।

'आपका खयाल ठीक है, बिलकुल ठीक। जब मुर्दे एक के ऊपर एक लदे हो तो यदि समाधि के ऊपर समाधि बने तो क्या हर्ज! फिर ये तो उन बेचारों की समाधियां है जो बाद में सिसक-सिसकर मरे है। उस दिन के तो मृत शव मालूम नहीं कहां-कहां गए होंगे—नदी मे, नालों मे और सागर में। कितनों का जल-प्रवाह हुआ होगा और कितने मछलियों के भोजन बने होंगे और कितने अग्नि-देवता की लपकती लपटों मे भस्म! जब बाद में गणना की गई तो मालूम हुआ कि हिरोशिमा मे ७८,१५० प्राणियों की मृत्यु हुई, और लगभग चौदह हजार लोगों का पता ही न चला! शायद साढ़े सैंतीस हजार को क्षति पहुँची!' प्रोफेसर हामागूची ने अपनी कांपती उंगलियों पर गिनते हुए कहा।

इस समय हम एक लोहा, कील, ढिबरी इत्यादि बेचनेवाले की दूकान के पास थे। बुड्ढा, जीर्ण दुकानदार दुकान बन्द करने की तैयारी कर रहा था। सम्भवतः वह प्रोफेसर का मित्र रहा होगा, क्योंकि वह उसकी बात में टांग अड़ा, बिना पूछे ही कहने लगा, 'प्रोफेसर यह गिनती काहे की कर रहे हो? उस बम से मरनेवालों की? यह सब गलत है, सब खुराफात है। भला उस समय कौन गिन सकता था? देखो क्या इन लोहे की कीलों को तुम गिन सकते हो? इतिहास के प्रोफेसर को गणित-शास्त्र में दखल नही देना चाहिए।' दुकानदार ने एक लोहे का थपका-सा हाथ में दिखाया। उसको गौर से देखने से मालूम हुआ कि उस थपके में कीलें पिघलकर

एकाकार हो गई थीं। 'मेरी दुकान की कीलों से भरे बोरे-के-बोरे इसी तरह बरबाद हो गए। इस मामले में कौन सही हिसाब-किताब कर सकता है? गोरो हामागूची! आज तो फकाफक सिगरेट फूंक रहे हो अकेले-ही-अकेले?' दूकानदार ने कहा।

प्रोफ़ेसर ने एक सिगरेट उसे भी दी और हम आगे चले। उसकी कुटिया दिखने लगी थी। गहरी घटाओं के गहरे अँधियारे मे भी वहाँ बिजली की बत्ती टिमटिमा रही थी। अचानक वर्षा की बड़ी-बड़ी बूंदें टपाटप पडने लगीं। वह अपनी चाल और तेज़ करते हुए बोला, 'ऐसी ही बड़ी-बडी बूंदें अणु-बम के बाद गिरने लगी थी। अब जल्दी की जाए, नही तो दोनों भीग जाएँगे।' उसके यह कहते ही बिजली बडे ज़ोर से कडकी और तूफ़ान उठने लगा। 'यह पिका-दोन हैं पिका-दोन (Pikadon)। हमारी भाषा का नया शब्द।' वह बोला।

'पिका-दोन?' मैंने आश्चर्य से कहा।

'हाँ-हाँ, पिका-दोन! जिसका अर्थ है बिजली और गर्जन। यह नया शब्द भी हिरोशिमा के अणु-बम से उत्पन्न हुआ।' उसने अपना एक हाथ दाढी पर फेरा।

'आपका यह पुराना नगर नया हो रहा है और आपकी भाषा का भाण्डार भी नये शब्दो से भर रहा है। अब इस देश की उन्नति को कौन रोक सकता है?' मैं बोला।

'आप अमर रहे और आपके वाक्य अक्षरशः सत्य हों! यही इस वृद्ध की कामना है।' प्रोफेसर ने मुझे आशीर्वाद दिया और मैंने अपना मस्तक नत कर लिया।

१६

उस अँधेरे से लदी गीली सन्ध्या मेरे मन के उतावलेपन को नम न कर सकी। मेरा जी चाहने लगा कि रात्रि की ओट मे छिपे हिरोशिमा के खण्डहरों में होकर फेनिल सागर-तट की ओर चल दूं। अपने समय का पूरा

उपयोग कर डालूँ। जैसे ही बूंदाबांदी बन्द हुई मैं गोरो हामागूचो से आज्ञा लेकर उसकी कुटिया के बाहर चलने लगा।

'जरा जल्दी लौटना मेरे मित्र! तुमको मैं कुछ पुरानी बातें बताना चाहता हूँ।' उसने खँखारते हुए कहा।

'जल्दी ही आऊँगा। बस, घूम-घामकर अभी वापस आता हूँ।' मैंने उत्तर दिया और अपने पग बढाते हुए समुद्र के किनारे की ओर चल पड़ा।

रात्रि के अन्धकार में छोटी-छोटी झोंपडियाँ दूर पर ऐसी लगतीं मानो बहुत-से बड़े जुगनू स्थिर हो गए हों। विध्वंस पर गहरा पर्दा डाले नीचे की मन्द ज्योति, आकाश मे ऊपर तारिकाओं से होड-सी लगा रही थी। ऊपर गहरा अम्बर और नीचे अँधेरे का काला कम्बल इन धुंधली पीली बत्तियों से टिमटिमा रहा था। हवा तेज थी और सागर की घरघराहट इस सुनसान में कुछ अधिक मालूम दे रही थी।

मैं तेजी में तो था ही। जल्दी ही किनारे पर पहुंच गया। पास की चट्टान के सहारे खड़े हो सागर से छूती हुई उग्र वायु को अपने नथने फैलाकर अन्दर भरने लगा।

अँधेरे में कुछ देर रहने के कारण मेरे नेत्रों में ऐसा गुण आने लगा कि मैं किसी वस्तु के आस-पास सिमटी कालिमा को विस्तृत अन्धकार में से सुलझाकर अलग देख सकता था। मेरी दृष्टि पास की चट्टान के छोर पर बैठे मनुष्य की-सी आकृति में जा लगी। अचानक मेरे मुँह से जापानी भाषा में ये शब्द निकल पड़े, 'आप कौन है? वहाँ क्या कर रहे हैं?'

'और आप कौन? क्या मेजर...' दूसरी ओर से उत्तर मिला।

'ओह! क्या नन्दलाल हो? यहाँ अँधेरे में?'

'और आप भी इस अँधेरे मे...' उधर से आवाज आई।

'क्या चोरों की तरह छिपे हो? इधर चलो।' मैंने मजाक किया।

'इस अँधेरे में सब चोर हैं।' नन्दलाल उछलकर मेरे पास आ गया। मेरे कन्धे पर सिर टिकाकर वह बोला, 'मेजर! मैं तो आज लुट चुका... यहाँ लुट चुका। ही...ही...ही...ही...'

'क्या बे-सिर-पैर की बातें करते हो ? क्या हुआ ? बोलो तो...' मैंने कहा।

'अब क्या पूछते हो ? तुम्हारा नन्दलाल बिक चुका।'

'लुट चुका, बिक चुका ! क्या बकवास लगाई है, नन्दलाल !' मैंने उसे झिडका।

'कुछ भी कह लो मेजर ! तुम बड़े हो ! सच तो यह है कि मैं तो बर्बाद हो गया...बर्बाद...बिल्कुल बर्बाद...लुटा हुआ बर्बाद...' वह फिर कहने लगा और अपने मुंह को मेरे दाएँ कान के इतने पास ले आया कि उसकी श्वास मेरी कनपटी का स्पर्श करने लगी।

'क्या किसी ने तुम्हारी जेब काट ली ? ठीक-ठीक बताओ।'

'जेब तो नहीं...मगर जेब के नीचे अन्दर छुरी चल गई...मेजर ! अन्दर मीठी रसीली छुरी !' नन्दलाल ने अपनी बाईं जेब के ऊपर हथेली रखते हुए कहा।

'क्या बहकी-बहकी बातें करते हो ! होश में तो हो ? इस अँधेरे ने शायद तुम्हारी अक्ल पर भी पर्दा डाल दिया है। यहाँ इस समय तुम क्या कर रहे थे ?' मैं बोला।

'जो मेरे साथ हुआ है मेजर, अगर वह आपके साथ होता तो आपकी भी मेरी-जैसी हालत होती। अंधेरा-उजाला भूल जाते। कैसी मीठी थी उसकी मुस्कान, उसी का ध्यान कर रहा था...हा...हा ..हा...हा...'

'किसकी मुस्कान ? किसकी याद ?'

'उस सेत्सूको की। वह पास की झोपड़ी मे गई है। कुछ देर बाद मुझसे वहाँ आने को कह गई है। वह नर्स नहीं, अप्सरा है।' नन्दलाल मस्त होकर कहने लगा।

'क्या बकते हो ? उस नर्स के पीछे ऐसे लग लिए हो कि कभी साथ छोड़ते ही नहीं। क्या हम लोगो की बदनामी कराओगे ?' मुझे ताव आ गया।

'बिगड़ो मत मेजर ! मेरे प्यारे मेजर ! जब कोई युवती मधु से भरे

प्याले के समान जवानी में छलकती हो तो क्या मैं उसको छोड़ दूँ ? यह कभी नहीं हो सकता। अपनी मर्दानगी पर मैं कभी धब्बा नहीं लगने दूँगा।' नन्दलाल ने कहा और उसके बाल हवा में बिखरकर उड़ने लगे।

'वाह रे दिलेर ! वाह रे मर्द ! अँधेरे में छिपे-छिपे यह घुस-फुस करते हो ! तुमको शर्म नहीं आती ?' मेरा पारा ऊपर चढ़ने लगा था।

'पहले बात तो सुनो, तब नाराज़ हो लेना। अभी कुछ देर पहले वह और मैं साम्पान में दूर निकल गए थे। ऐसी ही तेज हवा थी। इठलाता-लहराता किमोनो उसका था और उसे सम्हालनेवाला मैं था। वह रानी थी और मैं था उसका सेवक। कभी वह पतवार चलाती और कभी मैं। मैंने उससे गाना गाने की विनय की और उसने धीमे स्वर में गीत गुनगुनाया और मेरे भारी कण्ठ से भी स्वर फूट निकले।' नन्दलाल आवेग में कहने लगा।

'वाह रे गवैये !'

'अभी और सुनो मेजर !' मैंने उससे कहा—'हिरोशिमा के खण्डहरों से मेरा मन परेशान होने लगा है। अब हम-तुम रोज शाम को साम्पान की सैर करेंगे। मैं स्वयं खण्डहर-सा हुआ जा रहा हूँ। मुझे बचाओ !

'क्यों, आपको क्या बीमारी है ?' सेत्सूको ने पूछा।

'मुझे दिल की बीमारी है। मेरा दिल धक-धक होने लगता है'''अब भी हो रहा है। छूकर देखो। तुम तो नर्स हो।'

'उसने मेरे वक्ष पर अपनी कोमल हथेली रखी और मैंने अपने भारी दोनों हाथों से वह हथेली दबा ली।

'"आप तो बिलकुल ठीक हैं। हृदय की गति भी ठीक है।" उसने भोलेपन से कहा।

'"मेरी बीमारी बहुत गहरी है। तुम नहीं पहचान पाईं।" मैंने उद्विग्न हो कहा।

'"नहीं !" वह हँस पड़ी। फिर कहने लगी कि अपना इलाज किसी डॉक्टर से कराओ। कैसी उसकी मधुर खिलखिलाहट और कैसी शैतानी-

भरी यह बात ! मैं तो उसके हाथ बिक गया।' नन्दलाल कहने लगा।

'वाह रे नन्दलाल ! तुम भी खूब बिके ! क्या दिलफेंक शख्स हो !' मैंने चुटकी ली।

'बस मेजर ! यही तो ठीक नहीं है। प्रेम की बातों को मजाक में न टालो। इस समय मेरे जिगर में खंजर चल रहे हैं।'

'बहादुरों के ही तो खंजर लगते हैं। शाबाश ! सहते चलो खंजरों के घावों को मेरे नन्दलाल !'

'जब तक सेत्सूको साथ रहेगी मेरे ऊपर सहस्रों बर्छियाँ चलती रहेगी। उसकी पतली नुकीली आँखों में से नुकीली बर्छी ! हाँ तो मेजर, मैं उसका चेहरा एकटक बहुत देर तक देखता रहा। उसने गर्दन नीची कर ली। मैंने कहा—मेरा हाल हिरोशिमा नगर का-सा हो गया है। मैं भी खण्डहर बनकर इन खण्डहरों में रहना चाहता हूँ।

' "खण्डहर बनकर नहीं। उन खण्डहरों को जीती-जागती इमारत में परिणत करनेवाले बहादुर सैनिक की तरह यहाँ रहिए।" सेत्सूको सान ने दृढ़ता से कहा।

'मैं अवाक् रह गया। वह कोमल सुन्दरी कितनी मधुर और कितनी चतुर है !'

'तुम रात-भर भाटों की तरह सेत्सूको के गुण गाते रहो। मुझे तो जल्दी है। प्रोफेसर गोरो हामागूची मेरी बाट जोहते होंगे।' मैंने उत्तर दिया।

'चलो, तुम्हारे साथ कुछ दूर चलता हूँ। फिर तो प्रेम के मार्ग पर मुझे चलना ही है।' नन्दलाल ने मेरा हाथ दबाते हुए कहा।

हम दोनों अँधेरे में आगे बढ़ने लगे। सागर की फेनिल लहरें इस अन्धकार में भी श्वेत, रजत-सी दिख रही थीं। एक अजब फुरफुरी मेरे शरीर में होने लगी थी। कुछ दूर जाने पर नन्दलाल एक झोंपड़ी की ओर जानेवाली पगडण्डी पर मुड़ गया। मैं प्रोफेसर की कुटिया के सीधे मार्ग पर चल दिया।

•

कभी विस्मृत अनुभूतियों की स्मृति ऐसे जागने लगती है, मानो किसी सूखी नीरस चट्टान की टेढ़ी दरारें गहरी होती जाती हों और उनमे बन्दी हुए अँधेरे में कालिमा दिखती हो। ऐसे समय में जिन्दगी के भ्रमित चक्रों की गति में अवरोध और मनोवृत्तियों में एक बोझिल गरिमा आ जाती है। सांसारिक संघर्ष में मनुष्य अपने को हारा-थका-सा पाता है, जिसके पग आगे न बढ़ सकेंगे। वह विचार करने लगता है कि शायद भटकते पथिकों की यही मजिल है, जहाँ सुस्ताने को उसे दम लेना चाहिए। इस अनुभूति को चाहे डगर मे रुकने के मील के पत्थर कहिए, या व्यथित मनोभावनाओं को विस्मृत करने का क्षणिक साधन। कुछ भी हो, मुझे ऐसा लगने लगा कि प्रोफेसर गोरो हामागूची कुछ ऐसी ही अवस्था मे रहा होगा जब मैंने उससे पूछा :

'आप क्या विचार कर रहे है प्रोफेसर ?'

'कुछ नही। पुराना खूसट मैं, पुरानी ही बातें सोच सकता हूँ। अपनी मातृभूमि के पुरातन यश और विजय के स्वप्न मेरी बूढी आँखो मे स्थायी हो चुके हैं। इसीलिए ऐसा लग रहा है मानो इतिहास की अविरल धारा इस नगर की व्यथा को घोलकर यहाँ के मरुस्थल मे सूखने लगेगी।' प्रोफेसर गोरो हामागूची ने अपना सुनहला चश्मा नाक पर नीचे खिसकाते हुए अपने नेत्र फैला दिए। बिजली के लैम्प का प्रकाश छोटा हो उसकी धुँधली पुतलियों में चमकने लगा, उसके स्वप्नो की तरह।

'आपका देश तो बहुत वर्षों से अपने पास के देश चीन और कोरिया के मामलों में अटकता रहा है। जब बाह्य विजय की कामना होगी तभी बाह्य आक्रमण भी होंगे।' मैंने प्रोफेसर से कहा।

'तो मेरे देश की अन्तर्राष्ट्रीय नीति को आप दूसरे देशों से उलझना कहते है ?' वह आवेग मे बोला।

'मैं आपके देश का आदर करता हूँ, आपका आदर करता हूँ। पर जो कुछ भी मैंने पढ़ा या सुना है उससे तो यही मालूम होता है कि जापान कोरिया को विजय करना चाहता था और चीन के मामलों मे हस्तक्षेप

बराबर करता रहा था।' मैं अपनी बात पर अटल था।

'आप मेरे छोटे भाई के तुल्य हैं, इसीलिए आपको सही बात बताना मेरा कर्तव्य है। हमारा देश कोई एक समूचा भूखण्ड तो है नहीं। यह बड़े-छोटे द्वीपों का समूह है—कियुशू, शिकोकू, होन्शू, होकैडो, काराफूटो और साखालिन द्वीपों का। पहले ताइवान या फार्मूसा का द्वीप भी इसी देश का भाग था। जब देश में जनसंख्या बढ़ने लगी तो हमको अपने-आप ही कोरिया और चीन की ओर आँख उठानी पड़ी। यह एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गई।' उसने मुझे समझाया।

'मैं आपकी स्पष्ट वार्ता से प्रभावित हूँ। मैं समझा आपके देश की भौगोलिक स्थिति और ऐतिहासिक आवश्यकताओं को तो। फिर यह दूसरा विश्व-युद्ध भी ऐसी ही कोई ऐतिहासिक आवश्यकता से लड़ा गया होगा—उन दूसरे देशों की आवश्यकता जो आपके देश से सशंकित रहे होंगे।' मैं बोला।

'मित्र ! मेरा देश किसी को क्यों सशंकित करता ? चीन के दार्शनिक कन्फ्यूशियस (Confucius) और आपके देश के प्रसिद्ध प्रचारक गौतम बुद्ध की शिक्षा हमारे शरीर की रग-रग मे व्याप्त है।' हामागूची ने अपना स्वर धीमा करके कहा, 'किन्तु जो देश जापान के निवासियों को अपने से तुच्छ समझेंगे उनके लिए पुराने "समुराई" योद्धाओं के खड्गों और कृपाणों पर सदैव धार पैनी रहेगी।'

'पुराने समुराई। मैं समझा नहीं।'

'यह सब समझने के लिए यहाँ के इतिहास को जानने की जरूरत है। उन्नीसवीं शताब्दी में यहाँ सेना का विस्तार व्यापक था। सेना को आधिपत्य मे किए "शोगुन" (Shogun) देश मे सबसे प्रभावशाली मन्त्री होता। उसके सहायक "दायम्यो"(Daimyo), जिनको फौजी सामन्त समझिए, बहुत प्रभावशाली थे, और उनसे नीचे "समुराई" सैनिकों के सरदार, युद्ध के लिए उतावले वीर थे। आप कुछ समझे ?'

'हाँ।' मैंने छोटा-सा उत्तर दिया। मेरी कमीज के अन्दर गले मे

लटकती चाँदी की दाँत कुरेदनेवाली छोटी तलवार-सी किसी बटन में उलझकर मेरे वक्ष में चुभ रही थी। ऐसा लगने लगा कि उसकी नोक पैनी होती जा रही है और मेरे हृदय को चीर डालेगी। मैंने कुछ आगे झुककर जैसे ही उसे कपड़ों के ऊपर पकड़कर हटाया, मेरी रगों मे भी खून चढ़ने लगा। राजपूताने के वीर योद्धाओं के हाथों में पानीदार पैनी कृपाण का भास होने लगा। वे क्या 'समुराई सामन्तों' से किसी तरह कम थे?

'हमारे देश में पहले ऐसे ही योद्धा थे प्रोफेसर! अब भी वहाँ से बहुत जवान फौज में आते है।'

'यही तो मैं कहता हूँ। किसी-किसी देश मे वीरो की और वीरगति पानेवालों की परम्परा-सी बन गई है। हमारे समुराई की कार्य-प्रणाली ही भिन्न थी। उनके सिद्धान्तों को हम "बुशिदो" (Bushido) कहते हैं। वे आत्म-समर्पण के, देशभक्ति के और शत्रु-मर्दन के अनूठे सिद्धान्त, जिनसे हमारी सेना आज भी अनुप्राणित है।' वह अपने गले को खँखारते हुए कहने लगा।

'तभी तो प्रोफेसर, जापान के आस-पास के देश सतर्क होने लगे।'

'आप ठीक कहते हैं। हम लोग करते भी क्या? उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से लेकर अन्त तक हमारा देश विश्व मे ऐसे ही रहा जैसे मैं इस कुटिया में अकेला रहता हूँ। न कहीं व्यापार, न अन्य राष्ट्रो से कोई सम्बन्ध। जन-संख्या बढ रही थी। लोगों में उत्तेजना भी आ रही थी। पश्चिमी देशों से हम सबक भी सीख रहे थे। इसीलिए कोरिया में हम घुस बैठे और फिर चीन में।' हामागूची ने इतिहास का पूरा परिच्छेद संक्षिप्त-सा करके कहा।

'आप लोगों में भला उत्तेजना क्यों न आती! सूर्य का उदय संसार के इसी भाग से माना जाता है। यहाँ गर्मी का असर पहले होना स्वाभाविक ही है।'

'जापान मे ही गर्मी नहीं आई। हिमाच्छादित रूस मे भी और नई दुनिया के अमरीका में भी। फिर क्या था; बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में रूस और जापान का युद्ध छिडा। चीन में बॉक्सर (Boxer) के विप्लव के

बहाने रूसी दस्ते वहाँ आ धमके और हम भी भिड़ गए। रूसी फ़ौजों को मात खानी पड़ी। हमने चीन में मुकडेन का नगर कब्जे में कर लिया। और फिर हमारा आर्थिक विकास होने लगा। हम शक्तिशाली बनने लगे।' प्रोफ़ेसर हामागूची इतिहास से ऐसा प्रभावित होने लगा कि बैठे-बैठे अपने जीर्ण दाहिने बाजू को ऊपर-नीचे कर मांसपेशियों के प्रदर्शन की चेष्टा करने लगा।

'आपके देश को शक्तिशाली होना भी था, क्योंकि वह पूर्वस्थित सब देशों का नेतृत्व भी तो करना चाहता था।' मैंने कुछ व्यंग्य-सा कस और कुछ सत्यता से प्रेरित होकर कहा।

'वही देश तो नेतृत्व कर सकते हैं जो अधिक उन्नतिशील और क्रियाशील हों। हाँ तो पहले विश्व-युद्ध मे हम इंगलैण्ड और अमरीका के साथ थे और हमने जर्मनी को पराजित किया था।' प्रोफ़ेसर हामागूची ने सिगरेट जलाकर उठते हुए धुएँ को देखते हुए कहा।

'मनुष्य का भाग्य और देश का भविष्य इस धुएँ के समान अस्थिर है। कही विश्व-विजय के अरमान उठे तो धूल में जा मिले। किसी ने अपने को उन्नति के शिखर पर समझा तो अन्त मे सागर की अथाह गहराइयों में जा गिरा। देखिए, नेपोलियन के अन्त को देखिए। आप तो इतिहास के पंडित है।' मैंने उत्तर दिया।

सम्भवतः मेरी बात प्रोफ़ेसर को अच्छी नही लगी। उसने अपनी नाक कुछ सिकोड़ ली। होंठो में फिर सिगरेट दबा ली और कुछ देर तक वह नही बोला। फिर सिगरेट का कश खीचते हुए वह कहने लगा—हमारे सेनानियों ने हमको दूसरे महायुद्ध मे हमारे पुराने मित्रों के विरुद्ध ला खड़ा किया। पर जापानी तो कर्मठ वीर होते हैं। अपनी धुन के पक्के। शत्रु को वे खदेड़ते चले गए। बर्मा और आराकान तक और आपके देश के द्वार तक।

'इसके आगे का इतिहास मुझे मालूम है प्रोफ़ेसर! मैं स्वयम् इस इतिहास का एक बहुत छोटा पात्र रह चुका हूँ। उस छोटी तारिका के समान।' मैंने निशा की कालिमा में टिमटिमाती तारिकाओं के समूह की ओर इशारा

किया। अचानक कुटिया का दरवाजा पवन के वेग से खुल गया। दूर क्षितिज पर तारिकाएँ आँख-मिचौनी कर रही थी।

हम लोग युद्ध-काल के अन्त में जापानियो पर बीती दुर्घटनाओं और मुसीबतों के बारे में वार्तालाप करते रहे। जब नीद से पलक भारी होने लगे मैं प्रोफेसर हामागूची से आज्ञा ले कुटिया के दूसरे कमरे मे सोने को चला गया।

१७

उस सुबह मौसम मे एक अजब भारीपन था। रात का कोहरा बोझिल हो टूटे मकानों को घेरे था। प्रोफेसर हामागूची की छोटी कुटिया पर लगी कनस्तरों की काली मटमैली छत भी टेढ़ी-मेढ़ी दिखने लगी थी। ऐसा लगता कि वह इस धुएँ और ओस के भार से जगह-जगह दब गई है। कभी-कभी बड़े-बड़े ओस-कण टप-टप टीन के किनारों से गिरने लगते। कई दिन पैदल घूमते-घूमते मेरे पैर भी थके हुए थे। फिर भी नन्दलाल और सेत्सूको की बाट जोहता हुआ मैं बाहर टहल रहा था। कभी मैं जगली झाड़ी की दो-चार पत्तियों को तोड़ अपनी उँगलियाँ गीली कर लेता और फिर उन पर रूमाल फेरने लगता। कभी भीगी घास के तिनकों को उखाड़ अपने दाँतों के नीचे दबाने लगता। अचानक सफेद बगुलों का एक जोड़ा सागर के तट की ओर उड़ता हुआ निकला। मेरी आँखें उसका पीछा करने लगी। आकाश सम्भवतः अपने बोझ से ही झुककर पृथ्वी की परिधि को छू लेना चाहता था। बादलों की कोरों मे सुनहले रग भरने लगे थे। मैं उस ओर देखता रह गया। पीछे से किसी ने दबे पाँव आकर मेरे कन्धे पर जोर से हाथ मारते हुए कहा, 'क्या देख रहे हो मेजर ?'

'वहाँ दूर बगुले के एक जोड़े को। ओह ! तुम आ गए नन्दलाल !' मेरे मुँह से निकल गया।

'वहाँ क्या देखते हो ? इस जोड़े को देखो।' वह सेत्सूको ... कर खड़ा हो गया।

मैंने सेत्सूको सान को *प्रणाम किया और नन्दलाल की बात पर कुछ* ध्यान भी न दिया।

'आज जी भरकर यहाँ और मस्ती की जाए। फिर कल से तो वही फौजी काम का ढर्रा।' नन्दलाल बोला।

'तो चलो।' मैंने कहा।

हम सब चल दिए। आज का कोई नियत कार्यक्रम नही था। हिरो-शिमा के भग्न नगर मे घूमते-घूमते कुछ ऐसी आदत पड गई थी कि वहाँ की बर्बादी कुछ प्राकृतिक-सी लगने लगी। परन्तु आज सबकी चाल भारी थी। पिछले दिनों की थकान शायद टाँगों में पूरी तौर से रम चुकी थी। हम चलते-चलते रुक जाते। टूटे खण्डहरों में दृष्टि अपने-आप अटकने लगती और हम उनको गौर से देखने लगते।

दूर पर गिरे, बिखरे, जले मकानों मे कुछ *खिडकियाँ अब भी शेष थी।* उनमें से ही सुबह का धुन्ध घुसकर उनके अन्तर को पसीज चुका था। छतों के टूटे खपड़ो के ढेर और बिना छतवाले अर्घ-ध्वस्त मकान सब काले-काले एक-से ढेर दिखते। ये उस विस्तृत, बिखरे खण्डहरों के समूह से दूर थे, जो *शायद अणु-बम के विस्फोट का केन्द्र रहा होगा। इस केन्द्र के व्यासार्ध के* अन्तर्गत कोई भी इमारत लम्बरूप न थी। हर वस्तु ध्वंस और क्षितिज के समानान्तर। ऐसा लगता मानो रेखागणित के सब आकार यहाँ विद्यमान थे। यहाँ धरती का रंग भी गेरुआ और कत्थई होकर रह गया था।

'नन्दलाल, देखो ये लोहे के ककाल कैसे मुड़े-टूटे, एक-दूसरे से लिपटे खड़े हैं। वे कितने ठण्डे होगे! मुझे देखकर फुरफुरी चढ़ती है।' मैंने कहा।

'यहाँ सर्दी है। जड़ वस्तु तक ठंड से बचने को आपस में लिपटती हैं, पर हम प्राणी बेवकूफ-से यहाँ अकेले-अकेले घूमते हैं।' उसने उत्तर दिया।

'आपकी बात सही नही है कैप्टेन! देखिए वे टेलीफोन के खम्भे तो झुके, मुड़े अकेले खड़े हैं।' सेत्सूको ने नेत्र चमकाते हुए कहा।

'वे ठिठुरकर पृथ्वी से लिपटने का प्रयास कर रहे हैं पर हम तो जब जी चाहे लिपट सकते हैं। हा-हा-हा!' नन्दलाल ने सेत्सूको की कमर की

ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा। वह एक ओर हट गई।

हंसी बन्द होने पर वह धीमे स्वर में बड़बडाने लगा—मेरी तकदीर मे तो अकेले ठिठुरना ही बदा है। कुछ रुककर वह मुझसे बोला, 'मेजर, यहाँ क्या रखा है, जो समय बर्बाद किया जाए। चलो, समुद्र के तट पर, चट्टान पर धूप लें, जहाँ सान्पान की सैर के बाद मैं और सेत्सूको बैठे थे। क्यों सेत्सूको, ठीक है न?'

सेत्सूको सान ने सर हिला दिया। मैंने देखा उसके गाल गुलाबी हो चले थे।

हिरोशिमा नगर की दक्षिण दिशा मे सागर का तट बहुत सुन्दर था और यहाँ का दृश्य अत्यन्त मनोहारी। दूर पीछे तीनों ओर हरी पहाड़ियाँ और आगे स्वच्छ नीला जल-पट, जिस पर साम्पान और किश्तियाँ ऐसे उतराती मानो नील-सरोवर में हंस। हम लोग किनारे की चट्टान पर बैठ उन हंसों-जैसी नावों की क्रीडा देख रहे थे। दूर पर एक मोटर-बोट तीव्र गति से तट की ओर जा रही थी। मोटर-बोट को किनारे पर बांधकर जब उसके चालक ने अपना बेंत का हैट सँभाला और गले मे बँधे रूमाल को ठीक किया तो मैं पहचान गया—वह मेरा मित्र तेरुओ ओकादा था।

'मिस्टर तेरुओ ओकादा! तेरुओ ओकादा!' मैं उसी तरह से चिल्लाने लगा जैसे मैं उस दिन उसे खोजते हुए कूरे के तट पर आवाज दे रहा था।

उसने मेरी ओर देखा और मैं भागकर उसके पास पहुँच गया।

'आप यहाँ कहाँ?' मैंने पूछा।

'आपकी खोज में। और आप यहाँ कैसे?' तेरुओ ओकादा की चौड़ी मुस्कान उसके चेहरे पर फैल गई।

'मैं यहाँ अपने मित्रों के साथ आया था इस नगर को देखने।' मैंने कहा।

'और मैं भी अपने एक मित्र को देखने आया हूँ। मेरे सौभाग्य से मुझे दूसरा मित्र मिल गया। अब मेरे ही साथ कूरे चलिएगा।' उसने मुझसे हाथ मिलाते हुए कहा।

'किन्तु मेरे साथ दो और व्यक्ति हैं।'

'मेरी मोटर-बोट तो आपने देखी है। दो क्या चार और हों, सबको मैं ले चल सकता हूँ।' ओकादा ने गर्व से कहा।

मैंने कैप्टेन नन्दलाल और सेत्सूको सान का परिचय कराया और तरुओ ओकादा प्रसन्न हो गया। वह चार घण्टे की अवधि माँगकर अपने मित्र को देखने चल दिया। हम ओकादा के साथ कूरे वापस चलने की तैयारी मे लग गए।

नन्दलाल ने फिर सेत्सूको के साथ साम्पान मे सैर करने की ठान ली, और मैं गोरो हामागूची की कुटिया की ओर चल दिया।

०

जब मैंने प्रोफेसर हामागूची से विदा ली तो उसके हृदय में उठते उद्गारों ने उसके गले को अवरुद्ध कर लिया था और उसके पतले धुँधले नेत्र डबडबा आए थे। बहुत देर तक मेरा हाथ अपने हाथ में लिए वह कुछ भी न बोल सका। मैंने अनुभव किया कि उसका हाथ काँप रहा था और रह-रहकर उसकी उँगलियाँ कुछ अधिक प्रकम्पित होती। मेरा हाथ हल्के-से दबाते हुए वह बोला—मेरे प्यारे मित्र! आपके यहाँ रहने से यह कुटिया जगमगा गई। आप फिर उसको अंधकार के संसार मे छोड़े जा रहे हैं—इस टूटे नगर के उस अंधकार मे जो रात-दिन यहाँ गहरा होता जाता है।

'प्रोफेसर! आप कितने अच्छे! कितने उच्च आदर्शों की झाँकी लेनेवाले हैं! न आपके निवासस्थान मे, और न इस नगर में ही, कभी अँधेरा रहेगा, जब तक इस क्षितिज में सूर्य और चन्द्र का प्रकाश है।' हामागूची के और निकट आकर मैंने चमकते सूर्य की ओर उँगली से इंगित करते हुए कहा।

फिर मैंने झुककर उसे नमस्कार किया और मुझे आशीर्वाद देते हुए उसके होंठ फड़कने लगे। उसने धीमे स्वर मे कहा—'डॉक्टर तोशियो को मेरी शुभकामनाएँ देना और उससे कह देना कि कभी-कभी इस बूढ़े की भी खबर ले लिया करे।'

जब मैं सागर-तट पर पहुँचा, कैप्टेन नन्दलाल और सेत्सूको सान भी कुछ दूर आते दिखाई दिए। ओकादा मोटर-बोट ठीक-ठाक कर रहा था। मैं ओकादा के पास बैठ गया। सेत्सूको एक ओर बैठी और नन्दलाल ने हँसकर उसी के बगल में आसन जमा लिया। बोट चल दी और सुखद समीर हमारी नाक और आँखों मे भरने लगी।

'हिरोशिमा नगर को देखो, कैसा विध्वंस हो चुका है ओकादा! यह तो नश्वरता की बडी समाधि-सी दिखने लगी है।' मैंने कहा।

'हाँ, आप ठीक कहते हैं। नश्वरता यहाँ समाधि लेना चाहती थी पर यहाँ के कर्मठ लोग उसे विचलित करना चाहते हैं।' ओकादा ने उत्तर दिया और अपने मजबूत बाजुओं से उसने बोट को निर्धारित दिशा मे गतिशील कर दिया।

मैंने इस नगर के खण्डहरों में खूब भ्रमण किया है। ऐसा लगता है मानो यहाँ के लोग कुछ ही दिनों में नव-निर्मित नगर बना डालेंगे। सचमुच वे बडे कार्यशील और अथक परिश्रम करनेवाले हैं।' यह कहते-कहते मेरे मस्तिष्क में अपने देश की समाधियो पर बने मठ और कब्रों पर बने दरगाहों के चित्र खिंचने लगे। यह हिरोशिमा का नव-निर्माण था अथवा उसके खण्डित अन्तर की वेदना को अमर करने का प्रयास? जैसे-जैसे यह नगर बनेगा इसके खण्डहर मिटेंगे। कब्रों पर फूल खिलेंगे। सम्भवतः लोग फूलों में छिपी व्यथा को भूल जाएँ। नवरचित रास-गृहों के नीचे दबी, खण्डहरों पर बनी नींव का वे लोग कभी ध्यान भी न करेंगे जो वहाँ आमोद-प्रमोद के रंगों में डूबेंगे। कुछ भी हो, मुझे तो ऐसा लगने लगा कि जैसे-जैसे नई इमारतें यहाँ बनेंगी, मनुष्य के मनुष्य पर किए आघात की निर्ममता साकार होती जाएगी।

इस समय मेरी दृष्टि आकाश मे बादलों में उलझी थी। एक बादल का टुकड़ा धुआँ-सा बनकर नीले अन्तरिक्ष में समा गया था और देखते-ही-देखते दूसरा रुई के पहलों-सा बादल तैरता हुआ वहाँ आ मिला।

'मेरे मित्र! मैं भी अपने एक कर्मठ साथी से मिलने इस नगर मे आया

था।' ओकादा बोला।

मेरा ध्यान टूटा और मैं कहने लगा, 'ओह! आपका कौन साथी? वह कहाँ रहता है?'

उसने बताया, उसका साथी फौज मे तोप चलानेवाले दस्ते में था। इस नगर के पास के ग्राम का रहनेवाला वह, हिरोशिमा में शत्रु के वायुयान पर आक्रमण करनेवाली टोली मे था। जब उस सुबह शत्रु के वायुयानों का गर्जन हुआ उसने तोप उस ओर मोड़ी। अनेक सूर्यों के-से सम्मिलित प्रकाश में उसकी आँखें चौंधियां गईं। वह कुछ न कर सका। उसकी आँखों के आगे अन्धकार छा गया।

'वह अन्धकार अमर हो गया। मेरे साथी की आँखों की ज्योति सदा के लिए चली गई। उसकी आँखों की पुतलियाँ पिघल गईं। उनमे से पानी बहने लगा। आँखों का अस्तित्व ही मिट गया और उनकी जगह अब लाल-चढ़े दो छिद्र रह गए हैं, जिनके परे अन्धकार-ही-अन्धकार। पर वह किसी तरह जीवित है। मैं उसका पुराना साथी कभी मछली और कभी खाद्य-सामग्री उसे भेंट करने जाता हूँ।' ओकादा कह रहा था।

मेरे नेत्रों को मेरे दाहिने हाथ की एक उँगली अपने-आप स्पर्श करने लगी। जब दृष्टि दूसरी ओर हुई, मैंने देखा नन्दलाल और सेत्सूको कुछ फुस-फुस कर रहे थे।

नन्दलाल अपना थरमस खोल कभी सेत्सूको को कॉफी पिलाता, कभी बिस्कुट खिलाता। उसके पास और सटकर वह कभी सेत्सूको के कपड़ों का स्पर्श करता तो कभी हवा में इठलाती उसकी लटों की ओर हाथ बढ़ाता। इस समय उसके होंठ रूखे-से थे। वह अपनी सुध भूले हुए था। न उसने हमसे एक शब्द बोला, और न कॉफी पीने को कहा।

मैंने देखा, सेत्सूको खान के गालों पर रंग ऐसे चढ़ रहे थे जैसे ऊपर आकाश मे। कभी पीली-सी गर्दन से ऊपर की ओर गुलाबी ऐसे चढ़ने लगती जैसे गुलाब की पाँखुरियों मे। इस समय नन्दलाल ही बातें किए जा रहा था और वह चुप थी। वह क्या कह रहा था यह मैं नहीं सुन सका,

क्योंकि बोट का इञ्जिन भड़-भड़ कर रहा था। ओकादा ने उस्र इस समय मेरा हाथ दबाते हुए आँख से दोनों की ओर इशारा किया और उसकी मुस्कान चौड़ी हँसी में बदल गई।

'चलो, आपको एक सुन्दर स्थान भी दिखाता चलूँ। हिरोशिमा के टूटे दृश्यों से आपका मन भर चुका होगा।' ओकादा ने यह शब्द कहते हुए मोटर-बोट की दिशा बदल दी।

'मोटर-बोट में यात्री, और बन्दीगृह में बन्दी, दोनों की एक-सी ही दशा होती है। दोनों को निर्देशक जहाँ चाहे ले जा सकता है।' मैंने उत्तर दिया।

'खुली हवा और बन्दीगृह, आपने भी क्या उपमा दी है! यहाँ आप बन्दी नहीं हैं, आपके वे साथी जरूर बन्दी हुए जा रहे हैं।' ओकादा ने ये शब्द धीमे स्वर में कहे और वह हँसने लगा।

'उनको आप ही बचाइए। वे मेरे काबू के बाहर हो चुके हैं।' मैंने ओकादा से कहा।

'न आपके काबू में, और न मेरे काबू में। अब तो वे उस नवेली के कब्जे में लगते हैं। कहीं प्रेम-सागर में उतराते-उतराते डूबने न लगें!' ओकादा बोला। हम दोनों ने नन्दलाल की ओर देखा। वह अपनी सुध-बुध भूला सेत्सूको के और निकट पहुँच चुका था।

'उसे डूबने भी दो। वह भी इस बोट के चालक की तरह सागर में डूबकर ऊपर आ जाएगा—मेरा मतलब है प्रेम के सागर में डूबकर, और साथ में एक प्रेमिका लिए।' मैंने कहा।

'आप बहुत शरीर हैं मेजर! यह महिला गुम-सुम, चुपचाप रहती है। मेरी स्त्री तो बहुत बोलनेवाली, कान खानेवाली, दिमाग चाटनेवाली। वह अक्सर आपको याद कर लेती है।' तेरआ ओकादा ने पतली आँखें तिरछी करते हुए कहा।

'वे तो एक अतिश्रेष्ठ महिला हैं। यह अच्छा है कि मेरे पास बोलनेवाली जापानी गुड़िया है; और दूसरे के पास चुप

यहाँ सबने अपना-अपना इन्तजाम कर लिया है। और रह गया मैं अकेला।' मैं बोला।

'आपका भी इन्तजाम हो सकता है। पर हाँ! आदर्शवादी लोगों को तो आदर्श वस्तुओं की झाँकी दिखानी चाहिए। मामूली हाड-मांस की पुतलियों से भला वे थोड़े ही प्रसन्न हो सकते है। इसीलिए मैं आपको एक पुण्यस्थान दिखाने के लिए चल रहा हूँ। पाप-प्रांगण से उतनी ही दूर जितना वह क्षितिज।' उसने मुझ पर व्यंग्य कसा और अपनी उँगली से दूर आकाश की ओर इशारा किया।

ओकादा ने मोटर-बोट की गति तीव्र कर दी और हम कुछ देर बाद 'मिया-जिमामा' द्वीप के किनारे जा लगे। पाइन और सीडर के सघन वृक्षों का यह सुन्दर-वन सचमुच ही हिरोशिमा के निर्जीव भूस्थल से कितना भिन्न था! यहाँ प्रकृति की अनूठी कोमलता और सौन्दर्यमयी स्निग्धता थी, और वहाँ पुरुष के नवीनतम अन्वेषण का घातक प्रहार था। यहाँ सुखद समीर और वहाँ वेगमय प्रभञ्जन। यह स्वर्ग का एक टुकड़ा और वह इस बोझिल धरती का बिलखता एक भू-खण्ड। ओकादा ने बताया कि इस द्वीप को लोग 'पेरेडाइज़ आइलैण्ड' अथवा स्वर्गिक-सुख का द्वीप कहते हैं। यहाँ कुछ लोग सैर को आते हैं और कुछ शिण्टो मठों का दर्शन करने। ओकादा और मैंने जब पीछे मुड़कर देखा तो कैप्टेन नन्दलाल और सेत्सूको किसी झाड़ी की ओट में उलझे रह गए थे। वे आनन्द के विहार में थे और हम मठ के पथ पर थे। मेरा मन ग्लानि से भरने लगा। मुझसे नहीं रहा गया और मैंने जोर से आवाज लगाई, 'नन्दलाल, नन्दलाल! हम यहाँ आ गए। तुम भी जल्दी आओ। देखो यह कितनी अच्छी जगह है!'

'हम आ रहे हैं मेजर! जरा ठहरो, थोड़ा रुको!' वृक्षों के तनों से टकराते हुए नन्दलाल के ये शब्द गूँज गए।

'किस फेर में पड़े हो! वे प्रेम के चक्कर में है। चलो, आगे बढो।' ओकादा ने मेरी बाँह पकड़कर आगे खीचते हुए कहा।

'मैं उसे इस चक्कर से निकालूँगा। मैं नन्दलाल की आदतें खूब जानता

हूँ। देखो वे दोनों आ रहे हैं।' मैंने कहा।

'अच्छा मित्र! यह भी देखना है।' ओकादा ने उत्तर दिया।

हम दोनों से न नन्दलाल ने और न सेत्सूकी ने ही कोई बातचीत की। वे दोनों आपस में ही मस्त थे। हम सश शिण्टो के मठ पर पहुँच गए थे। ओकादा मुझे उसके विशाल द्वार दिखा रहा था, जिनको जापानी भाषा में 'तोरिई' (Tori) कहते हैं। मैं 'तोरिई' पर की गई शिल्पकला की प्रशंसा कर रहा था और नन्दलाल और उसकी गोपी सेत्सूको शायद मठ के दर्शन में व्यस्त थे। अचानक नन्दलाल के मुख से निकले शब्द मेरे कान में पड़े, 'मैंने निश्चय कर लिया। मैंने निश्चय कर लिया।'

जब मैंने उधर देखा सेत्सूको सान नन्दलाल की भुजा का सहारा लिए मुदित हो रही थी। मृगी की भाँति वह कभी इधर-उधर देखती और फिर कभी एकटक नन्दलाल की ओर।

'ओकादा! देखो वहाँ क्या हो रहा है?' मैंने कहा।

'वहाँ हो रहा है प्रेमालाप। आपको संसार-भर की चिन्ता रहता है।' ओकादा आँखें सिकोड़कर बोला।

'मेरी समझ में वहाँ दो व्यक्तियों द्वारा अव्यक्त आराधना हो रही है।' ये शब्द अचानक मेरे मुँह से निकल पड़े।

'और मेरे विचार से वहाँ दो रसिकों का व्यक्त जीवन-गान हो रहा है।' ओकादा ने उत्तर दिया।

उसकी बात ही सच निकली, क्योंकि दूसरे क्षण ही सेत्सूको मधुर गीत गुनगुनाने लगी और उसके स्वर मठ में गूँजने लगे।

१८

कूरे में वापस आकर हम अपने कार्यों में इतने व्यस्त हो गए कि दो दिन तक मुझे कैप्टेन नन्दलाल से बातचीत करने तक का अवकाश भी न मिल सका। वह अपनी ड्यूटी पर सुबह से ही निकल जाता और मैं काम करने लगता। डॉक्टर तोमियो तनाका से मिले कुछ दिन हो च

उसी की कृपा से तो मैं हिरोशिमा में इतनी अच्छी तरह से रह रहा था। उसके पास जाना आवश्यक था। मैं शाम को फिर डॉक्टर के मकान पर जा पहुँचा।

'आइए, आइए मेजर! मैं तो आपका कई दिन से इन्तजार कर रहा था। हिरोशिमा की यात्रा कैसी रही?' डॉक्टर ने पूछा।

'बहुत अच्छी। प्रोफेसर गोरो हामागूची आपकी बहुत याद करते थे। वे तो प्रगाढ़ पाण्डित्य और सज्जनता की सौम्य मूर्ति हैं।' मैंने कहा।

'हाँ वह विद्वान है। वह बीती हुई बातों की कड़ियाँ जोड़ने मे लगा हुआ है और मैं अनिश्चित, अदृश्य भविष्य की परछाइयों को पकड़ना चाहता हूँ।' डॉक्टर ने अपने मोटे चश्मे की कमानी पर उँगलियाँ फेरते हुए कहा।

'आप दोनो व्यक्ति इस देश के लिए महत्त्वपूर्ण और आवश्यक कार्य कर रहे है। प्रोफेसर हामागूची के काँपते हाथों में टिमटिमाती बत्ती इतिहास के अँधेरे क्रोड को आलोकित करेगी और आपके शोध-निष्कर्षों द्वारा अणु-बम से उत्पन्न संक्रामक रोगों का विनाश होगा।' मैंने उसकी प्रशंसा की।

'आप तो हिरोशिमा से कवि बन आए हैं, जो इतनी अतिशयोक्तिपूर्ण बातें कर रहे है। अपने मित्रों की व्यर्थ की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए।' डॉक्टर तोशियो तनाका ने मुझे समझाया।

मैं चुप रहा और वह फिर कहने लगा :

'हाँ तो आपको वहाँ कैसा लगा?'

'कुछ मत पूछो डॉक्टर! ऐसी विस्तृत विभीषिका तो मैंने आज तक नहीं देखी। मेरा एक मित्र भी साथ गया था। वह पहले खूब हँसी-मजाक करता था; पर हिरोशिमा का विनाश देखने के बाद गुम-सुम-सा हो गया है। मालूम नही उसे क्या हो गया?'

'उसको मेरे पास ले आना, मैं उसका इलाज कर दूँगा।'

'अभी रोग का आरम्भ ही है। आपके कष्ट करने की आवश्यकता नहीं।

उसका इलाज तो आपकी नर्स सेत्सूको सान ही कर देगी।' मैंने व्यंग्य किया।

'हाँ, सेत्सूको भी चतुर है।' डॉक्टर ने सीधा-सा उत्तर दिया।

'अब यूरीको का क्या हाल है? हम सब उसके टूटे घर को देखने गए थे।'

'वैसा ही हाल है। कभी अच्छा, कभी बुरा। अपने टूटे घर की तरह वह भी टूट चुकी है। मुझे अभी दवा-दारू के सिलसिले में उसके पास जाना है। आपको भी ले चलूँगा।' कहते-कहते डॉक्टर ने यूरीको का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर पूरा वृत्तान्त मुझसे कह डाला। उसने बताया कि अपने घर के पट खटखटाते-खटखटाते उसकी छोटी मुलायम हथेलियाँ लोहू से लथपथ थी और उसकी चेतना पर दुःख का गहरा आवरण छा चुका था। जब वह इस चिकित्सालय में आई, उसका मानसिक सन्तुलन डिगा हुआ था। वह रह-रहकर किवाड़ों और खिड़की के पल्लों पर हथेलियाँ पटकती, उनको खटखटाती। कभी रोती, कभी चीखती। इसीलिए डॉक्टर ने उसके कमरे के सब किवाड़ और खिड़कियाँ निकलवा दी और उनकी जगह कम्बल के पर्दे डलवा दिए। उसकी देख-भाल नर्स सेत्सूको सान को सौंपी। सेत्सूको उसे किस्से-कहानी सुनाती, अपने मधुर संगीत से उसका मन बहलाती। फूल-पत्तियों में उसे व्यस्त रखती। अब वह पहले से कुछ ठीक थी। फिर भी कभी-कभी विचलित हो जाती और कभी मूर्च्छित हो जाती।

'इन दिनों जब सेत्सूको छुट्टी ले आपके साथ हिरोशिमा गई थी, मैं स्वयं यूरीको की देख-रेख करता था। वह बड़ी नाजुक है और बड़ी भावुक। इस भावुकता ने ही संसार में बहुत-से लोगों को परेशान कर रखा है। भावुकता स्वयं एक रोग है।' डॉक्टर तोशियो ने कहा।

'यदि भावुकता न हो तो न कवि हो और न लेखक और न आपके रोगी। सब खोखले मिट्टी के पुतले-से हो जाएँ।' मैं बोलने लगा।

'यदि ये विचार उन लोगों में होते जिन्होंने हिरोशिमा पर अणुबम का विस्फोट किया, तो आज यह रोना ही क्यों होता?'

'यह भी भावुकता के अभाव के कारण। जब मनुष्य की कार्य-प्रणाली मस्तिष्क के शुष्क विचारों से संचालित होगी तब ऐसा ही होगा। मुझे ही लीजिए। हम सब अब जल्दी ही भारत वापस जानेवाले है, पर आपसे मित्रता इतनी गहरी हो चुकी है कि विलग होने के विचार से ही हृदय-गति रुकने-सी लगती है।'

'क्या! अब आप जानेवाले हैं? मेरे सच्चे प्यारे दोस्त! ऐसा न कहिए।' डॉक्टर तोशियो तनाका व्याकुल हो गया।

'मेरे मित्र! जो आया है वह एक दिन जाएगा भी। मैं भी एक अजनबी-सा आपके देश में आया था और अब अपने अच्छे मित्रों की याद अपने हृदय मे समेटे किसी दिन यहाँ से चला जाऊँगा।' मैं यह शब्द कह तो गया, पर मेरे अन्तर मे सागर की-सी ऊँची लहरें उठकर मेरे कण्ठ को अवरुद्ध कर, नेत्रों की कोठरी में से छलकने का प्रयास करने लगी। मैं चुप हो गया। मेरी स्थिति उस नर्स ने सम्हाली, जो एक सन्देश डॉक्टर के पास लाई कि यूरीको ने उसे बुलाया है।

हम दोनों यूरीको के कमरे की ओर चल दिए। डॉक्टर तोशियो तनाका ने मेरे कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा, 'मेजर! यहाँ कुछ दिन और रहने की कोशिश करना। और यदि न रुक सको तो जाने के पहले नारा नगर में इस देश की प्रसिद्ध गौतम बुद्ध की प्रतिमा को अवश्य देखना। उसी प्रतिमा के पुण्य प्रताप से हमारी मातृभूमि अब तक जीवित है।'

'डॉक्टर, जी चाहता है मैं यहाँ बहुत वर्षों रहूँ। पर मेरा भाग्य तो अपने देश की सेना के साथ बँधा है। जब तक भारत की सेना यहाँ है तब तक मैं यहाँ हूँ।' मैं कहने लगा।

जल्दी-जल्दी पग बढ़ाते हुए हमने यूरीको के कमरे मे प्रवेश किया। पलग पर बैठी वह पीली-सी, मुरझाई दिख रही थी। पिछली बार देखने के बाद से वह आज कुछ और दुबली लगी।

आज भी वह फूलों के गुलदान सजाने में लगी थी। नर्स सेत्सूको मन्द वाणी से एक गीत गा रही थी। हमको देखकर उसने गाना बन्द कर दिया।

'यूरीको ! अब दवा पी लो। सुबह से दवा न पीने की क्यों जिद कर रही हो !' डॉक्टर ने कहा।

'नहीं, मैं दवा नहीं पीऊँगी।' यूरीको ने सर झटककर ज़िद की।

'अब तो सेत्सूको तुम्हारी देख-भाल को आ गई है। अब क्यों गुस्सा होती हो ?' डॉक्टर ने समझाया।

'नही-नही-नही।' वह अपने निश्चय पर अटल थी।

सेत्सूको ने मुझको इशारा किया कि मैं भी कुछ समझाऊँ। इसीलिए मैं बोलने लगा, 'आप क्यों इतनी ज़िद करती हैं। दवा पीजिए, अच्छी हो जाइएगा। और फिर अपने नगर मे आनन्द से रहिएगा।'

'कहाँ रहूँ, यहाँ या हिरोशिमा में ?' यूरीको ने पूछा और वह अपनी कमर को सीधी कर, अकड़कर बैठ गई।

'जहाँ चाहो वहाँ रहना, लेकिन दवा पीनी पड़ेगी। ये कहते हैं, हिरोशिमा अब बहुत-कुछ बन चुका है।' डॉक्टर ने मेरी ओर इशारा किया।

'मेरा हिरोशिमा ! मेरा प्यारा हिरोशिमा ! भला मैं उसको कभी छोड़ सकती हूँ ? और मेरा मकान—वह कैसा है ? वह भी क्या बन चुका ?' यूरीको आवेग मे कहने लगी।

'तुम व्याकुल न हो यूरीको ! इन मेरे मित्र ने और सेत्सूको ने तुम्हारा मकान देखा है। वह बन रहा है। क्यों, ठीक है न ?' डॉक्टर तोशियो तनाका ने मेरी और सेत्सूको की ओर देखकर आँख से इशारा किया।

हम दोनों ने डॉक्टर से सहमत होते हुए ऊपर-नीचे सर हिला दिया।

'तब तो मैं वहाँ जाऊँगी। बस, अभी-अभी। वहाँ मैं वह कमरा सजाऊँगी जहाँ हम चाय पीते थे, खाना खाते थे। मालूम नहीं उन फूलों की क्यारियों का क्या हाल होगा, जिनमें से फूल तोड़कर मैंने अपने बच्चों के कोट मे लगाए थे। मेरा चेरी का पेड़ अब बहुत बड़ा हो गया होगा। उसमे कोई पानी देनेवाला भी नहीं है। मुझे अब वहीं जाना है—अब मैं जा रही हूँ।' यूरीको पलग से उठने का प्रयत्न करने लगी। सेत्सूको और डॉक्टर ने उसकी रोक-थाम की।

इस समय बत्ती जलने का समय हो गया था और अँधेरा गहरा हो चुका था। अचानक चारों ओर बिजली की बत्तियाँ जगमगा उठीं। यूरीको के कमरे की बत्ती जल गई और बरामदे की भी। वह चिल्लाने लगी, 'क्या सब बत्तियाँ मिलकर जलेंगी? एक दुखिया की अँधेरी निराशा का वे मजाक उड़ा रही हैं। मैं अपने दुःख को अपने हृदय में सँजोकर रखूँगी। उस अन्धकार को बत्तियाँ छू भी नहीं सकतीं।' यूरीको ने दोनों हथेलियों से अपने वक्ष को कसकर दबा लिया।

'घबराओ नहीं यूरीको, प्यारी यूरीको! धीरज धरो। कम बोलो।' तोशियो तनाका ने उसकी पीठ सहलाते हुए कहा। सेत्सूको उसके सर पर हाथ फेरने लगी।

'मुझे छोड़ दो, छोड़ दो! आप लोग नहीं जानते। देखिए आसमान से आग बरस रही है। चारों ओर गोले उठ रहे हैं। मेरा घर जल रहा है। मेरे पतिदेव भस्म हो चुके। मेरे बच्चे बिलख रहे हैं— छोटे नन्हे प्यारे-से बच्चे—मेरे हृदय के टुकड़े—अरे, उस काले धुएँ को देखो। वे सब उस घुमड़ते धुएँ में ऊपर आसमान में चले गए। और मैं यहाँ अकेली रह गई— बिल्कुल अकेली—अकेली!' यूरीको का स्वर ऊँचा उठने लगा और शरीर पतझड़ की पीली मुर्झाई हुई उस पत्ती की भाँति काँपने लगा जो पवन के दो-चार झोंके लगने के बाद जीर्ण होकर जीवन-रस देनेवाली डाली से विलग हो जाएगी।

डॉक्टर ने कहा, 'ठहरो, ठहरो। सेत्सूको! तुम यूरीको को रोको।'

पर वह क्यों रुकनेवाली थी! वह भर्राई आवाज में फिर चिल्लाने लगी—'क्या इस संसार में अब ऊपर से अंगारे और बम ही बरसेंगे— झुलसानेवाले, जलानेवाले अंगारे और शोर मचानेवाले, भीषण सर्वनाशक बम! मुझे तो सूर्य और चन्द्र से भी चिढ़ हो गई है। आग का गर्म धधकता, पिघलता सूर्य और रक्त-रंजित काले धब्बेवाला चाँद! फिर विध्वंस और जीवन का अन्त करनेवाले बम! छोटे बम, अणु-बम, हत्यारे बम! मैं इस संसार में नहीं रहना चाहती। इसमें चारों ओर से मैं घिरी हूँ। मैं बन्दी

हूँ। देखो वह आकाश भी मुझे घेरे है, मेरे घर के द्वार बन्द किए है। मैं उसके पार जाना चाहती हूँ। अपने पति से मिलने, अपने बच्चों से मिलने, अपने भगवान् बुद्ध से मिलने। मैं वहाँ अवश्य जाऊँगी—अवश्य-अवश्य...' कहते-कहते यूरीको आकाश की ओर अपनी दोनों छोटी हथेलियाँ हवा मे ऐसे चलाने लगी जैसे किसी द्वार के पट खटखटा रही हो। उसका सर हिलने लगा। लट बिखर गईं, होंठ सूख गए, साँस तेजी से चलने लगी। सारे शरीर मे कम्पन आरम्भ हो गया। उसके नेत्रों के पलक मुंद गए। आनन पर विषाद की छाया गहरी हो गई। वह निस्पन्द-सी शिथिल हो पलग पर अचेत गिर गई।

डॉक्टर तोशियो तनाका उसकी देख-रेख करते हुए कहने लगा, 'यही इस रोगी की बीमारी है। मेरी समझ में नहीं आता इसका क्या उपचार करूँ! मालूम नहीं हिरोशिमा पर अणु-बम गिरने के बाद कितने ऐसे और रोगी हो गए होंगे। मेरे मित्र! यह भी हमारे देश में अणु-बम की देन है।'

मैं निस्तब्ध, अवाक् यह सब देखता रहा। मेरे पास सूखी सहानुभूति देने के अतिरिक्त और कुछ भी नही था।

मेरे हृदय को यह भावना द्रवित करने लगी और अब स्थिर-सी हो गई है कि हिरोशिमा पर अणु-बम का विस्फोट कर मनुष्य ने मनुष्यता की ओर से पट बन्द कर लिए। उसके फलस्वरूप यूरीको के आनन्द और भाग्य के पट सदैव को बन्द हो गए।

१६

बहुत कहने-सुनने के बाद कैप्टेन नन्दलाल मेरे साथ नारा नगर चलने को तैयार हुआ। जब मैं उससे चलने का प्रस्ताव करता वह यह कहकर टाल देता—अभी तो यहाँ कुछ दिनों और रहना है। ऐसी जल्दी भी क्या है?

'तुम भी कैसी बातें करते हो? एक सप्ताह इस देश से चलने को रह गया है। यह पुण्य-स्थान मैं देखकर ही रहूँगा।'

'तो आप अकेले देख आइए मेजर !'

'तुम बेहद सुस्त हो गए हो नन्दलाल ! भला मैं तुम्हारे बगैर कहीं भी जा सकता हूँ ! चलो सुस्ती छोडो और नारा में बुद्ध भगवान् के दर्शन किए जाएँ।' मैंने उसको झडपते हुए कहा।

'अच्छा, जैसी आपकी मर्जी।' कहकर वह तैयार हो गया।

हम दोनों ट्रेन से नारा के लिए रवाना हो गए। कुछ हल्की सर्दी थी, इसलिए खिड़की के शीशे चढा लिए। मैं एक खिड़की के सहारे बैठ कभी बाहर का चलचित्र का-सा चलता दृश्य देखने लगता और कभी पास बैठे हुए अपने मित्र से बातचीत करने लगता। इस समय उसकी आँखो के चारो ओर के घेरे अधिक काले मालूम हो रहे थे। उसका मुख पीला-सा, कुछ दुबला-सा लग रहा था और वह स्वयं कुछ खोया-सा, कुछ भूला-सा था। बाएँ हाथ की उँगलियों से वह बहुत देर तक अपनी कमीज के बटन घुमाता रहा और दाहिने हाथ की उँगलियों मे सिगरेट थामे वह गाडी की छत पर एकटक देखता रहा। जब सिगरेट का छोटा जला टुकडा उसकी उँगलियाँ चहकाने लगा तब उसका ध्यान भंग हुआ और तब उसने खिड़की के बाहर वह टुकडा फेंका।

मैंने उससे पूछा, 'नन्दलाल ! अब न तुम हँसते हो और न मज़ाक करते हो। क्या बात है ? क्या तबीयत खराब रहती है ?'

'मेजर ! हिरोशिमा देखने के बाद ऐसी तबीयत बिगड़ी है कि ठीक ही नही होने को आती।'

'हिरोशिमा की वजह से तबीयत बिगड़ी है या सेत्सूको के कारण।' मैंने चुटकी ली।

वह सूखी-सी हँसी हँसकर बोला, 'आप मालूम नही सब भेद कहाँ से जान लेते हैं ? सेत्सूको सच मे देवी है।'

'तुम्हारा भी क्या ठिकाना ! कभी कयोतो नगर की गेशा-गर्ल तुम्हारी प्रेमिका, तो कभी हिरोशिमा की नर्स तुम्हारी देवी। शायद चलती-फिरती देवियों को छोड़कर बुद्ध भगवान् के दर्शन करने में इसीलिए तुम इतनी

आनाकानी कर रहे थे। वाह रे नन्दलाल ! जैसा नाम वैसे गुण।'

'नहीं मेजर ! आपसे कभी झूठ नहीं बोलता। सेत्सूको इस पृथ्वी की नहीं, स्वर्ग की देवी है।' नन्दलाल ने कहा और उसके नेत्र चमकने लगे।

'अगर सच बोलते हो तो बताओ उस दिन तुमने मिया-जिमा द्वीप में शिण्टो मठ के आगे क्या निश्चय किया था ?' मैंने दृढ़ता से प्रश्न किया।

वह कुछ सिटपिटा गया। मेरे पास खिसककर वह धीमी आवाज़ में कहने लगा, 'चलो आज आपको सब बातें बता ही दूँ। उस सुबह ओकादा की मोटर-बोट आने के बाद हिरोशिमा में जब मैं और सेत्सूको साथ-साथ साम्पान की सैर को गए तो मौसम मद-भरा था। हल्की सर्दी, दिल को गुदगुदानेवाली समीर और शान्त सागर। मैं पतवार चला रहा था और वह ऊन के मोजे बुन रही थी। मैंने गौर से देखा। उसकी उँगलियाँ कितनी पतली और सुन्दर थीं। हवा के झोंके से मेरी कमीज के बटन खुल गए। मेरे दोनों हाथों में पतवारें थीं। मैंने कहा—सेत्सूको, मेरे हृदय में यह समीर बरछी-सी लग रही है। ये बटन लगा दो। वह बुनाई छोड मेरे पास आ गई। उसने अपनी नरम उँगलियों से मेरी कमीज के बटन लगाना शुरू किया और कहा—मैं उपचारिका सबकी सेवा करती हूँ। कितनी मीठी उसकी आवाज थी। मेरे हृदय में एक तूफ़ान उठने लगा। उसका वक्ष मेरे हृदय के पास। मुझसे नही रहा गया। मैंने पतवारें छोड़ दी और उसको अपने बाहु-पाश में ले लिया। फिर मैंने अपने होंठ उसके अधरों पर रख दिए और कहा—मैं तुमको सदा के लिए अपना बनाऊँगा।'

इसी समय ट्रेन में एक झटका-सा लगा। शायद वह किसी छोटे स्टेशन के पास से जा रही थी और एक पटरी से दूसरी पटरी पर तेज़ चल रही थी।

'वाह रे नन्दलाल ! पतवार छूटे हुए, नौका मझधार में और दो प्रेमी अटूट आलिंगन में। क्या नाटक और तुम उसके नायक और वह नायिका !' मैंने कहा।

'मज़ाक न करो मेजर ! उस समय से मेरे जीवन की धारा की दिशा

वदल गई—मेरे ध्येय, मेरे उद्देश्य वदल गए।' नन्दलाल बोला।

'ऐसा होता भी क्यों न! जब पतझर में वसन्त आ जाए, जब नन्दलाल को नई-नवेली मिल जाए, तब तो नयनों के आगे नया जीवन बरबस झाँकियाँ लेगा ही।'

''आप नहीं समझ सकते। आपको इसका क्या अनुभव? हाँ, तो मैंने पतवार छोड़ दी और सेत्सूको को दे दी। मैंने अपने बैग में से मदिरा की बोतल निकाल प्याले में उँडेली। उससे गाना सुनाने की प्रार्थना की। प्याले से कुछ घूँट पीकर ऐसा लगने लगा जैसे रक्त में वेग आ गया, जीवन में ज्योति जगने लगी और मैं संगीत के प्रदेश में पहुँच गया। छलकते प्याले को मैंने गौर से देखा। ओहो! उसमें सेत्सूको के सुन्दर आनन की छाया ठीक मेरी सबसे पहली प्रेमिका की-सी—दूर काठियावाड की मेरी मेघा-जैसी। क्या यह सेत्सूको के रूप में मेघा थी? मालूम नहीं मेरे हृदय में कितने दबे उद्गार उभरने लगे। कितने पुराने दृश्य आँखों के आगे नाच गए। मुझसे नहीं रहा गया। मैंने उससे कहा—मैं तुमसे ब्याह करूँगा। उसने उत्तर दिया—अभी नहीं। और मैंने एक लम्बा घूँट लेकर प्याले को रिक्त कर दिया।' नन्दलाल यह कहकर जल्दी-जल्दी साँस लेने लगा।

मैंने खिड़की के बाहर देखा। दूर पर एक जापानी स्त्री खेत में काम कर रही थी। हो सकता था कि नन्दलाल को वह स्त्री भी उसकी मेघा की याद दिलाती हो—मेहनत-मजदूरी करनेवाली उसकी पहली परिश्रमी प्रेमिका। क्या मालूम, जब प्रेमी का पुराना प्रेम जागता है तो विश्व-प्रेम का विस्तृत प्रांगण दिखने लगता है और अनेक रूपों में अलबेली प्रेयसी उसे झाँक-झाँक-कर देखती-सी नजर आती है। शायद नन्दलाल की भी यही दशा हो गई होगी।

मैंने उसे छेड़ते हुए फिर प्रश्न किया, 'हाँ भाई नन्दलाल! तो वह ब्याह करने को तैयार नहीं हुई। बड़ी बेवफ़ा थी। ऐसा अच्छा वर उसे कहाँ मिलता?'

'नहीं मेजर!' उसने कहा, 'मैं तब तक विवाह नहीं करूँगी जब तक

हिरोशिमा नगर पूरा नही बन जाएगा। यह मेरा प्रण है।'

'और तुमने क्या निश्चय किया ?'

'यही कि मैं भी उस खण्डित नगर के नव-निर्माण मे हाथ बँटाऊँगा। उसे जल्दी बनाने मे सहायता करूँगा। इस निश्चय की मैंने शिण्टो मठ में उस दिन शपथ ली। और तब सेत्सूको मेरी होगी।'

इसी समय रेलगाड़ी के इञ्जिन ने एक लम्बी सीटी दी। वह सिगनल के पास से जा रही थी और रेल की पटरियों के दोनो ओर कुछ लोग काम कर रहे थे। ट्रेन की गति भी मन्द पड गई और वह स्टेशन पर आकर रुक गई। यात्री गाड़ी में चढने-उतरने लगे।

●

हम दोनों जब नारा नगर के प्रमुख तोदइजी मन्दिर में पहुँचे, बूँदा-बाँदी हो रही थी। इस मन्दिर मे दायबुत्सू (गौतम बुद्ध) की इतनी विशाल मूर्ति प्रतिष्ठित थी जितनी मैंने अभी तक कही नही देखी। यहाँ हर ओर बौद्ध-धर्म की गरिमा और विशालता का भास होने लगा। मन्दिर मे घुसते ही उसके चौक मे पत्थर की बनी अठपहली एक बड़ी लालटेन दिखाई पड़ी। ऐसे आकार की छोटी लालटेन मैंने अधिकतर और मन्दिरों मे देखी थी, पर शायद इतनी विशाल मूर्ति के पुण्य-स्थान मे ज्योति जगाने की व्यवस्था के लिए इतने बृहद् दीप की आवश्यकता थी। कुछ भी हो, इस समय तो दिवाकर की ज्योति ही दायबुत्सू की प्रतिमा को आलोकित कर रही थी।

'कैसे महान् पुरुष के त्याग और अहिंसा का यह विशाल ठोस रूप ! मैं इस प्रतिमा से प्रभावित होने लगा हूँ, नन्दलाल !' मैंने कहा।

'आप इसकी वाह्य विशालता से प्रभावित हो रहे हैं और मेरे मन में इस योगी के कोमल अन्तस्तल की मधुरता झंकृत होने लगी है।' नन्दलाल बोला।

'तुम संगीत-प्रेमी झंकार सुन सकते हो और मैं केवल पत्थर का विस्तार ही देख रहा हूँ।'

'नहीं मेजर ! मुझे ऐसा लगने लगा है कि अहिंसा और प्रेम ही विश्व

में शान्ति स्थापित कर सकते है।'

'और युद्ध और आधुनिक अस्त्र शस्त्र ?'

'वे बेकार है। मैंने इनका करतब हिरोशिमा मे देख लिया। वहाँ मरुस्थल-जैसा सूनापन है और यहाँ इस नगर में स्वर्ग-जैसी सुन्दरता; और इस मन्दिर में आत्मा तक को सुख देनेवाली शान्ति।'

'ओहो! *तुम तो बौद्ध धर्म के भिक्षुक-जैसी बातें करने लगे। तुम तो* ऐसे हो कि जहाँ जो देखा उसी से प्रभावित हो गए। वाह रे नन्दलाल!' मैंने उसे छेड़ते हुए कहा।

इतने मे इस मन्दिर का सरक्षक भी वहाँ आ गया। उसने हम लोगो को इसका इतिहास बताना आरम्भ कर दिया। उसने कहा कि यह सम्राट् शोमू ने बनवाया था, जो जापान का पैंतालीसवाँ सम्राट् था। सन् ७४५ से लेकर ७५२ तक इसका निर्माण होता रहा। सात साल के मनुष्य के अथक परिश्रम को हम प्रत्यक्ष देख रहे थे और प्रभावित हो रहे थे।

दायबुत्सू की ऊँची प्रतिमा को इंगित करके वह बोला, 'इस मूर्ति की ऊँचाई ५३ फुट ६ इंच है और इसकी तौल पाँच सौ टन। ऐसी प्रतिमा आपने कही भी नहीं देखी होगी।' वह हम लोगो को ऐसे बता रहा था जैसे गणित के ये अंक उसकी जिह्वा पर रखे थे।

'हाँ, मैंने ऐसी प्रतिमा अभी तक नही देखी।' मैं कहने लगा।

'आप देखिए और समझिए। इस प्रतिमा को बनाने में ४३७ टन कसकुट, १६५ पाउंड पारा, २८८ पाउंड सोना और ७ टन वनस्पति का मोम और मालूम नही कितना कोयला इत्यादि लगा होगा। यह जापान की कला का अपूर्व नमूना है।' वह फिर हमको गणित के अंकों मे उलझाने लगा।

'मैं इस मन्दिर मे सोने और पारे का मूल्यांकन करने थोड़े ही आया हूँ जो यह पुजारी हमको इन धातुओं के बोझ से लाद रहा है। चलो, इससे दूर होकर अकेले मे दर्शन किए जाएँ।' नन्दलाल ने मेरे कान में धीमे से कहा।

'आपको धन्यवाद ! अब हम निश्चिन्त होकर इस मन्दिर के दर्शन कर लेंगे।' मैंने उस संरक्षक से कहा। वह हमारी बात समझ गया और हमको अकेला छोड़कर चला गया।

हम लोगों ने देखा दायबुत्सू की मूर्ति अभय मुद्रा मे विराजमान थी। उसके एक ओर चिन्तामणि अवलोकितेश्वर की मूर्ति और दूसरी ओर रास-गर्भ की प्रतिमा। नन्दलाल और मैं बहुत देर तक दायबुत्सू के गम्भीर आनन की छाया मे खड़े रहे। मेरे मन मे भाव उठने लगे कि कैसे गौतम बुद्ध ने भारत से सहस्रों मील दूर देशवासियों को प्रेम के एक सूत्र मे बाँध दिया। उनकी वाणी इतने सागर पारकर आज भी यहाँ प्रतिध्वनित हो रही है। योग की पूर्ण साधना और उपनिषद् का गहन ज्ञान यहाँ प्रतिबिम्बित था।

'देखो नन्दलाल ! हम सब इस प्रतिमा की अपार प्रतिभा के अग हुए जा रहे हैं। हम भी तो भारतवासी है।'

नन्दलाल ने कुछ उत्तर न दिया। वह नेत्र बन्द किए मन्त्र-मुग्ध-सा खड़ा था। उसने झुककर साष्टाग प्रणाम किया और अचानक बोलना आरंभ कर दिया, 'मैंने प्रण कर लिया, प्रण कर लिया, अब यही आपकी सेवा करूँगा। अपने देश वापस नही जाऊँगा।'

उसने दायबुत्सू की प्रतिमा को फिर नमस्कार किया।

'क्या कहते हो नन्दलाल ! सत्य के पैगम्बर के आगे ऐसी बात नहीं करनी चाहिए जिसे पूरा न कर सको।' मैंने समझाया।

'मेजर ! मैं यह जानता हूँ। मेरा यह प्रण पूरा होकर रहेगा।'

'यह कैसा प्रण ?' मैंने प्रश्न किया।

'यह मेरा जीवनपर्यन्त का प्रण। अडिग, अमिट प्रण। अब मैं इस देश का वासी हो गया हूँ और दायबुत्सू मेरे आराध्य देव हैं।' नन्दलाल ने दृढ़ता से कहा।

मुझे लगा जन्म-जन्मान्तरों के बाद फिर कोई भिक्षु तथागत के समीप आत्मसमर्पण कर रहा हो।

इस समय वर्षा कुछ अधिक होने लगी थी। सूर्य पर बादल

थे। सहसा आकाश के घोर गर्जन ने मन्दिर को हिला-सा डाला।

'फिर तुम जल्दबाजी करने लगे। यह कैसे हो सकता है ? एक सप्ताह मे तो हमारी सेना इस देश से चल देगी।' मैंने कहा।

'भारत की सेना को जाने दो। मैं सेना से अपना पद त्याग दूँगा, यह मैंने निश्चय कर लिया है।' नन्दलाल ने मेरी ओर देखा। उसके नेत्रों में एक अपूर्व ज्योति थी।

'यह क्या कह रहे हो नन्दलाल, मेरे नन्दलाल!' मैं व्याकुल होने लगा।

'घबराओ नहीं मेजर! आप मुझे अभी तक समझाते रहे है, ठीक मार्ग दिखाते रहे हैं। पर अब तो यह मेरा निश्चय अटल है। मैं अब किसी देश की सेना का सैनिक नहीं हूँ। अब तो मैं विश्व नागरिक हूँ। पूर्ण विश्व मेरा प्रदेश है।'

नन्दलाल ने मेरा हाथ अपने हाथ मे ले लिया और वह मुझसे सटकर खड़ा हो गया। मैं स्तम्भित था। आश्चर्य में अवाक् था। फिर भी मैंने प्रश्न किया :

'नन्दलाल, तुम्हारे आदर्श उच्च है, पर क्या तुम उनको निभा सकोगे?'

'क्यों नही, क्यों नही! इतने दिनो तक भारत की सेना मे रहकर क्या यह भी नही सीख सका हूँ ? अब मैं हिरोशिमा में रहूँगा। वहाँ के नव-निर्माण मे हाथ बटाऊँगा। उस खंडित नगर को बनाऊँगा। जब यह बन चुकेगा तब सेत्सूको मेरी होगी। उसने मुझसे वादा किया है।'

इसी क्षण फिर बादल गरजे, बड़ी-बड़ी बूँदें टप-टप गिरने लगी। तड़ित् की तीव्र रेखा रह-रहकर क्षितिज के वक्ष को विदीर्ण करने लगी। मेरी दृष्टि उधर ही उलझ गई, क्योंकि मेरा हृदय भी तो विदीर्ण हो रहा था। जब तड़ित् की दोनों समानान्तर रजत-सी रेखाओं को मैं देखता तो विचार करने लगता कि नन्दलाल और सेत्सूको सान का जीवन अभी कई वर्षों इन्ही रेखाओं के समान चलता रहेगा। निकट रहते हुए भी कभी एकाकार होने की आशा नही।

पैरों को धूप मे फैला दिया। दूर पर चैरी का वृक्ष गुलाबी फूलो से लदा था। अभी तो वहाँ से फूल तोड़ने थे, तभी तो मेरा गुलदस्ता सज सकेगा। चैरी—वही गुलाबी, लाल चैरी का पेड, जिसका ठूंठ मैंने यूरीको के घर के खण्डहरों के पास देखा था। उसी को देखने को वह व्याकुल थी। हिरोशिमा का खण्डित प्रस्तरों का ढेर मेरी आँखो के आगे फैलने लगा। मैंने अपने नेत्र मूँद लिए। अब वह दृश्य मेरे लिए असह्य था। फिर भी आँखों के आगे चमकती चिनगारियाँ-सी झडने लगी—फुलझडी-जैसी लाल, पीली, गुलाबी चिनगारियाँ। अरे ! यह क्या ? ये चिनगारियाँ तो बड़े-बड़े आग के शोले और चैरी का वृक्ष एक आग का फव्वारा या रोशनी का खुलता हुआ छाता बन गया। वहाँ तो अग्नि का अवतरण होने लगा। ऊपर दिवाकर का चकाचौंध। ऐसा लगता जैसे किसी हिम-शिखर पर परमाणु-बम का विस्फोट हुआ हो। क्या वह हिमाच्छादित उत्तरी ध्रुव-सागर तो नही था ? बर्फ गलने लगी और जल बढने लगा। बड़े-बड़े हिम के पर्वत हिलने लगे, चलने लगे, बहने लगे। यदि यह गलन-प्रक्रिया चलती रही तो क्या होगा ? यदि ध्रुव के हिम-संग्रयन सरकने लगे तो क्या होगा ? मैंने देखा, सागर की घहराती, उत्ताल लहरें उफन रही हैं और पृथ्वी के अधिकाश भाग को जल-मग्न किए डाल रही हैं। पहले वे तट पर टकराती है और फिर घरधराकर तट को गर्क किए देती हैं। यह कैसा फेनिल सागर का उत्कर्ष और तट का पूर्ण विलोप ! ऐसा लगने लगा कि उष्ण कटिबन्ध के देश ठण्डे हुए जा रहे हैं। मैं भी इसी अवस्था में था। कटि के ऊपर का भाग सूर्य के ताप से कुछ गर्म और मेरी टाँगें जल मे भीगी कुछ ठण्डी। मेरे कन्धे पर किसी ने जोर से दोनों भारी हाथों का बोझा रख दिया।

मैंने आँखें खोली तो देखा नन्दलाल मेरे कन्धों को झकझोर रहा है और कह रहा है, 'क्या यहाँ पड़े-पड़े ऊँघ रहे हो ? चलते-चलते भी दिन मे स्वप्न देखने की आदत नही छोडोगे मेजर !'

'नही, नही। मैं तो तुम सबके लिए पुष्पोपहार एकत्रित कर रहा था। ये देखो।' मैंने अपनी आँखें मलते हुए कहा।

हम दोनों हाथ में हाथ डाले कुछ देर साथ टहलते रहे। कुछ पुरानी बातों की याद कर अतीत स्मृतियों को दुहराने का प्रयत्न करते रहे। स्मृतियों की चलती शृंखला में यही समझ में नहीं आता कि कहाँ रुका जाए।

नन्दलाल की सुधि उसकी मातृभूमि काठियावाड में उलझकर रह गई जब उसने मुझसे भर्राई-सी आवाज में कहा, 'मेजर! मेरे सम्बन्धियों से कह देना कि अब अपने नन्दू को भूल जाएँ। वह उनका न रहकर सारे संसार का हो चुका है। मेरे गाँव के तट को अब भी सागर धोता होगा और तट पर लगा वह नारियल का वृक्ष—वह शायद सूख चुका होगा—जरूर सूख चुका होगा! इतने वर्षों वह कैसे हरा रह सकता है, पर उसकी याद मेरे मन में आज भी हरी है।' नन्दलाल की आँखें डबडबा आईं और उसके हाथ की उँगलियाँ काँपने लगीं।

'मेरे नन्दलाल! अब तुम यहाँ रहोगे और मैं मालूम नहीं कहाँ चला जाऊँ! क्या दो मित्र ऐसे ही बिछुड़ने को थे—सच्चे-गहरे मित्र!' मैं आगे और कुछ नहीं कह सका। हृदय से उठता एक गोला-सा मेरे गले में अटक गया और नेत्रों से निर्झरिणी बह चली।

नन्दलाल ने अपना रूमाल मेरी आँखों पर रख दिया। फिर हम ढीले-ढीले पग बढ़ाते कूरे के डाक्स की ओर चलने लगे।

दूर पर हमारा जहाज मोटर-वेसेल डेवनशायर (Motor Vessel Davonshire) डॉक्स में लगा खड़ा था। हमारी सेना के सैनिक खट-खट उस पर चुस्ती से चढ़ रहे थे। कुछ अपने मित्रों से विदा ले रहे थे। मैं भी उसी स्थिति में था। मेरे इष्ट-मित्र भी वहाँ आ गए थे। मैंने कुछ फूल डॉक्टर तोमियो तनाका को भेंट किए, कुछ ओकादा के मजबूत हाथों में थमा दिए। एक गुलदस्ते में से आधा सेत्सूको सान को और आधा नन्दलाल को देते हुए मैंने कहा, 'घर जाकर इन दोनों को एक ही गुलदान में सजाना।' कमलिनी की एक कलिका का उपहार मैंने यूरीको के लिए यह कहकर सेत्सूको की कोमल उँगलियों में रख दिया, 'ये यूरीको के लिए है।

जब तक यह कमलिनी खिलेगी तब तक शायद यूरीको पूर्ण स्वस्थ हो जाए। डॉक्टर तोशियो तनाका की देख-रेख में वह अवश्य स्वस्थ हो जाएगी।'

'मैं अपनी जिम्मेदारी निभाऊँगा।' कहते-कहते डॉक्टर तोशियो तनाका हँसने लगा और उसके सोने से मढ़े दो दाँत चमकने लगे।

मैंने अपने मित्रों से लिपट-लिपटकर, हाथ मिला-मिलाकर विदा ली। सबने एक स्वर मे हाथ हिला-हिलाकर कहा, 'सायोनारा! सायोनारा!' अथवा विदा-विदा। मैं डेवनशायर पर चढ़कर डेक पर खड़ा हो गया। चारों ओर चलने की तैयारियाँ होने लगी। इस समय समीर मे भी वेग आ गया था। वह सर-सर करके उग्र होने लगी। मैंने देखा दूर पर नन्दलाल के बाल सर पर बिखरकर हवा में उड रहे थे। उसके एक हाथ मे लटकती वर्दी का कोट भी हिलने लगा था। अचानक वह जहाज की ओर को भागा और उसने वर्दी का कोट और फौजी टोपी समुद्र मे फेंक दिए। वह फिर वापस सेत्सूको के पास जा खडा हुआ। सेत्सूको की इठलाती-लहराती किमोनो नन्दलाल को स्पर्श करने लगी। सागर की एक लहर उस फौजी कोट को उधर ले आई जहाँ मैं खडा था। वह कुछ क्षण पानी में उतराता रहा और फिर लहरों के जाल में मालूम नहीं कहाँ जल-मग्न हो गया।

उसी समय डेवनशायर का तीव्र हूटर (भोंपू) बजा और हमारा जल-पोत चलने लगा। मैं डैक की रेलिंग का सहारा लेकर चिल्लाने लगा—'सायोनारा-सायोनारा! (विदा-विदा)। डॉक्टर तोशियो तनाका सायो-नारा—ओकादा सायोनारा—सेत्सूको सायोनारा—नन्दलाल सायोनारा।' मेरे शब्द सम्भवतः उस धड़धड़ाहट के आगे न जा सके। इसीलिए मैं धीमे स्वर में जपने लगा—"सायोनारा प्रोफेसर हामागूची—सायोनारा यूरीको—सायोनारा—सायोनारा—प्यारे जापान के रँगीले द्वीप सायोनारा...'